महाकवि भवभूति रचित

मालतीमाधवम्

महाकवि भवभूति रचित

मालतीमाधवम्

[समूल हिन्दी अनुवाद]

अनुवादक एवं सम्पादक
रामप्रताप त्रिपाठी, शास्त्री

लोकभारती प्रकाशन
१५–ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद–१

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग
इलाहाबाद-१ द्वारा प्रकाशित

●

प्रथम संस्करण
१९७३

●

सम्मेलन मुद्रणालय
प्रयाग द्वारा मुद्रित

मूल्य : ११ ००

मालती माधवम्

मालती माधव महाकवि भवभूति की द्वितीय नाट्य कृति है। इसका प्रधान रस शृंगार है। रसराज शृंगार का इस नाटक में पूर्ण परिपाक हुआ है। मालती और माधव की यह प्रणय कथा दस अंकों में वर्णित है। कथा का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है अपितु कल्पना-प्रसूत है। कथावस्तु का संक्षेप अकदाःइस प्रकार है—

प्रथम अंक—भूरिवसु और देवरात दो ब्राह्मण कुमार थे। विद्यार्थी जीवन में उनमें बड़ी घनिष्ठता थी। दोनों एक ही गुरु के शिष्य तथा अनन्य मित्र थे। दोनों ने यौवनारम्भ में ही यह निश्चय किया था कि यदि एक को पुत्र तथा दूसरे को कन्या होगी तो एक का विवाह दूसरे से होगा। उनकी यह बात बौद्ध सन्यासिनी कामन्दकी तथा उसकी शिष्या सौदामिनी को भी मालूम थी। दोनों ब्राह्मण कुमार जब बड़े हुए तो दोनों को मंत्रिपद प्राप्त हुआ। भूरिवसु पद्मावती के राजा का मंत्री बना और देवरात को विदर्भ नरेश का मंत्रिपद मिला। संयोगात् भूरिवसु को कन्या उत्पन्न हुई, जिसका नाम मालती रखा गया और देवरात को पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम माधव था।

प्रस्तावना के अनन्तर बौद्ध संन्यासिनी तथा योगिनी कामन्दकी तथा उसकी एक शिष्या अवलोकिता रंग मंच पर आती है। कामन्दकी अवलोकिता से पूछती है कि क्या उसे मालती माधव का परिणय इष्ट है। अवलोकिता यह सुन कर आश्चर्य में पड़ जाती है कि संसार से विरक्त संन्यासिनी भला ऐसे संसारी कामों में क्यों इतनी रुचि ले रही है। भूरिवसु ने उसे ऐसे काम में क्यों नियुक्त कर रखा है। कामन्दकी कहती है कि भूरिवसु ने स्नेह के कारण ही उसे इस काम में नियुक्त किया है, उसका अब कर्तव्य है कि अपना प्राण देकर भी उसकी अभिलाषा पूरी करे। वह यह भी बताती है कि भूरिवसु तथा देवरात ने इस प्रकार का विवाह करने की प्रतिज्ञा मेरे सामने ही की है। अवलोकिता को शंका होती है कि जब दोनों इसी प्रकार की प्रतिज्ञा कर चुके हैं तो प्रत्यक्ष रूप में विवाह क्यों नहीं कर देते।

कामन्दकी कहती है कि भूरिवसु के राजा का सहचर नन्दन स्वयं राजा के माध्यम से मालती के प्रणय का इच्छुक है। अतः प्रत्यक्ष में तो यह विवाह हो नहीं सकता। अतः परोक्ष उपाय का ही सहारा लेना होगा। उधर देवरात ने अपने

पुत्र माधव को न्याय शास्त्र का सम्यक् अध्ययन करने के लिए पद्मावती भेजा है। कामन्दकी यह भी कहती है कि मालती और माधव के पारस्परिक प्रेम की चर्चा जनता में फैल रही है, फिर भी इससे पद्मावतीनरेश और उसके सहचर नन्दन को तो भुलावे में रखना ही होगा।

अवलोकिता कहती है—वह कामन्दकी की आज्ञा से माधव का आवागमन मालती के घर कराती है। मालती माधव के प्रति अत्यधिक उत्कण्ठित है। उसकी विरह वेदना को दूर करने के लिए माधव की मूर्ति दे दी गयी है। अवलोकिता कामन्दकी से कहती है कि उसने मदन महोत्सव देखने के लिए माधव को मदन उद्यान में भेजा है, जहाँ मालती भी जायगी और वहीं दोनों का साक्षात्कार हो जायगा। तदनन्तर हाथ में चित्रों का एलबम लिए हुए कलहंस दिखाई पड़ता है, जो माधव की खोज में है। माधव का मित्र मकरन्द भी मदनोद्यान में उसे गया हुआ देख कर आता है। माधव वहाँ दिखाई पड़ता है, जो चिन्तित तथा उदास है। उसे ऐसा देख कर मकरन्द जानना चाहता है कि कहीं वह भी तो नहीं कामदेव के बाणों का शिकार बन गया। माधव पहले तो छिपाना चाहता है पर आग्रह करने पर बताता है कि उसने एक परम सुन्दरी कन्या देखी है जिसमें उसका मन आसक्त हो गया है। कारण कुछ ज्ञात नहीं होता। मकरन्द कहता है कि प्रेम बाहरी कारणों से नहीं होता, उसका कोई भीतरी कारण ही होता है। माधव बताता है कि सखियों की प्रेरणा से उस सुन्दरी ने मेरी ओर देखा था, शृंगार का भाव प्रकट किया था, जिससे ज्ञात होता था कि वह भी कामवश हुई थी। एक वारवनिता ने आकर बताया था कि वह अमात्य भूरिवसु की कन्या है। उसने मेरी माला ले ली है।

ठीक इसी समय कलहंस भी वहीं पहुँच जाता है और माधव का चित्र उसे देता है। वह यह भी बताता है कि उस चित्र को मालती ने अपनी उत्कण्ठा दूर करने के लिए बनाया है। माधव उसी चित्र फलक पर मालती का चित्र बना देता है। इसी समय मन्दारिका आती है और चित्र फलक ले लेती है। उसे पता लगता है कि उस चित्रफलक पर मालती के चित्र को माधव ने बनाया है। वह बताती है कि मालती ने माधव को अपने प्रासाद के निकट से आते-जाते देखा है। मन्दारिका और कलहंस चले जाते हैं। माधव और मकरन्द भी विरह-व्यथा की चर्चा करते हुए चले जाते हैं।

दूसरे अंक के प्रवेशक से ज्ञात होता है कि बौद्ध-सन्यासिनी कामन्दकी अपनी शिष्या अवलोकिता के साथ मालती के समीप जाती है। वहीं पर लवंगिका भी है। लवंगिका कहती है कि किस प्रकार मन्दारिका के घर पर वह चित्र छोड़ आयी थी,

जो मदनिका के प्रेमी कलहंस के हाथ लग गया है। वह यह भी बताती है कि माधव भी उसके वियोग मे उन्मत्त है। मालती माता-पिता की परवशता बता कर अपनी असमर्थता पर दुःखी होती है। उसी समय कामन्दकी और अवलोकिता भी वहीं आ जाती है। कुशल-क्षेम के अनन्तर कामन्दकी की भारी आवाज को सुनकर लवंगिका उसकी चिन्ता का कारण पूछती है। कामन्दकी बताती है कि मालती का परिणय अयोग्य वर के साथ होने जा रहा है, जिससे वह दुःखी है। लवंगिका कहती है कि राजा के वचन का आदर करते हुए भूरिवसु अपनी कन्या का विवाह नन्दन से करना चाहते हैं, जिसकी सभी लोग भर्त्सना कर रहे है। कामन्दकी कहती है कि वर में उत्तमोत्तम गुणों का विचार न कर के अमात्य भूरिवसु ने यह सम्बन्ध कैसे स्वीकार कर लिया। सच है, कूटनीतिज्ञों को अपनी सन्तानो के प्रति स्नेह होता ही क्यो है। अथवा अपनी कन्या का दान कर के वे नन्दन को मित्र बनाना चाहते हैं। लवंगिका भी कहती है कि उस कुरूप और घिनने में वृद्ध नन्दन को अपनी कन्या देने का निश्चय कर के अमात्य ने बड़ा अनुचित किया है। मालती अपने पिता के प्रति दुःखी होती है और उसका मनस्ताप बढ़ जाता है। लवंगिका इस भावी अनर्थ से मालती की रक्षा करने के लिए कामन्दकी से प्रार्थना करती है।

कामन्दकी कहती है कि इस विषय में मालती का भाग्य तथा उसके पिता भूरि-वसु ही कुछ कर सकते है। वह पुरूरवा और उर्वशी तथा दुष्यन्त और शकुन्तला का उदाहरण देते हुए कहती है इस प्रकार का आत्म-समर्पण साहसपूर्ण कार्य है। भूरिवसु नन्दन को अपनी कन्या दे कर सुखी हों। कामन्दकी यह सब सुना कर जाना चाहती है किन्तु मालती में माधव के प्रति अधिकाधिक उत्सुकता पैदा करने के लिए लवंगिका उससे माधव का जन्म वृत्तान्त पूछती है। कामन्दकी बताती है—माधव देवरात का पुत्र है। देवरात भूरिवसु का सहपाठी रहा है। देवरात का पुत्र माधव अपने बाल्यकाल के मित्र मकरन्द के साथ यहाँ नीतिशास्त्र का अध्ययन करने के लिए आया हुआ है। मालती अपने पिता के इस निर्णय पर दुःखी होती है, जो केवल राजा को सुप्रसन्न करने के लिए वयोवृद्ध नन्दन के हाथ उसे सौंपने का निश्चय कर चुके हैं। कामन्दकी उठ कर चली जाती है। उसे सन्तोष होता है कि उसने एक ही साथ कई काम पूरे कर लिए। यथा :— पिता भूरिवसु तथा भावी पति नन्दन के प्रति मालती की अश्रद्धा, माधव के प्रति अनुरक्ति, शकुन्तला, उर्वशी आदि की प्राचीन कथाओं द्वारा पिता की अनुमति के बिना भी कन्याओं द्वारा प्रियतमों को आत्मसमर्पण की भावना।

तीसरे अंक में प्रवेशक से ज्ञात होता है कि कामन्दकी ने अपनी शिष्या बुद्ध-रक्षिता को नन्दन की बहन मदयन्तिका के पास भेजा है। वह चाहती है कि माधव

के मित्र मकरन्द का विवाह मदयन्तिका के साथ हो जाय। बुद्धरक्षिता उसके समीप पहुँच कर मकरन्द के गुणों की प्रशंसा करती है, जिससे वह मकरन्द को देखने के लिए उत्कण्ठित होती है। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तिथि उस दिन थी, अत. मालती अपनी माता के साथ शिव जी का दर्शन करने जायगी अतः कामन्दकी माधव को वहाँ पर पहले से ही भेज देती है। मदयन्तिका भी बुद्धरक्षिता के साथ वहीं जानेवाली है। कामन्दकी अपनी नीति की सफलता पर प्रसन्न होती है। मालती और लवंगिका दिखाई पडती हैं। मालती अपने पिता के निश्चय से मन मे दुःखी है। लवंगिका पुष्पवाटिका का सुन्दर वर्णन कर कामोद्दीपन करती है। वहीं माधव दिखाई पडता है और सामने कामन्दकी भी प्रकट हो जाती है। माधव लवंगिका तथा मालती को साथ मे देखता है। मालती के सौन्दर्य को देख कर उसका मन अधीर होता है। मालती कुब्जक वन मे फूल चुनने लगती है और जब थक जाती है तो कामन्दकी और लवंगिका के साथ बैठ जाती है। कामन्दकी उसको बताती है कि माधव कितना अपूर्व सुन्दर है और मालती को देखने के बाद किस प्रकार विरह-वेदना से अस्वस्थ हो गया है। ऐसा भी हो सकता है कि वेदना की अधिकता के कारण वह मृत्यु को न वरण कर ले। लवंगिका मालती की विरह व्यथा का वर्णन करती है। उसके इस वर्णन को सुन कर माधव की उत्कण्ठा मे वृद्धि होती है। लवंगिका यह भी बताती है कि माधव की बनायी हुई पुष्पमाला को मालती ने अपने गले मे डाल रखा है, जो उसके स्तनो पर लटक रही है। ठीक इसी समय पर्दे के भीतर कोलाहल सुनाई पडता है। सूचना मिलती है कि एक बाघ पिंजडे से बाहर निकल कर लोगो को मार रहा है अत लोगो को चाहिए कि अपने-अपने प्राणो की रक्षा करें। भागती हुई बुद्धरक्षिता चिल्ला कर कहती है कि उसकी सखी मदयन्तिका पर बाघ ने आक्रमण कर दिया है, जो नन्दन की भगिनी है।

माधव बाघ का सामना करने के लिए उद्यत होता है। इसी बीच मकरन्द एक मृतक व्यक्ति के हथियार ले कर बाघ से भिडता है और उसे मार डालता है किन्तु उसे भी बाघ के आक्रमण से इतनी चोट लगती है कि मूर्च्छित हो कर गिर पडता है। सब लोग दुःखी होते हैं।

चौथे अंक के आरम्भ मे माधव और मकरन्द के मूर्च्छित होने की सूचना मिलती है तथा मालती और मदयन्तिका उन्हें सहारा दिए हुए हैं। उनकी परिचर्या से उन्हें होश होता है। बुद्धरक्षिता मकरन्द को दिखा कर मदयन्तिका से कहती है कि यह वही व्यक्ति है जिसकी वह प्रशंसा करती है। इसी समय नन्दन के समीप से आकर एक व्यक्ति बताता है कि राजा ने भूरिवसु की कन्या मालती के साथ

नन्दन का विवाह होना तय किया है, अत: मदयन्तिका मंगल मनाने हेतु अपने घर चले। मालती और माधवको इस संवादसे धक्का लगता है, वे दुःखी होते है। मदयन्तिका मकरन्द के पुनर्दर्शन की अभिलाषा व्यक्त कर बुद्धरक्षिता के साथ चली जाती है।

कामन्दकी माधव को समझाती है कि वस्तुत: अमात्य भूरिवसु ने मालती को नन्दन के लिए नहीं दिया है। यह दान तो राजा ने किया है, जब कि धर्मशास्त्र के अनुसार कन्यादान का अधिकारी कन्या का पिता होता है, राजा को यह अधिकार नही है।

महारानी की आज्ञा से मालती को साथ लेकर कामन्दकी जाती है। मालती को इतना कष्ट है कि वह अपने जन्म को व्यर्थ मानती है। माधव मालती की प्राप्ति के लिए दृढ प्रतिज्ञ होता है और नर-मास विक्रय का निश्चय करता है। वरदा और सिन्धु नदियो के संगमस्थल पर स्नान कर वे नगर मे प्रविष्ट होते हैं।

पाँचवे अंक के प्रवेश मे आकाश मार्ग से भयकर आकृति वाली कपालकुण्डला नामक योगिनी प्रवेश करती है, वह श्रीपर्वत से कराला देवी के दर्शनार्थ आयी है। वह खड्गधारी माधव को देखती है, जो अपने हाथो मे विक्रय के लिए नर मांस लिए हुए हैं। वह पहचान लेती है कि देवरात का पुत्र माधव यही है। माधव मालती की चिन्ता मे विह्वल है। मालती का अनोखा सौन्दर्य उसके मस्तिष्क और हृदय मे समाया हुआ है। वह पिशाचो का कलरव तथा श्मशान भूमि की भयंकरता देखता है और चिल्लाकर मृतो को नरमास लेने के लिए आवाहित करता है। किन्तु उसके पास कोई भी नही आता।

इसी समय कराला के मन्दिर से किसी स्त्री की करुण आवाज उसके कानो मे पडती है और वह उसी ओर दौड पडता है। वह यह देख कर आश्चर्यचकित और स्तब्ध रह जाता है कि वध्य चिह्न से लांछित मालती वहाँ खडी है तथा कपाल कुण्डला नामक योगिनी और अघोरघण्ट नामक तान्त्रिक वहाँ खड़े हो कर देवी की स्तुति कर रहे है।

कपालकुण्डला स्तुति के अनन्तर मालती से कहती है कि अपने जीवन के आखिरी समय मे वह अपने प्रियतम का स्मरण कर ले। मालती माधव का स्मरण करती हैं। इसी समय कपालकुण्डला मालती को मारने के लिए उद्यत होती है कि सहसा माधव पहुँच जाता है और कपालकुण्डला के हाथो मे उसकी रक्षा कर के मालती को अभयदान देता है। वह मालती को बताता है कि उसी को प्राप्त करने के लिए वह नरमास विक्रय का कार्य कर रहा है। कपालकुण्डला अघोर घण्ट से माधव का जब परिचय देती है तो अघोरघण्ट और माधव मे विवाद होने लगता है और दोनों द्वन्द्व युद्ध करने लगते हैं। ठीक इसी अवसर पर कामन्दकी की..

आज्ञा से भूरिवसु के अनुचर कराला देवी का मन्दिर चारों ओर से घेर लेते हैं। कामन्दकी ने उनसे बता दिया था कि अघोरघण्ट को छोड कर और कोई दूसरा ऐसा भयंकर कर्म नही कर सकता। माधव और अघोरघण्ट का द्वन्द्व युद्ध चलता रहता है।

छठे अक के आरम्भ मे ज्ञात होता है कि माधव के प्रहार से तांत्रिक अघोरघाट मारा जाता है, जिससे अत्यन्त क्रुद्ध होकर योगिनी कपालकुण्डला मालती तथा माधव से बदला चुकाने की प्रतिज्ञा करती है। मालती के विवाह की मागलिक क्रियाए सम्पन्न की जाती है। मालती को कुछ समय तक देव मन्दिर मे रहने का आदेश कामन्दकी देती है। कपालकुण्डला अपने गुरु के हत्यारे माधव का अनिष्ट करने के लिए उद्यत है। काम पीडा से व्यथित माधव मालती की चिन्ता मे है कि उसे देव मन्दिर मे आती हुई मालती दिखाई पडती है। मालती लवगिका और कामन्दकी के साथ हथिनी से उतर कर देव मन्दिर में आती है। राजा द्वारा भेजे गए आभूषण ले कर प्रतीहारिणी आती है और उनके द्वारा मालती को अलकृत करने के लिए कामन्दकी से कहती है।

प्रतीहारिणी चली जाती है और कामन्दकी भी लवगिका तथा मालती को देव मन्दिर के भीतर चलने की आज्ञा दे कर बाहर चली जाती है। मालती और लवगिका भीतर जाती हैं। नन्दन के साथ मेरा विवाह होने जा रहा है—यह सोच कर मालती अत्यन्त दु:खी है और प्राण त्यागने का निश्चय करती है। लवगिका समीप मे बैठे हुए माधव को सकेत से बुलाती है। मालती इतनी बेसुध है कि माधव को लवगिका समझ कर उसका आलिगन करती है। उसकी आँखो मे आँसू भरे हुए हैं, वह माधव का मुख नही देख पाती है। वह माधव की बनाई हुई बकुल पुष्पो की माला को माधव के गले मे डाल देती है। सहसा वह माधव का मुख देख लेती है और आलिगन छोड़ कर सकुच जाती है। वह कहती है कि लवगिका ने उसे धोखा दे दिया। मकरन्द तथा लवगिका उसे समझाते है और लवगिका उसे माधव को आत्मसमर्पित करने को कहती है। मालती चुप रहती है। ठीक इसी समय कामदकी पहुँच जाती है। वह भी मालती और माधव के परिणय का समर्थन करती है और कहती है कि ऐसा होने मे ही ब्रह्मा की सृष्टि को सफलता मिलेगी। कामन्दकी माधव के साथ मालती को समर्पित करती है और दोनो को मार्मिक कर्त्तव्य तथा धर्म का उपदेश भी करती है। वह मकरन्द को भी इस बात के लिए तैयार करती है कि मालती का वेश धारण कर नन्दन को प्रतारित करे तथा मदयन्तिका के साथ परिणय करे। कामन्दकी मालती और माधव को समीपवर्ती उद्यान में विवाह-मंडप के लिए भेज देती है, जहाँ पर

अवलोकिता पहले से सामग्रियों के साथ तैयार बैठी है। कामन्दकी, लवंगिका तथा मालती का वेश धारण कर के मकरन्द जाते हैं।

सातवें अंक के आरम्भ में भी कामन्दकी के कौशल से नन्दन की शादी मालती का वेश धारण किए हुए मकरन्द से होती है। नन्दन जब सुहागरात मनाने जाता है तो मालती वेशधारी मकरन्द उसे फटकार देता है। नन्दन उसके चरणों पर गिरता है किन्तु कुछ काम बनता नहीं और अन्त में क्रुद्ध हो कर मालती को चरित्र-हीन बता कर शपथ खा कर वहाँ से चला जाता है।

इधर बुद्धरक्षिता मकरन्द तथा मदयन्तिका को शादी कराने के उद्देश्य से मदयन्तिका को वहाँ लाती है किन्तु मदयन्तिका को यह ज्ञात नहीं है, वह तो मालती को उलाहना देने के लिए आयी है। मदयन्तिका को आयी हुई देख कर मकरन्द सोने का बहाना करता है। बुद्धरक्षिता और लवंगिका नन्दन की निन्दा करती हैं कि उसने बलपूर्वक मालती को वश में करने का प्रयत्न किया। मदयन्तिका अपने भाई का पक्ष लेती है और कहती है कि मेरे भाई ने इसलिए मालती को कठोर वचन कहा है जो माधव के साथ उसके प्रणय का परिवाद चारों ओर फैला हुआ है।

मदयन्तिका मकरन्द के प्रति अपनी आसक्ति प्रकट करती है और अपनी मनोदशा का स्पष्ट वर्णन करती है। बुद्धरक्षिता उससे पूछती है कि यदि संयोग से इसी समय उसकी मकरन्द से भेंट हो जाय तो वह क्या करेगी। मदयन्तिका कहती है कि वह मकरन्द से आत्म-निवेदन करेगी। ठीक इसी अवसर पर मकरन्द प्रकट हो जाता है और मदयन्तिका का हाथ पकड़ लेता है। मदयन्तिका के साथ वहाँ पर उपस्थित सभी लोग उत्फुल्ल हो जाते हैं और उस स्थान की ओर चल पड़ते हैं जहाँ मालती और माधव हैं।

आठवें अंक में मालती, माधव और अवलोकिता बैठे हुए दिखाये गए हैं। मालती कुछ खिन्न-सी है। उसके मन में राजा के अप्रसन्न होने की चिन्ता है। माधव उसे प्रणय-वार्ता द्वारा प्रसन्न और अनुकूल बनाने की चेष्टा करता है। लवंगिका का समाचार न मिलने से मालती रोती है। माधव अवलोकिता से मदयन्तिका और मकरन्द के प्रणय के सम्बन्ध में पूछता है। अवलोकिता बताती है कि जिस दिन बाघ मारने की घटना घटित हुई है उसी दिन से मदयन्तिका और मकरन्द में परस्पर अत्यधिक आसक्ति हो गयी है। उनका परिणय अवश्यम्भावी है।

इसी बीच कलहंस नन्दन के घर का वृत्तान्त लेकर आता है और मदयन्तिका, अवलोकिता तथा बुद्धरक्षिता के साथ प्रवेश करता है। वे लोग बताते हैं कि मकरन्द को नगर के रक्षक राजपुरुषों ने रोक लिया है। माधव जब यह सुनता है तो तुरन्त कलहंस के साथ मकरन्द की सहायता के लिए चल पड़ता है। मालती

यह खबर कामन्दकी तक पहुँचाने के लिए अवलोकिता तथा बुद्धरक्षिता को भेजती है और उस स्थान पर केवल मालती और मदयन्तिका रह जाती है। मालती चिन्तित होकर कुछ आगे बढ़ती है कि इसी अवसर पर योगिनी कपालकुण्डला वहाँ पहुँच जाती है और कुछ कटुवचन कहते हुए मालती को उठा कर चल देती है।

मालती के इस अपहरण की जानकारी मदयन्तिका को भी नहीं है। लवंगिका नगरसे आती है और कहती है कि नागरिकों द्वारा उसे सूचना मिली है कि राजपुरुषों के साथ वीरतापूर्वक लड़ते हुए माधव और मकरन्दको महाराजने स्वयं प्रासाद पर खड़े हो कर अपनी आँखो से देखा है। वे दोनो मालती को पुकारती हैं किन्तु मालती वहाँ है कहाँ ? कलहंस आकर बताता है कि राजा माधव और मकरन्द की वीरता देख कर बहुत प्रसन्न हैं और उन्होंने अमात्य भूरिवसु तथा नन्दन को अपना जामाता बनाने की स्वीकृति दे दी है। इसी समय मकरन्द और माधव भी आ जाते हैं। मालती के वहाँ न होने की खबर से सभी लोग चिन्तित और दुःखी होते हैं। माधव की दशा तो अत्यन्त चिन्तनीय हो जाती है। सब लोग कामन्दकी के पास जाते हैं क्योंकि सब की दृष्टि मे इस संकट के निवारण की क्षमता उसी मे है।

नवें अंक के आरम्भ मे कामन्दकी की पुरानी एक शिष्या सौदामिनी आती है जो भयंकर कार्यों मे लगी हुई योगिनी कपालकुण्डला से मालती की रक्षा कर माधव को खोज रही है। वह आकाश मार्ग से जा रही है और पद्मावती नगरी पहुँचती है, जहाँ पर उसे मालूम होता है कि मालती के वियोग में दुःखित माधव अपने सखा मकरन्द के साथ किसी अत्यन्त दुर्गम स्थान मे पहुँच चुका है। वह उसे खोज निकालने का संकल्प लेती है। वह पद्मावती नगरी तथा लवणा और सिन्धु नदियो के रमणीय दृश्यो को देखते हुए वहाँ से चल पड़ती है। ठीक इसी अवसर पर रंगमंच पर करुण दशा मे घूमते हुए मकरन्द और माधव उपस्थित होते है। माधव मालती के वियोग में विलाप कर रहा है। मकरन्द उसे प्राकृतिक दृश्यो को दिखा कर उसके चित्त को अन्यान्य विषयो की ओर मोडने का प्रयास करता है किन्तु माधव की वेदना इतनी गहरी है कि वह बारम्बार मालती का ही स्मरण करता रहता है। वह मालती के वियोग में विह्वल होकर मूर्च्छित हो जाता है और देखते ही देखते उसकी दशा अति शोचनीय हो जाती है। अपने मित्र की यह विपन्न अवस्था देख कर मकरन्द के हाथ-पैर फूल जाते हैं। माधव को होश आता है किन्तु वन्य प्रदेश मे पर्वत श्रेणियो, मयूरो और चकोरो को देख कर उसकी वियोगाग्नि पुनः धधक उठती है। अपने अनन्य मित्र मकरन्द का आलिंगन कर वह पुनः संज्ञा-शून्य हो जाता है। माधव की इस अत्यन्त कारुणिक तथा मरणासन्न अवस्था को देख कर मकरन्द से रहा नही जाता। वह अपने बाल-सखा की मृत्यु अपनी आँखो

से नही देखना चाहता। वह भी निश्चय करता है कि एक पर्वत श्रेणी पर चढ कर उससे नीचे कूद कर आत्महत्या कर ले। अपने इस साहसिक निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए वह एक ऊँचे पर्वत शिखर पर चढ कर कूदना ही चाहता है कि उन दोनों को ढूंढते हुए सौदामिनी पहुँच जाती है। वह मकरन्द को समझाती है और मालती के जीवित होने की खबर देती है। माधव के संज्ञाशून्य और मरणासन्न स्थिति मे होने का समाचार जान कर वह झटपट मकरन्द के साथ ही वहां पहुँच जाती है, जहां निश्चेष्ट माधव पड़ा हुआ है। माधव को होश आता है और सौदामनी मालती के जीवित होने का प्राणद संदेश सुना कर चिह्न स्वरूप बकुलमाला देती है और यह भी बताती है कि उसने किस प्रकार योगिनी कपालकुण्डला के हाथो से मालती के प्राणो की रक्षा की है।

सौदामनी अपनी सिद्धि के प्रभाव से मकरन्द को श्रीपर्वत से उड़ा कर ले जाती है और मकरन्द स्तब्ध रह जाता है और यह सारा वृत्तान्त सुनाने के लिए कामन्दकी के पास जाता है।

आखिरी दसवें अंक मे मालती, माधव तथा मकरन्द के वियोग में कामन्दकी, लवंगिका तथा मदयन्ती को चिन्ताकुलित दिखाया गया है। सब के सब करुण विलाप कर रहे हैं और इस दारुण विपदा का किसी भी प्रकार से अन्त न देख कर सब के सब मृत्यु का आलिंगन करने के लिए तैयार होते हैं। इधर अमात्य भूरिवसु भी अपनी कन्या के वियोग से दुःखित हो कर राजा और नन्दन के निवारण करने पर भी अग्नि मे प्रवेश कर के अपने प्राणो का अन्त कर देने का निश्चय करते हैं।

इस प्रकार नाटक के इन सभी उपर्युक्त पात्रा द्वारा अपने अपने प्राणों का अन्त करने का अन्तिम निश्चय दिखाए जाने के साथ ही रंग मच पर एक साथ ही मालती, माधव तथा मकरन्द को साथ ले कर कामन्दकी की प्राचीन शिष्या सौदामनी अवतरित होती है। वह स्वयं जा कर अमात्य भूरिवसु को यह सुसंवाद सुना कर उन्हें आत्म-हत्या से विरत करती है। इन सबो के सकुशल वापस आ जाने के सुखद संवाद से कामन्दकी, लवंगिका और मदयन्ती की प्रसन्नता का भी वारापार नही रहता। इन लोगों को यह भी मालूम होता है कि किस प्रकार कपालकुण्डला के क्रूर हाथों से मालती के प्राणों की रक्षा हुई है।

सौदामिनी अपनी आचार्या कामन्दकी को प्रणाम करती है। इसी समय राजा के यहां से पत्र आता है जिसमे वह मकरन्द और मदयन्तिका के परिणय का अभिनन्दन करते हैं और सब का अपने अपने प्रेमी जनो से सुखद मिलन होता है। अवलोकिता, बुद्धरक्षिता और कलहंस भी वहीं उपस्थित हो जाते हैं। कामन्दकी सब को सूचित करती है कि अमात्य भूरिवसु ने तथा देवरात ने अपनी छात्रावस्था

में ही कामन्दकी और सौदामिनी के सामने अपनी अपनी भावी सन्तानों का परस्पर परिणय-सम्बन्ध स्थापित करने का सङ्कल्प किया था। वह संकल्प पूरा हो गया। सब के सब लोग यह सुखद संवाद सुन कर हर्षातिरेक से उत्फुल्ल हो उठते हैं और मंगल आशीर्वचन के साथ नाटक की कथा सुखेन समाप्त हो जाती है।

मालती और माधव चूंकि दोनों ही इस नाटक के नायिका और नायक हैं और मुख्यतः उनकी प्रणय-कथा पर ही इसकी रचना हुई है अतः नाटक का नाम मालतीमाधव रखा गया है। मुख्य प्रणय-कथा के साथ मदयन्तिका और मकरन्द की प्रणय-गाथा भी इसमें साथ साथ चलती है और उसका भी अवसान मूलकथा के समान सुखद होता है।

भवभूति का यह नाटक मुख्यतः सामाजिक है, और इसमें उस समय के भारतीय समाज की जीवन्त झाँकी चित्रित हुई है। कथावस्तु मुख्यतः महाकवि की प्रतिभा का ही पावन प्रसाद है, किन्तु प्रणय गाथा का जो विकास हुआ है उसमें गुणाढ्य की बृहत्कथा की एक कहानी की छाया अवश्य है। संस्कृत के अनेक प्राचीन आख्यायिका ग्रन्थों में इस नाटक की कथावस्तु के समान ही छद्म विवाह तथा मन्दिर आदि के गोपनीय मार्गों से नायक और नायिका के भागने की कई कथाएँ आई हैं। इससे प्रकट है कि भवभूति ने इनसे प्रेरणा लेकर ही अपनी कथावस्तु का पल्लवन किया है। इस प्रकार कवि कल्पित कथानक के कारण इस नाटक को प्रकरण की परिभाषा में बाँधा जा सकता है। संस्कृत के आचार्यों ने प्रकरण की जो विशेषताएँ बताई हैं वे सब की सब मालतीमाधव में पाई जाती हैं। महामुनि भरत ने प्रकरण का निम्नलिखित लक्षण बताया है—

यत्र कविरात्मबुद्ध्या वस्तुशरीरं च नायकं चैव।
स्वयमुत्पाद्य विरचयेत्सज्ज्ञेयं प्रकरणं नाम॥

दशरूपककार ने भी ऐसी ही परिभाषा दी है—

अथ प्रकरणे वृत्तमुत्पाद्यं लोक संश्रयम्।
अमात्य विप्रवणिजामेकं कुर्याच्च नायकम्॥
धीरप्रशान्तं सोपायं धर्मकामार्थतत्परम्।
शेषं नाटकवत् संधि प्रवेशकरसादिकम्॥

अर्थात् प्रकरण की कथावस्तु कवि की कल्पना-प्रसूत होनी चाहिए। उसका नायक धीर प्रशान्त तथा नायिका कुलवती स्त्री अथवा वेश्या होनी चाहिए। नायक विप्र या वणिक् वंश का होना चाहिए। संधियाँ आदि नाटक के समान ही होनी चाहिए। प्रकरण के ये सभी लक्षण मालतीमाधव में देखे जाते हैं।

मालती माधव की कथावस्तु युवकों और युवतियों के पारस्परिक प्रेम पर आधारित है, जिसमें अनेक उत्तेजक तथा अतर्कित घटनाएँ घटित होती हैं। कुछ ऐसी घटनाएँ भी हैं जो भयंकर तथा अतिमानवीय हैं। मकरन्द द्वारा मालती का वेश बना कर नन्दन को प्रतारित करने की घटना तो नितान्त हास्यास्पद है। मूल कथा में अनेक ऐसे मोड़ आए हैं जिनके कारण वह खूब निखर उठी है। किन्तु कुछ अप्राकृतिक घटनाओं, श्मशान के भयंकर दृश्यों, भूतों, प्रेतों और कापालिकों की घृणित क्रियाओं तथा कन्याओं के अपहरण की घटनाओं के कारण कथा का सहज प्रवाह दूषित हो उठता है। आज का दर्शक या पाठक उनको स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है। यद्यपि जिस युग में इसकी रचना हुई होगी, उस युग के लिए यह स्वाभाविक ही रहा होगा। कपालकुण्डला द्वारा मालती के अपहरण की कथा तथा सौदामनी द्वारा मकरन्द के उड़ाए जाने की घटनाएँ आज के युग में अलौकिक हैं। इसी प्रकार लोकविरक्त संन्यासिनी कामन्दकी की योजनाओं से नाटक की सम्पूर्ण कथावस्तु इतनी बोझिल बन गयी है कि स्वाभाविक नहीं लगती। उसकी अनेक योजनाएँ तो बहुत सटीक उतरती हैं किन्तु कुछ योजनाएँ नितान्त असफल रह जाती हैं। उसकी शिष्या सौदामनी तो उससे भी अधिक महत्वपूर्ण उतरती है और वहाँ पर भाग्य को ही प्रमुखता देनी पड़ती है।

नाटक की मूल कथा में अनेक मोड़ हैं। सब के सब विचित्र मोड़ हैं और कुछ घटनाएँ तो ऐसी हैं जिनके कारण दर्शकों या पाठकों के मन पर विचित्र भाव पैदा होते हैं और मूलकथा का प्रभाव घट-सा जाता है। विभिन्न प्रसंगों की इतनी बहुलता है कि नाट्य कला का विकास अवरुद्ध-सा है। हाँ, माधव की विरह व्यथा का वर्णन उत्कृष्ट है,जो काव्य की दृष्टि से उपादेय तथा स्पृहणीय होते हुए भी नाटक की दृष्टि से दोषपूर्ण है।

इस नाटक का मुख्य रस शृंगार है किन्तु अन्यान्य रसों का भी पूर्ण परिपाक हुआ है, जैसा कि महाकवि ने नाटक के आरम्भ में भी संकेत किया है—

> भूम्ना रसानां गहनाः प्रयोगाः सौहार्दहृद्यानि विचेष्टितानि।
> औद्धत्यमायोजितकामसूत्रं चित्राः कथावाचि विदग्धता च॥

शृंगार के दोनों पक्षों के चित्रण में नाटककार को पूर्ण सफलता मिली है यद्यपि वियोग शृंगार के चित्रण में उसकी प्रतिभा अधिकाधिक चमत्कृत हुई है। नाटक का सम्पूर्ण नवां अंक तो विप्रलम्भ का जीता जागता नमूना है। सहृदय पाठक द्रवित हुए बिना नहीं रहता। रौद्र तथा वीभत्स रस का परिपाक भी इस नाटक में पूर्णरूपेण हुआ है। वीर रस का परिपाक मकरन्द द्वारा सिंह के मारने के अवसर

पर हुआ है, इसी प्रकार हास्य रस का प्रसंग मकरन्द द्वारा मालती का वेश धारण कर नन्दन को प्रतारित करने के अवसर पर हुआ है। करुण रस के सन्दर्भ नाटक के नवें अंक मे हैं। यह श्लोक जो थोड़े बहुत शब्दों के हेर फेर के साथ उत्तररामचरित मे भी है, इस सन्दर्भ में उद्धरणीय है—

दलति हृदयं गाढ़ोद्वेगं द्विधा तु न भिद्यते
वहति विकलः कायो मोहं न मुञ्चति चेतनाम्।

मातंमर्तदलतिहृदयं ध्वंसते देहबन्धः।
शून्यं मन्ये जगदविरलज्वालमन्तर्ज्वलामि॥
सीदन्नन्धे तमसि विधुरो मज्जतीवान्तरात्मा
विष्वङ्मोहः स्थगयति कथं मन्दभाग्यः करोमि॥९।२०॥

इस प्रकार विभिन्न रसों के सफल एवं सजीव चित्रण में भवभूति का यह नाटक एक सफल कृति है।

मालती माधव की भाषा कुछ क्लिष्ट, समासबहुल तथा अस्पष्ट-सी है। भास के नाटकों के समान सरलता एवं सुस्पष्टता इसमें नहीं है। गद्यांश की अपेक्षा पद्य अधिक हैं। लंबे-लंबे समस्त पदों के भार से संवाद नीरस और बोझिल हो गए हैं किन्तु ऐसे भी स्थलों की कमी नहीं है जहाँ महाकवि भवभूति की भाषा तथा शैली की सरलता तथा सजीवता के भी मनोज्ञ दर्शन होते हैं। एक छटा देखिए, पति-पत्नी के आदर्श के सम्बन्ध में—

प्रेयो मित्रं बन्धुता वा समग्रा सर्वे कामाः शेवधिर्जीवितं वा।
स्त्रीणां भर्ता धर्मदाराश्च पुंसामित्यन्योन्यं वत्सयोर्ज्ञातमस्तु॥६।१८॥

इसी प्रकार प्रेम के सम्बन्ध में भी महाकवि की ये दोनों सूक्तियाँ संस्कृत काव्यरसिकों के लिए चिरकाल से कण्ठहार बनी हुई हैं—

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतुः।
न खलु बहिरुपाधीन्प्रीतयः संश्रयन्ते॥
विकसति हि पतंगस्योदये पुण्डरीकं
द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः॥१।२५॥
परिच्छेदातीतः सकलवचनानामविषयः।
पुनर्जन्मन्यस्मिन्ननुभवपथं यो न गतवान्॥
विवेकप्रध्वंसादुपचितमहामोहगहनो
विकारः कोऽप्यन्तर्जडयति च तापं च कुरुते॥१।३०॥

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, मालतीमाधव में महाकवि भवभूति का काव्य-

कौशल विशद रूप से मुखरित हुआ है। उनके अगाध पाण्डित्य और काव्य रुचि का इस नाटक मे पूर्ण विकास हुआ है। यद्यपि नाटककार के रूप में यह नाटक उनकी अनवद्य रचना नही कही जायगी। इस दिशा मे तो उत्तररामचरित ही उनकी सर्वोत्कृष्ट नाट्यकृति है। मालतीमाधव मे नाना प्रकार के भावों और रसो की बडी मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन तो इतना सजीव हुआ है कि मानो महाकवि चित्रकार की तूलिका ले कर सारे दृश्यो का अकन कर रहा हो।

पात्रों का चरित्र चित्रण

इस नाटक की नायिका मालती है, जो स्त्री पात्रों में ही नही सम्पूर्ण पात्रो मे प्रमुख है। नाटक का सम्पूर्ण इतिवृत्त उसी को लेकर है। स्त्रियोचित सम्पूर्ण सद्गुणों का उसमे पूर्ण विकास हुआ है। परम सुन्दरी होने के साथ ही उसमे दया, परदुःखकातरता, सहानुभूति, करुणा, शील-संकोच और अपने प्रेमी के लिए सर्वस्व निछावर कर देने की उत्कट भावना है। उसकी सुन्दरता की एक झांकी इस प्रकार है—

> नवेषु लोध्रप्रसवेषु कान्तिर्दृशः कुरंगेषु गतं गजेषु।
> लतासु नम्रत्वमिति प्रमथ्य व्यक्तं विभक्ता विपिने प्रिया मे ॥९।२७॥

मालती सौन्दर्यराशि की अधिष्ठातृ देवता है, सौन्दर्य सार के समुच्चय का निकेतन है। उसके निर्माण में निश्चय ही चन्द्रकला, मृणाल और ज्योत्स्ना आदि कारण हैं तथा उसके निर्माता स्वय कामदेव हैं। इतनी अनन्य सुन्दरी होते हुए भी उसे अपने कुलशील और माता-पिता की मर्यादा रक्षा के प्रति सहज आदर है। उसे अपने सुख-दुःख का ध्यान उतना नही है जितना पिता की मर्यादा-रक्षा का। उसके प्रेम तथा माता पिता के प्रति श्रद्धा—इन दोनों मे दीर्घ संघर्ष है, किन्तु अन्त तक वह अपने माता-पिता की मर्यादा की रक्षा करती है। माधव के प्रति आत्मसमर्पण करते हुए भी वह उस ओर से विमुख नहीं हुई है। कामन्दकी उसके सामने दुष्यन्त और शकुन्तला, उर्वशी और पुरूरवा—की प्राचीन कथाएँ कहती है और प्रेरित करती है कि वह भी अपने प्रियतम को उन्हीं दोनों की भांति आत्म-समर्पण कर दे किन्तु मालती कोई प्रत्युत्तर नही देती। उसका मौन उसके उज्वल चरित्र की मुखर भूमिका है। अपनी सखियों के प्रति भी मालती के हृदय में सहज स्नेह और आदर की भावना है। लवंगिका उसकी अन्तरंग सखी है। उससे वह अपना कुछ भी छिपा कर नहीं रख सकती। मनोगत भावों को निःसकोच

होकर सुनाती है। लवंगिका के लिए वह अपना सब कुछ निछावर कर सकती है और उसके कुशल-क्षेम के लिए रात दिन चिन्तित रहती है। जब नन्दन के घर से लवंगिका के आने में थोड़ा विलम्ब होता है और उसका कोई समाचार नहीं मिलता तो वह चिन्तित हो उठती है। अपने अनन्य प्रियतम माधव की प्रणय-कथा भी उसे उस समय अच्छी नहीं लगती। ऐसी थी वह सहज स्नेहिनी और निश्छल भाव से प्रेम करनेवाली।

अपने प्रियतम माधव के लिए उसके हृदय में कितना अगाध प्रेम है इसका कुछ परिचय निम्नलिखित पंक्तियों में मिलता है, जो उसके मुख से उस समय निकली है जिस समय योगिनी कपालकुण्डला कराला देवी के मन्दिर में उसे बलि देने के लिए उद्यत है और उससे कहती है कि तुम्हारा अन्त समीप है, अपने प्रियतम का स्मरण तुम कर सकती हो। मालती कहती है—

हा देव माधव ! परलोकगतोऽपि युष्माभिः स्मर्तव्योऽयं जनः।
न खलु स उपरतो यस्य वल्लभः स्मरति ॥५।२५॥

मालतीमें भारतीय महिलाओं की मर्यादा की सीमारेखा है। उसके चरित्र की एक मनोहर झाकी हमें मालतीमाधव में मिलती है और ज्ञात होता है कि महाकवि ने बड़ी निपुणता से उसके चरित्र की महनीयता अंकित की है। वह मधमुच सौन्दर्य की अधिष्ठात्री होने के साथ शालीनता, गंभीरता, प्रेम, सहानुभूति और करुणा की मूर्ति है, कुल-परिवार और भारतीय नारी की मर्यादा-रक्षा ही उसके जीवन का ध्येय है।

माधव—इस नाटक का नायक है जैसा कि नाम से ही सुस्पष्ट है। वह भी मालतीके समान एक अमात्य का पुत्र तथा परम सुन्दर, स्वस्थ तथा मानवीय सद्गुणों का आकर है। वह शास्त्रीय परिभाषा के अनुसार धीर-प्रशान्त तथा कला प्रेमी है। कामन्दकी के मुख से उसका परिचय सुनिए—

अलोक सामान्य गुणस्तइज: प्ररोचनार्थं प्रकटीकृतश्च ॥१।११॥

माधव सौन्दर्य और वीरता का अद्भुत समन्वय है। वह प्रेम की पराकाष्ठा की भाँति वीरोचित कर्त्तव्यों को भी भलीभाँति निभाना जानता है। नवयुवक सुलभ सहृदयता तथा मालती को अनुपम सौन्दर्य के वशीभूत होकर वह मालती के लिए अपना सब कुछ लुटाने कौ तैयार हो जाता है। लवंगिका के मांगने पर अपनी बकुलमाला उसे सौंप देता है। उसकी आसक्ति इतनी प्रबल है कि उसको अपने शरीर की भी सुधि-बुधि नहीं रहती।

प्रेमी और वीर होने के साथ ही उसमें निर्भयता भी चरम कोटि की है। जिस समय उद्यान में सिंह द्वारा उपद्रव मचाने की सूचना उसे मिलती है, उस समय वह

निर्भय होकर उसका मुकाबला करने के लिए उद्यत होता है, किन्तु उसका प्राणप्रिय सखा मकरन्द उससे भी पहले कूद पड़ता है। इसी प्रकार राजपुरुषों द्वारा मकरन्द के पकड़े जाने पर वह उसे छुड़ाने के लिए राजपुरुषों से ही भिड़ जाता है और ऐसा पराक्रम दिखाता है कि स्वयं राजा प्रसन्न हो जाते हैं। ऐसी ही वीरता और निर्भयता का दर्शन उसके द्वारा तान्त्रिक अघोरघाट की हत्या के समय भी मिलता है।

माधव इतना उत्कट प्रेमी है कि अपनी प्रेयसी के लिए नीचातिनीच कर्म करने के लिए भी उद्यत हो जाता है। एक ब्राह्मण पुत्र द्वारा श्मशान भूमि मे नरमांस विक्रय का उदाहरण उसके उत्कट प्रेम का परिचायक है। वह अपनी प्रेयसी मालती के वियोग मे प्राण त्यागने के लिए उद्यत है, उसकी वियोग व्यथा वह सहन नही कर सकता था। इस प्रकार चरितनायक माधव उत्कट प्रेमी, परम साहसी, वीर तथा अन्य मानवीय सद्गुणो की दुर्लभ निधि है।

मकरन्द माधव का एकान्त सखा है। जिस प्रकार लवंगिका के बिना मालती नही रह सकती उसी प्रकार मकरन्द के बिना माधव को भी चैन नही है। वह माधव के उत्तमोत्तम गुणों की प्रतिच्छाया है। उसके प्रत्येक सुख-दुःख का संगी है। अपने मित्र के हितार्थ वह सब कुछ त्यागने को तत्पर हो जाता है। वह परम वीरात्मा, बुद्धिमान तथा सुलझे हुए विचारो का युवक है। निःस्वार्थ प्रेम की प्रतिमा के समान वह माधव और मदयन्तिका के लिए संघर्ष रत है, किन्तु अपनी प्रेयसी मदयन्तिका से बढ कर उसे अपने नर्म सखा माधव के हितो की चिन्ता है। जिस समय मालती की वियोगाग्नि को न सहन कर सकने के कारण माधव की दशा अत्यन्त दयनीय हो जाती है और मकरन्द को ऐसा दिखाई पड़ता है कि माधव अब मृत्यु के समीप है, उस समय वह स्वयं अपने प्राणो को त्यागने के लिए आत्महत्या जैसे जघन्य कृत्य के लिए उद्यत हो जाता है। ऐसे प्रेमी मित्र सर्वदा दुर्लभ होते हैं।

मकरन्द की वीरता और निर्भीकता के अनेक दृश्य नाटक में चित्रित हैं। वह न केवल सिंह को ही मार डालता है अपितु राजपुरुषों से भी लोहा लेने मे पीछे नही रहता। वह पुरुष होकर भी स्त्री का वेश धारण कर नन्दन के घर मे पहुँच जाता है। अपने मित्र माधव के हितार्थ उसके लिए कुछ भी अकरणीय अथवा दुष्कर नही है। वह कामना करता है कि जहाँ कही उसका मित्र जन्म ले वही उसका भी जन्म हो—

प्रियस्य सुहृदो यत्र मम तत्रैव सम्भवः।
भूयादमुष्य भूयोऽपि भूयासमनुसंचरः॥९।४१॥

इस प्रकार परम वीरता, उदारता, परदुःख कातरता अपने सन्मित्र के लिए

अपना सर्वस्व समर्पण करने की उत्कट भावना के अतिरिक्त मकरन्द में प्रेमी के भी दुर्लभ गुण विद्यमान हैं। अपनी प्राण प्रेयसी मदयन्तिका के प्रति भी वह पूर्णतः निष्ठावान है और अन्त में उसकी भी मनकामना पूर्णतः फलवती होती है।

भवभूति के इस नाटक में स्त्री पात्रों की अधिकता है, किन्तु उन सब में सब से अधिक तेजस्वी स्त्री पात्र है कामन्दकी, जो है तो बौद्ध सन्यासिनी अथवा भिक्षुणी, किन्तु लोक व्यवहार में उसका बुद्धि विलास किसी भी कूटनीतिज्ञ राजपुरुष से कम नहीं है। वह संसार के सुखों को त्याग चुकी है किन्तु अपने दो मित्रों के वचन को सत्य करने के लिए उचित-अनुचित कोई भी उपाय करने में पीछे नहीं रहती। मालती और माधव का परिणय कराने के लिए उसकी योजना बड़े-बड़े विघ्नों में फँसती है और बीच बीच में ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह कभी सफल नहीं होगी किन्तु वह हिम्मत नहीं हारती और ऐसे ऐसे उपाय रचती है जिससे अन्त में उसका मनोरथ पूर्ण हो कर ही रहता है।

राजा मालती के विवाह में बाधक है। वह नन्दन से मालती के विवाह का इच्छुक है। मालती का पिता अमात्य भूरिवसु अनन्य स्वामिभक्त है तथा मालती भी आदर्शवादिनी है। वह अपनी इच्छाओं का विघात कर सकती है किन्तु अपने पिता माता की आज्ञा का उल्लघन नहीं कर सकती है। अत वह न चाहते हुए भी नन्दन को स्वीकार करने के लिए तैयार है। ये दोनों चीजें कामन्दकी की योजना में बाधक है अतः उसका काम बड़ा कठिन है। उसे एक ही साथ दो कठिन काम करने पड़ते है। प्रथम तो वह मालती के हृदय में माधव के प्रति अत्यासक्ति उत्पन्न करती है तथा दूसरी ओर ऐसी ऐसी घटनाओं की सृष्टि करती है जिनसे दोनों में प्रत्यक्ष सम्पर्क हो सके। वह मालती के हृदय में धीरे-धीरे अपने पिता के प्रति विरक्ति तथा अवहेलना उत्पन्न करने का भी प्रयत्न करती है, जो उस जैसी सन्यासिनी के लिए कथमपि उचित नहीं था। किन्तु कामन्दकी को अपने सकल्पों की पूर्ति में कोई बाधा रोक नहीं सकती। वह स्वयं कन्यादान भी करती है और वर के अभिभावक की भूमिका भी निभाती है।

कामन्दकी बड़े बड़े कूटनीतिज्ञों का कान काटने वाली महिला है। महावीर चरितम् के माल्यवान की भाँति उसमें अपनी योजनाओं को सफल बनाने की अदम्य शक्ति है। उसका तेजस्वी चरित्र उसकी अनवरत कर्मठता, जागरूकता तथा बुद्धि प्रखरता के कारण अधिक आकर्षक बन गया है।

पुरुष पात्रों में अमात्य भूरिवसु तथा राजा के चरित्र की जो झाँकियाँ इस नाटक में है उनसे प्रकट होता है कि उस युग के राजा और मंत्री मनुप्रणीत धर्मशास्त्रीय मर्यादाओं के रक्षक होते थे।

तांत्रिक अघोरघण्ट का चरित्र बड़ा भयंकर है, जो उस युग की तथा समाज की कुरीतियों का परिचय देता है। नर बलि तथा नर मांस के विक्रय का चित्रण कर भवभूति ने यह सिद्ध कर दिया है कि उस युग के समाज में शाक्तों अथवा बौद्धों की तंत्र साधना का बोलबाला था और स्त्रियां भी उसमें खुल कर भाग लेती थीं।

मालती माधव के अन्यान्य स्त्री पात्र भी कम तेजस्वी और अनाकर्षक नहीं हैं। मालती की अन्तरंग सखी लवंगिका तथा कामन्दकी की शिष्या बुद्धरक्षिता के चरित्र भी उच्चकोटि के हैं तथा जिस प्रकार अनेक छोटी व बड़ी नदियां समुद्र में मिल कर अपने को चरितार्थ करती हैं उसी प्रकार वे सब भी अपने उज्ज्वल और स्पृहणीय चरित्रों से इस नाटक के नायक और नायिका के चरित्रों को अधिकाधिक निखारते हुए अपनी आभा का पाठकों तथा दर्शकों के हृदय में चिरकाल के लिए अंकित कर जाती हैं। उनके व्यक्तित्व में जो परस्पर भिन्नताएं हैं, उनका भी परिचय पाठकों को अनायास ही मिलता रहता है।

लवंगिका कामशास्त्र की पण्डिता है। बुद्धरक्षिता भिक्षुणी हो कर भी इस सन्दर्भ में किसी से कम नहीं है। सौदामिनी सर्वाधिक तेजस्विनी है। उसमें यौगिक सिद्धि भी है और लौकिक व्यवहारों में अपार निपुणता भी है। ऐसी ही है मदयन्तिका, जो राजा के क्रीडा सहचर नन्दन की बहन है। वह भी परम सुन्दरी तथा सहृदय है किन्तु उसमें वह गंभीरता और आदर्श-प्रेम नहीं है जो मालती में है। वह अपने प्रेमी को आत्म समर्पण ही नहीं कर देती उसके साथ पलायन भी कर जाती है और बुद्धरक्षिता द्वारा पूछने पर स्पष्ट कह भी देती है कि उसके शरीर पर उसके प्रेमी का एकाधिकार है।

इस प्रकार भवभूति का यह नाटक संस्कृत काव्य रसिकों के लिए चिरकाल से वांछित रहा है। इसमें अनेक ऐसी विशेषताएं हैं जो अन्यत्र नहीं मिलती। मालती माधव में छन्दों का प्रयोग दर्शनीय है। किन्हीं छन्दों में कर्ण सुखद तथा उच्चारण में सुख देने वाले शब्दों की मनोहारि छटा है तो किन्हीं किन्हीं में विकट वर्णों के विन्यास कौशल को देखते ही बनता है। छन्दों की नादात्मक गति से उनकी भाव व्यंजना का प्रभाव अधिक हो जाता है। पात्रों के अनुरूप भाषा के प्रयोग की छटा तो इस नाटक में स्थल-स्थल पर दर्शनीय है। कहीं-कहीं वाक्य अत्यन्त सरल, सरस तथा छोटे हैं तो कहीं अत्यन्त जटिल, विकट, समासबहुल तथा प्रांजल हैं। क्लिष्ट गद्य काव्य की भांति उन्होंने कहीं कहीं तो कादम्बरी और दशकुमार चरित की तरह संवादों का प्रयोग किया है।

नाटक में व्यंग्य और हास्य का भी प्रयोग है, किन्तु बहुत कम। संभवत. भवभूति प्रकृति के अत्यन्त गंभीर तथा रसिक पुरुष थे। व्याकरण, न्याय, मीमांसा,

पुराणादि के यह पण्डित थे। उन्होंने ऐसे ऐसे नूतन शब्दों का प्रयोग किया है जो अमरकोश में नहीं हैं। उनकी शैली मे वैदिक व्याख्यानों की भी छाया मिलती है। वे अपने अनेक श्लोकों का यथावसर बारम्बार प्रयोग करने मे भी नहीं हिचकते। करुण उनका परमप्रिय रस है यद्यपि शृगार के वर्णन मे भी वह सिद्धहस्त हैं।

प्रकाश निकेतन, कृष्ण नगर
प्रयाग

रामप्रताप त्रिपाठी

मालतीमाधवम्

मालतीमाधव के पात्र

पुरुष पात्र

१. सूत्रधार — प्रमुख नट।
२. नट — सूत्रधार का सहायक।
३. देवरात — विदर्भ नरेश के मंत्री माधव का पिता।
४. माधव — नायक, विदर्भराज के मंत्री देवरात का पुत्र।
५ मकरन्द — माधव का मित्र।
६. भूरिवसु — पद्मावती नरेश का मंत्री।
७. नन्दन — पद्मावती नरेश का एकान्त मित्र।
८ कलहंस — माधव का सेवक।
९ अघोरघण्ट — एक कापालिक।

स्त्री पात्र

१. मालती — नायिका, पद्मावती नरेश के मंत्री भूरिवसु की कन्या।
२. मदयन्तिका — नन्दन की बहिन।
३. कामन्दकी — बौद्ध सन्यासिनी, योगिनी।
४. सौदामिनी — कामन्दकी की पूर्व शिष्या, योगिनी।
५ कपालकुण्डला — अघोरघण्ट की शिष्या।
६. अवलोकिता — कामन्दकी की परिचारिका।
७. बुद्धरक्षिता — कामन्दकी की सखी।
८. लवङ्गिका — मालती की सखी, उसकी धाय की पुत्री।
९. मन्दारिका — कलहंस की प्रेमिका।
१०. प्रतीहारी — अन्तःपुर की द्वारपालिका।

मालतीमाधवम्

प्रथमोऽङ्कः

चूडापीडकपालसङ्कुलगलन्मन्दाकिनीवारयो
विद्युत्प्रायललाटलोचनशिखिज्वालाविमिश्रत्विषः।
पान्तु त्वामकठोरकेतकशिखासन्दिग्धमुग्धेन्दवो
भूतेशस्य भुजङ्गवल्लिवलयस्रङ्नद्धजूटा जटाः॥१॥

एतच्च—

सानन्दं नन्दिहस्ताहतमुरजरवाहूतकौमारबर्हि-
त्रासान्नासाग्ररन्ध्रं विशति फणिपतौ भोगसङ्कोचभाजि।

मालतीमाधवम्

प्रथम अंक

महादेव जी की ऐसी जटाएँ तुम्हारी रक्षा करें, जो शिर में स्थित मालाओं में विद्यमान नरकपालों में चारों ओर फैले हुए और गिरते हुए गंगाजल से युक्त हैं, बिजली के समान भाल में उपस्थित (तीसरे) नेत्राग्नि की ज्वालाओं से मिश्रित कान्ति के कारण—क्या यह कोमल केतकी के पुष्प का अग्रभाग है—ऐसे सन्देह के विषयीभूत सुन्दर चन्द्रमा से सम्बद्ध हैं, और मण्डलाकार सर्परूपी लताओं की मालाओं से भली भाँति बाँधी गयी हैं॥१॥

यह भी,

शंकर जी के ताण्डव नृत्य में नन्दी के हाथों से बजती हुई पखावज के शब्द से मेघ-गर्जना की भ्रान्ति से आये हुए स्वामि कार्तिकेय के मयूर के संत्रास से अपने शरीर को संकुचित करनेवाले सर्पराज वासुकि के, अपनी रक्षा के लिए, गणेशजी की नासिका (सूँड) के छिद्र में आनन्दपूर्वक घुस जाने पर, उनके कपोलों से उड़ने-

गण्डोड्डीनालिमालामुखरितककुभस्ताण्डवे शूलपाणे-
र्वैनायक्यश्चिरं वो वदनविधुतयः पान्तु चीत्कारवत्यः॥२॥

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः—अलमलम्। उदितभूयिष्ठ एव भगवानशेषभुवनद्वीपदीपः। तदुपतिष्ठे। (प्रणम्य)

कल्याणानां त्वमसि महसां भाजनं विश्वमूर्ते!
धुर्यां लक्ष्मीमिह मयि भृशं धेहि देव! प्रसीद।
यद्यत्पापं प्रतिजहि जगन्नाथ! नम्रस्य तन्मे
भद्रं भद्रं वितर भगवन्भूयसे मङ्गलाय॥३॥

(नेपथ्याभिमुखमवलोक्य) मारिष, सुविहितानि रङ्गमङ्गलानि। सन्निपतितश्च भगवतः कालप्रियनाथस्य यात्राप्रसङ्गेन नानादिगन्तवास्तव्यो जनः। तत्किमित्युदासते भरताः। आदिष्टोऽस्मि विद्वत्परिषदा यथा—अद्य त्वयाऽपूर्व-

---

वाली भ्रमरपंक्तियों से दिशाओं को गुंजा देनेवाले एवं चीत्कार के शब्द से युक्त श्रीगणेश जी के मुख के कम्पन तुम्हारी चिरकाल तक रक्षा करें॥२॥

(नान्दी के अन्त में)

सूत्रधार—बस। बस। समस्त लोकों एवं (जम्बू आदि) द्वीपों के दीपक भगवान सूर्यनारायण बहुत अंशों में उदित हो चुके हैं। इसलिए (उनकी) आराधना करता हूँ। (प्रणाम करके)

हे विश्वमूर्ते! सूर्यदेव! आप मंगलस्वरूप सभी तेजों के पात्र (आधार) हैं। अतः इस संसार में मुझ में (मेरे लिए) सम्पूर्ण सुख-सम्पादन में समर्थ प्रचुर धन-सम्पदा को धारण कराएँ (व्यवस्था कराएँ।) हे देव! आप सुप्रसन्न हों। हे जगन्नाथ! मैं विनत हो रहा हूँ (आप को नमस्कार करता हू)। मेरे भीतर जो भी पाप-दोष है उन्हें (आप) नष्ट करें और हे भगवन्! (मेरे) प्रचुर मंगल के लिए आप कल्याण वितरण करें॥३॥

(नेपथ्य की ओर देखकर) भाई नट! रंगमंच पर मंगलाचरण का विधान भली भाँति सम्पन्न हो चुका है। भगवान् कालप्रियनाथ की यात्रा के शुभ महोत्सव के प्रसंग में विविध प्रान्तों के निवासी लोग यहाँ एकत्र हुए हैं। तब फिर नट (आप) लोग क्यों उदासीन-से हो रहे हैं। विद्वानों की सभा ने मुझे आज्ञा दी है कि किसी अपूर्व नाटक के प्रयोग से हम लोगों का मनोरंजन करो। इसलिए हम इस सभा

वस्तुप्रयोगेण वयं विनोदयितव्या इति। तत्परिषदं निर्दिष्टगुणप्रबन्धेनोपतिष्ठावः।

नटः—(प्रविश्य) भाव, कतमे ते गुणा यानुदाहरन्त्यार्यमिश्रा भगवन्तो भूमिदेवाः।

सूत्रधारः—

भूम्ना रसानां गहनाः प्रयोगाः सौहार्दहृद्यानि विचेष्टितानि।
औद्धत्यमायोजितकामसूत्रं चित्राः कथा वाचि विदग्धता च॥४॥

नटः—भाव! कस्मिन्प्रकरणे।

सूत्रधारः—(विचिन्त्य) स्मृतम्। अस्ति दक्षिणापथे पद्मपुर नाम नगरम्। तत्र ब्राह्मणाः केचित्तैत्तिरीयाः पंक्तिपावनाः काश्यपाः पञ्चाग्नयः सोमपीथिनो धृतव्रता उदुम्बरनामानो ब्रह्मवादिनः प्रतिवसन्ति।

ते श्रोत्रियास्तत्त्वविनिश्चयाय भूरि श्रुतं शाश्वतमाद्रियन्ते।
इष्टाय पूर्ताय च कर्मणेऽर्थान् दारानपत्याय तपोऽर्थमायुः॥५॥

को सन्तुष्ट करने में समर्थ सभी गुणों से युक्त प्रबन्ध (नाटक) उपस्थित करना चाहते हैं।

नट—(प्रवेश करके) महानुभाव! वे कौन से गुण हैं, जिन्हें परम कुलीन एवं प्रभावशाली ब्राह्मणों ने उत्तम बतलाया है।

सूत्रधार—(शृंगार आदि) रसों के प्रचुरप्रयोग से गंभीर अभिनय, सुहृदता से भरी एवं मनोहारिणी (नायक आदि की) चेष्टाएँ, काम-प्रयोग के विधान से (नायक आदि की) प्रसगानुरूप उद्धतता, विचित्र कथा एवं संवाद में चतुरता एवं क्षिप्रता (ये नाटक के उत्तम गुण माने जाते है।)॥४॥

नट—महानुभाव! तो किस प्रकरण में (इतने गुण है।)

सूत्रधार—(विचार कर) स्मरण हुआ। दक्षिण देश में पद्मपुर नाम का नगर है। वहाँ कृष्ण यजुर्वेदी तैत्तिरीय शाखा के काश्यप गोत्रीय पंक्तिपावन, पंचाग्निपूजक, सोमरस पान करनेवाले, विविध व्रतों के आराधक, उदुम्बर नाम से सुप्रसिद्ध ब्रह्मतत्त्व को जाननेवाले ब्राह्मण निवास करते है।

वे श्रोत्रिय ब्राह्मण तत्त्व के निश्चय करने के लिए अधिक से अधिक शास्त्रों के अध्ययन का, यज्ञादि के अनुष्ठान एवं वापी-कूप-तड़ागादि के निर्माण के लिए धन-सम्पदा का, सन्तान की प्राप्ति के लिए पत्नी का और तपस्या के लिए (दीर्घ) आयु का आदर करते है॥५॥

तदामुष्यायणस्य तत्रभवतो भट्टगोपालस्य पौत्रः पवित्रकीर्तेर्नीलकण्ठस्य पुत्रः श्रीकण्ठपदलाञ्छनः पदवाक्यप्रमाणज्ञो भवभूतिर्नाम कविर्निसर्गसौहृदेन भरतेषु वर्तमानः स्वकृतिमेवंगुणभूयसीमस्माकं हस्ते समर्पितवान्। यत्र खल्वियं वाचो-युक्तिः।

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां
जानन्ति ते किमपि तान्प्रति नैष यत्नः।
उत्पत्स्यते मम तु कोऽपि समानधर्मा
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी॥६॥

तदुच्यन्तां तत्प्रस्थापनाय सर्वे कुशीलवा यथा—स्वसङ्गीतकप्रयोगे वर्णिका-परिग्रहे च त्वर्यतामिति। कविवर्णनां प्रति तेनैवमुक्तम्।

गुणैः सतां न मम को गुणः प्रख्यापितो भवेत्।
यथार्थनामा भगवान् यस्य ज्ञाननिधिर्गुरुः॥७॥

उस उदार (पवित्र) कुल में जन्मे पूजनीय गोपालभट्ट के पौत्र, पुण्यश्लोक नीलकण्ठ के पुत्र, व्याकरण, मीमांसा और न्याय शास्त्र के विद्वान् 'भवभूति' इस नाम से विख्यात, श्रीकण्ठ नामक कवि ने, जिनका नाट्य वर्ग में स्वाभाविक स्नेह है, उक्त सभी सद्गुणों से अलङ्कृत अपनी कृति को (स्वयम् अभिनय के लिए) हमारे हाथों में समर्पित किया है। अपनी उक्त रचना के सम्बन्ध में उनकी यह उक्ति बहुत प्रसिद्ध है।

जो लोग हमारी इस रचना में अपना अनादर प्रकट करते हैं वे क्या यह जानते हैं कि उनके लिए हमारा यह (रचना-) प्रयास नहीं है। मेरे ही समान गुणों (काव्य-रसों) को जाननेवाला कोई पुरुष उत्पन्न होगा ही, क्योंकि यह काल सीमा रहित है और यह धरती भी बहुत लंबी-चौड़ी है॥५॥

तो फिर उसका अभिनय करने के लिए नटों (पात्रों) को कह दीजिए कि वे अपने संगीत के प्रयोग के लिए तथा वेश-भूषा की तैयारी में शीघ्रता करें। कवि के गुणों के सम्बन्ध में उन्होंने स्वयं ऐसा कहा है—

सज्जनों के गुणों से मेरा (मेरी रचना का) कौन-सा गुण भला प्रख्यापित न होगा, क्योंकि जिसके (मेरे) यथार्थ नामवाले भगवान् ज्ञाननिधि गुरु है॥७॥

अपि च—

यद्वेदाध्ययनं तथोपनिषदां सांख्यस्य योगस्य च
ज्ञानं तत्कथनेन किं न हि ततः कश्चिद् गुणो नाटके।
यत्प्रौढित्वमुदारता च वचसां यच्चार्थतो गौरवं
तच्चेदस्ति ततस्तदेव गमकं पाण्डित्यवैदग्ध्ययोः ॥८॥

नटः—तावद्भूमिकास्तथैव भावेन सर्वे वर्ग्याः पाठिताः। सौगतजरत्प्रव्राजिकायाः कामन्दक्यास्तु प्रथमां भूमिकां भाव एव एवाधीते। तदन्तेवासिन्यास्त्वहमवलोकितायाः।

सूत्रधारः—ततः किम्?

नटः—प्रकरणनायकस्य मालतीवल्लभस्य माधवस्य वर्णिकापरिग्रहः कथम्।

सूत्रधारः—मकरन्दकलहंसयोः प्रवेशावसरे तत्सुविहितम्।

नटः—तेन हि तत्प्रबन्धप्रयोगादेवात्रभवतः सामाजिकानुपास्महे।

सूत्रधारः—बाढम्। एषोऽस्मि कामन्दकी संवृत्तः।

और भी, जो वेदों का अध्ययन एवं उपनिषद्, सांख्य और योग का ज्ञान है, उनके कथन (अथवा उपदेशादि) का क्या प्रयोजन है, क्योंकि उनके द्वारा नाटक में कोई गुण (विशेषता) नहीं आता। वाक्यों में जो उदारता एवं प्रगल्भता है, (उनके) अर्थ में जो गुरुता है, यदि यह सब है तो वही (नाटककार के) पाण्डित्य एवं निपुणता का सूचक है॥८॥

नट—महानुभाव ने सम्पूर्ण रूप से अभिनय-कार्य सभी लोगों को भलीभांति पढ़ा दिया है। बौद्ध सन्यासिनी वृद्धा कामन्दकी का अभिनय आप ही स्वयं तैयार कर चुके हैं। मैं तो उनकी शिष्या अवलोकिता का अभिनय करूंगा।

सूत्रधार—अच्छा फिर।

नट—इस नाटक के नायक मालती के प्रियतम माधव का अभिनय कार्य किस प्रकार सम्पन्न होगा?

सूत्रधार—मकरन्द और कलहंस के प्रवेश के अवसर पर उसे ठीक करना समुचित होगा।

नट—तब तो अब रंगमंच पर उपस्थित सम्मान्य सज्जनों के सामने हम लोग सज-धज कर सेवार्थ (मनोरंजकार्थ) उपस्थित हों।

सूत्रधार—बहुत अच्छा! तो यह मैं कामन्दकी बन गया हूँ।

नटः—अहमप्यवलोकिता।

(इति निष्क्रान्तौ)

इति प्रस्तावना

—— ० ——

(परिवृत्य रक्तपटदिशानेपथ्य उभायुपविष्टौ प्रविशतः)

कामन्दकी—वत्से! अवलोकिते!

अवलोकिता—आज्ञापयतु भगवती। (आणवेदु भअवदी)

कामन्दकी—अपि नाम कल्याणिनोर्भूरिवसुदेवरातापत्ययोरनयोर्मालती-माधवयोरभिमतं पाणिग्रहमङ्गलं स्यात्।

(सहर्षं वामाक्षिस्पन्दनं सूचयित्वा)

विपुल्यलेय कल्याणमान्तरज्ञेन चक्षुषा।
स्फुरता वामकेनापि दाक्षिण्यमवलम्ब्यते॥९॥

अवलोकिता—महान्खल्वेष भगवत्याश्चित्तावक्षेपः। आश्चर्यमाश्चर्यम्। यदिदानीं चीरचीवरमात्रपरिच्छदां पिण्डपातमात्रप्राणवृत्तिमपि भगवतीमीदृशे व्यापारेऽस्मदमात्यभूरिवसुर्नियोजयति सम्भिमुत्खण्डितसंसारावग्रहो युष्माभिर-

---

नट—मैं भी अवलोकिता (बन गया हूँ)।

(दोनों निकलते हैं।)

प्रस्तावना समाप्त

—— ० ——

[तदनन्तर रक्त (भगवा) वस्त्र धारण किए कामन्दकी और अवलोकिता बैठी हुई प्रवेश करती (दिखायी पडती)] है।

कामन्दकी—बेटी अवलोकिते!

अवलोकिता—भगवती आज्ञा दे।

कामन्दकी—यदि इन दोनों कल्याणभाजन भूरिवसु (की कन्या) और देवरात की सन्तानों (पुत्र)—मालती और माधव-का परस्पर मांगलिक विवाह कार्य सम्पन्न हो जाता (तो कितना अच्छा होता)।

(प्रसन्नतापूर्वक बाईं आंख का फडकना सूचित करते हुए)

हमारे मन की बातों को जानते हुए जो फडक कर शुभसूचनाएँ दे रहा है—ऐसा यह मेरा वाम (प्रतिकूल या वाम होकर भी) नेत्र दक्षिणता अर्थात् उदारता का अवलंब ले रहा है॥९॥

अवलोकिता—यह तो भगवती के चित्त में बडी चंचलता है। आश्चर्य है, आश्चर्य है। जो इस समय पुराने चीथडे मात्र पहननेवाली, भिक्षा द्वारा प्राप्त अन्न से जीवन यापन करनेवाली भगवती (आप) को भी हमारे अमात्य भूरिवसु

प्यात्मा निक्षिप्यते। (महन्तो क्खु एसो भअवदीए चित्तावक्खेओ। अच्चरिअं अच्चरिअं। जं दाणि चीरचीवरमेत्तपरिच्छदं पिण्डपाअमेत्तपाणउत्ति वि भअवदीं ईरिसेसु आआसेसु अमच्चभूरिवसू णिओएदि। तस्सि उक्खण्डिअसंसारावग्गहो तुम्हेहिं वि अप्पा णिक्खिविअदि।)

कामन्दकी—वत्से, मा मैवम्।

यन्मां विधेयविषये स भवान्नियुङ्क्ते स्नेहस्य तत्फलमसौ प्रणयस्य सारः।
प्राणैस्तपोभिरथवाभिमतं मदीयैः कृत्यं घटेत सुहृदो यदि तत्कृतं स्यात्॥

किं न वेत्सि। यदैव नो विद्यापरिग्रहाय नानादिगन्तवासिसाहचर्यमासीत्तदैवास्मत्सौदामिनीसमक्षमनयोर्भूरिवसुदेवरातयोः प्रवृत्तेयं प्रतिज्ञा अवश्यमावाभ्यामपत्यसम्बन्धः कर्तव्य इति। तदिदानीं विदर्भराजस्य मन्त्रिणा सता देवरातेन माधवं पुत्रमान्वीक्षिकीश्रवणाय कुण्डिनपुरादिमां पद्मावतीं प्रहिण्वता सुविहितम्।

अपत्यसम्बन्धविधिप्रतिज्ञा प्रियस्य नीता सुहृदः स्मृतिं च।
अलोकसामान्यगुणस्तनूजः प्ररोचनार्थं प्रकटीकृतश्च॥११॥

जो इस प्रकार के प्रयास (झंझटी काम) में नियुक्त कर रहे हैं। और आप भी हैं, जो मुक्ति के अवरोधक सांसारिक कार्यों को त्याग कर भी उसमें अपने आप को एकदम से डाल दिया है।

कामन्दकी—बेटी! नहीं, नहीं, ऐसा मत कहो।

आदरणीय (भूरिवसु जी) जो मुझे (मालती और माधव के मांगलिक विवाह) कार्य में नियुक्त करते हैं वह (उनके) स्नेह का फल है और प्रेम का सर्वस्व है, मेरे प्राणों से अथवा मेरी तपस्या से भी यदि मेरे मित्र का कार्य सम्पन्न होता है तो वह एक उत्तम कार्य होता है॥१०॥

क्या तुम नहीं जानती हो, जिस समय विद्या अध्ययन के लिए विविध देशों के निवासी हम लोगों का साहचर्य था उसी समय हमारे और सौदामिनी के सामने इन भूरिवसु और देवरात ने यह प्रतिज्ञा की थी कि—हम दोनों की सन्तानों का परस्पर (विवाह) सम्बन्ध अवश्य होगा। सो अब विदर्भराज के मन्त्रिपद पर नियुक्त देवरात ने अपने पुत्र माधव को न्याय शास्त्र के अध्ययन के लिए कुण्डिनपुर से इस पद्मावती नगरी को भेजकर अच्छा ही किया है। (क्योंकि इस प्रकार उन्होंने)

सन्तानों के पारस्परिक मांगलिक विवाह की प्रतिज्ञा को अपने प्रिय मित्र (भूरिवसु) को स्मरण दिला दिया और अपने अलौकिक गुणों से युक्त पुत्र (माधव) में (विवाह को) अभिरुचि पैदा करने के लिए (उनके निकट) प्रकट भी कर दिया॥११॥

अवलोकिता—किमिति मालतीममात्यो माधवस्यात्मना न प्रतिपादयति। येन चौर्यविवाहे भगवती त्वरयति। (किंति मालदिं अमच्चो माहवस्स अप्पणा ण प्पडिवादेइ। जेण चोरिअविवाहे भअवदी तुवरावेदि।)

कामन्दकी—

तां याचते नरपतेर्नर्मसुहृन्नन्दनो नृपमुखेन।
तत्साक्षात्प्रतिषेधः कोपाय शिवस्त्वयमुपायः॥१२॥

अवलोकिता—आश्चर्यमाश्चर्यम्। न खल्वमात्यो माधवस्य नामापि जानातीति निरपेक्षता लक्ष्यते। (अच्चरिअं अच्चरिअं। ण क्खु अमच्चो माहवस्स णामं वि जाणादित्ति णिरवेक्खदा लक्खिअदि।)

कामन्दकी—वत्से, संवरणं तत्।

विशेषतस्तु बालत्वात्तयोर्विवृतभावयोः।
तेन माधवमालत्योः कार्यः स्वमतिनिह्नवः॥१३॥

अपि च—

अनुरागप्रवादस्तु वत्सयोः सार्वलौकिकः।
श्रेयो ह्यस्माकमेवं हि प्रतार्यौ राजनन्दनौ॥१४॥

अवलोकिता—तब फिर अमात्य भूरिवसु माधव के साथ अपनी कन्या मालती का विवाह स्वयमेव क्यों नहीं कर देते और भगवती (आप) को इस प्रकार के चौर (गुप्त) विवाह के लिए क्यों व्यग्र बना रहे हैं?

कामन्दकी—राजा के अन्तरंग सहचर मित्र नन्दन ने राजा द्वारा ही मालती की याचना है। (ऐसी स्थिति में) उसकी बात का निषेध करना (राजा के) कोप का कारण होगा अतः यह (चौर विवाह का) उपाय कल्याणकारी होगा॥१२॥

अवलोकिता—आश्चर्य है। आश्चर्य है। हमारे अमात्य (भूरिवसु) माधव का नाम भी नहीं जानते—ऐसी निरपेक्षता देखी जा रही है।

कामन्दकी—बेटी! यह सब ढकोसला है।

उन दोनों मालती और माधव के बाल्य काल के कारण, उनके पारस्परिक प्रेम भाव को, अपनी ओर से विशेष रूप से छिपाना (ही) चाहिए॥१३॥

और भी, दोनों बच्चों—मालती और माधव के प्रणय का प्रवाद तो सभी लोग जान गये हैं, अतः हमारा कल्याण तो इसी में है कि राजा और नन्दन-दोनों को प्रवंचित किया जाय॥१४॥

पद्य—

बहिः सर्वाकारप्रगुणरमणीयं व्यवहरन्-
पराभ्यूहस्थानान्यपि तनुतराणि स्थगयति।
जनं विद्वानेकः सकलमतिसन्धाय कपटै-
स्तटस्थः स्वानर्थान्घटयति च मौनं च भजते॥१५॥

अवलोकिता—मयापि युष्मद्वचनासेन तेनोपन्यासेन भूरिवसुमन्दिरासन्नतर-राजमार्गेण माधव. संचार्यते। (मए वि तुम्ह वअणादो तेण तेणोवण्णासेण भूरिवसुमन्दिरासण्णतररामग्गेण माहवो सञ्चारीअदि।)

कामन्दकी—कथितमेव नो मालतीधात्रेय्या लवङ्गिकया।

भूयो भूयः सविधनगरीरथ्यया पर्यटन्तं
दृष्ट्वा दृष्ट्वा भवनवलभीतुङ्गवातायनस्था।
साक्षात्कामं नवमिव रतिर्मालती माधवं यद्-
गाढोत्कण्ठा लुलितलुलितैरङ्गकैस्ताम्यतीति॥१६॥

अवलोकिता—बाढम्। ततस्तयोद्वेगविनोदनं माधवप्रतिच्छन्दकमभिलिखितं

देखो, जो अद्वितीय बुद्धिमान होता है वह बाहर से तो सभी प्रकार की अनुकूलताओं से युक्त (वेश भूषा और भाषा का) व्यवहार करते हुए विरोधियों के अत्यन्त सूक्ष्म सन्देह-स्थलों को भी छिपा लेता है। स्वयम् उदासीन रह कर कपट-व्यवहार द्वारा सभी लोगों को प्रवंचित कर के अपने प्रयोजनों को सिद्ध कर लेता है और साथ ही मौन भी बना रहता है॥१५॥

अवलोकिता—मैं भी आप के कहने से किसी न किसी बहाने से भूरिवसु के भवन के अति समीप वाले राजमार्ग पर माधव को आने जाने की प्रेरणा करती रहती हूं।

कामन्दकी—मालती की धाय की जो लड़की लवंगिका नाम की है, उसने (तभी) मुझसे कहा (भी) है—

जिस प्रकार रति अपने समक्ष नूतन कामदेव को देखकर उत्कण्ठित होती है उसी प्रकार मालती, भवन की छत के ऊँचे झरोखे पर बैठकर अपने भवन के समीपवर्ती राज-पथ पर बारम्बार आते जाते हुए माधव को देख-देखकर अत्यन्त उत्कण्ठित हो कर (कामवेदना के कारण) अति कम्पित अंगों से सन्ताप का अनुभव करती है॥१६॥

अवलोकिता—ठीक है। इसी कारण उसने अपने उद्वेग को दूर करने एवं

लवङ्गिकया मन्दारिकाहस्तेऽद्य निक्षिप्तं तावत्। (बाढम्। तदो ताए उव्वेअविणोअणो माहवपडिच्छन्दअं अभिलिहिअं लवङ्गिआए मन्दारिआहत्थे अज्ज णिक्खित्तं दाव।)

कामन्दकी—(विचिन्त्य) सुविहितं लवङ्गिकया। माधवानुचरः कलहंसो नाम विहारदासीं मन्दारिकां कामयते। तदनेन तीर्थेन तत्प्रतिच्छन्दकमुपोद्धाताय माधवान्तिकमुपेयादित्यभिप्रायः।

अवलोकिता—माधवोऽपि कौतूहलमुत्पाद्य मया प्रवृत्तमदनमहोत्सवं मदनोद्यानं प्रभातेऽनुप्रेषितः। तत्र किल मालती गमिष्यति। ततोऽन्योन्यदर्शनं भविष्यतीति। (माहवो वि कोऊहलं उप्पादिअ मए पउत्तमअणमहूसवं मअणुज्जाणं पहादे अणुप्पेसिदो। तत्थ किल मालदी गमिस्सदि। तदो अण्णोण्णदंसणं होदित्ति)

कामन्दकी—साधु वत्से, साधु। अनेन मत्प्रियाभियोगेन स्मारयसि मम पूर्वशिष्यां सौदामिनीम्।

अवलोकिता—भगवति, सेदानीं सौदामिनी समासादिताश्चर्यमन्त्रसिद्धिप्रभावा श्रीपर्वते कापालिकव्रतं धारयति। (भअवदि, सा दाणिं सोदामिणी समासादिअअच्चरिअमन्तसिद्धिप्पहावा सिरिपव्वदे कावालिअव्वदं धारेदि)

मनोविनोद के लिए माधव का चित्र बनाया था, जिसे लवंगिका ने आज मन्दारिका के हाथ में दे दिया है।

कामन्दकी—(सोचकर) लवंगिका ने बहुत सुन्दर किया। माधव का कलहंस नामक अनुचर विहार (बौद्ध विहार) की दासी मन्दारिका को चाहता है। तो इस उपाय द्वारा वह चित्र (हम लोगों की) अभिलाष-सिद्धि के लिए माधव के समीप पहुंचेगा—यही (लवंगिका का) तात्पर्य है।

अवलोकिता—होनेवाले मदन-महोत्सव को (अथवा मालती को) देखने का अतीव कौतूहल उत्पन्न कर मैंने माधव को भी आज प्रातःकाल मदनोद्यान में भेजा है। मालती तो वहाँ जायगी ही तब फिर वहाँ वे एक-दूसरे को देखेंगे ही।

कामन्दकी—वाह बेटी! बहुत सुन्दर। इस प्रकार हमारे कार्य को सन्तोषजनक ढंग से पूरा करके तुमने हमारी पूर्व शिष्या सौदामिनी का स्मरण करा दिया है।

अवलोकिता—भगवति! वह सौदामिनी तो इस समय आश्चर्यजनक मंत्र-सिद्धि के प्रभाव से श्रीपर्वत में कापालिक का व्रत धारण किए हुए है।

कामन्दकी—कुतः पुनरियं वार्ता।

अवलोकिता—अस्त्यन नगर्यां महाश्मशानप्रदेशे कराला नाम चामुण्डा। (अत्थि एत्थ णअरीए महामसाणप्पदेसे कराला नाम चामुण्डा)

कामन्दकी—अस्ति। या किल विविधजीवोपहारप्रियेति साहसिकानां प्रवादः।

अवलोकिता—तस्मिन्खलु श्रीपर्वतादागतस्येतो नातिदूरश्मशानवासिनः साधकस्य मुण्डधारिणोऽघोरघण्टनामधेयस्यान्तेवासिनी महाप्रभावा कपालकुण्डला नामानुसन्ध्यमागच्छति। तत इयं प्रवृत्तिः। (तस्सिं क्खु सिरिपव्वदादो आअदस्स इदो णादिदूरमसाणवासिणो साधअस्स मुण्डधारिणो अघोरघण्टणामहेअस्स अन्तेवासिणी महाप्पहावा कवालकुण्डला णाम अणुसंझं आअच्छइ। तदो इअं पउत्ति)

कामन्दकी—सर्वं हि सौदामिन्या संभाव्यते।

अवलोकिता—अलं तावदेतेन। भगवति, सोऽपि पार्श्वचरो माधवस्य बालमित्रं मकरन्दो नन्दनस्य भगिनी मदयन्तिका यदि समुद्वहति तदपि माधवस्य द्वितीय प्रियं भवति। (अलं दाव एदिणा। भअवदि, सो वि पासअरो माहवस्स बालमित्तं मअरन्दो णन्दणस्स भइणिं मदअन्तिअं जइ समुव्वहइ तं वि माहवस्स दुइअं पिअं होदि)

कामन्दकी—नियुक्तैव तत्र मया प्रियसखी बुद्धरक्षिता।

कामन्दकी—यह बात तुम्हें कहाँ से ज्ञात हुई है?

अवलोकिता—इस (पद्मावती) नगरी में जो महान् श्मशान-स्थल है वहाँ कराला नाम की चामुण्डा देवी है।

कामन्दकी—हाँ है, जो कि अनेक प्रकार के प्राणियों के बलिदान को पसन्द करती है—जैसा कि (नरबलि आदि देने वाले) दुष्कर्मी लोग कहा करते हैं।

अवलोकिता—वहीं थोड़ी दूर पर अवस्थित श्मशानभूमि में कहीं पर श्रीपर्वत से आये हुए एक मुण्डमाला धारण करनेवाले अघोरघण्ट नामक साधक हैं, जिनकी महाप्रभावशालिनी कपालकुण्डला नाम की एक शिष्या है, जो प्रत्येक सन्ध्या को (वहाँ) आती है। उसी से यह खबर मिली है।

कामन्दकी—सौदामिनी से सब प्रकार की संभावनाएँ की जा सकती हैं।

अवलोकिता—इस बात को रहने दीजिए। भगवति! यदि माधव के बालसखा मकरन्द का प्रणय-सम्बन्ध नन्दन की भगिनी मदयन्तिका से हो जाता तो यह भी माधव का द्वितीय प्रियकार्य होता।

कामन्दकी—मैं इस सम्बन्ध में अपनी प्रिय सखी बुद्धरक्षिता को नियुक्त कर ही चुकी हूँ।

अवलोकिता—सुविहितं भगवत्या (सुविहिदं भअवदीए)

कामन्दकी—तदुत्तिष्ठ। माधवप्रवृत्तिमुपलभ्य मालतीमेव पश्यावः।

(इत्युत्तिष्ठतः)

कामन्दकी—(विचिन्त्य) अत्युदारप्रकृतिर्मालती नाम। निपुणं निसृष्टार्थदूतीकल्पस्तत्रावधातव्यः। सर्वथा—

शरज्ज्योत्स्ना कान्तं कुमुदमिव तं नन्दयतु सा
सुजातं कल्याणी भवतु कृतकृत्यः स च युवा।
गरीयानन्योन्यप्रगुणगुणनिर्माणनिपुणो
विधातुर्व्यापारः फलतु च मनोज्ञश्च भवतु॥१७॥

(इति निष्क्रान्ते)

मिश्रविष्कम्भः।

(ततः प्रविशति गृहीतचित्रफलकोपकरणः कलहंसः)

कलहंसः—सर्वेदानीं तुलितमकरध्वजावलेपरूपविभ्रमाक्षिप्तमालतीहृदयमाहात्म्यं नाथं माधवं पश्यामि। परिश्रान्तोऽस्मि (परिक्रम्य) यावदिहोद्याने

अवलोकिता—भगवती ने सुन्दर किया है।

कामन्दकी—तो उठो! माधव का समाचार जानकर मालती को ही देखें।

(ऐसा कहकर दोनों उठती है।)

कामन्दकी—(विचार कर) मालती अतीव उदार (गंभीर) स्वभाव की है, इसलिए बहुत समझ बूझकर बड़ी निपुणता से दूती का काम करना होगा। सब प्रकार से—

शरत्काल की चांदनी जिस प्रकार मनोहर कुमुद को सुप्रसन्न करती है, उसी प्रकार कल्याणी मालती सत्कुलोत्पन्न प्रियतम माधव को सब प्रकार से आनन्दित करे और वह युवा (माधव) भी मालती को प्राप्त कर कृतकृत्य बने। इस प्रकार एक दूसरे के अनुकूल गुणों का निर्माण करते हुए विधाता के व्यापार को सफलता प्राप्त हो और जो सब के लिए मनोहर हो॥१७॥

(ऐसा कहकर दोनों निकलती है।)

मिश्र विष्कम्भक समाप्त

(तदनन्तर उपहार के रूप में प्राप्त चित्र फलक लिए हुए कलहंस प्रवेश करता है।)

कलहंस—कामदेव के समान सौन्दर्य-गर्व एवं विभ्रम-विलास द्वारा मालती के

मुहूर्तं विश्रम्य मकरन्दसहचरं नाथं माधवं प्रेक्षिष्ये। (प्रविश्य उपविशति)। (कहिं दाणिं तुलिअअरद्धआवलेवस्स्वविब्भामाविलत्तमालदीहिअआमाहप्पं णाहं माहवं पेक्खिस्सं। परिस्सन्तो म्हि। जाव इध उज्जाणे मुहुत्तं विस्समिअ मअरन्दसहअरं णाहं माहवं पेक्खिस्स)

(ततः प्रविशति मकरन्दः)

मकरन्दः—कथितमवलोकितया मदनोद्यानं गतो माधव इति। भवतु। गच्छामि। (परिक्रम्यावलोक्य च) दिष्ट्या वयस्य इत एवाभिवर्तते। (निरूप्य) अस्य तु—

गमनमलसं शून्या दृष्टिः शरीरमसौष्ठवं
श्वसितमधिकं किं न्वेतत्स्यात्किमन्यदतोऽथवा।
भ्रमति भुवने कन्दर्पाज्ञा विकारि च यौवनं
ललितमधुरास्ते ते भावाः क्षिपन्ति च धीरताम्॥१८॥

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टरूपो माधवः)

माधवः (स्वगतम्)—
तामिन्दुसुन्दरमुखीं सुचिरं विभाव्य
चेतः कथंकथमपि व्यपवर्तते मे।

हृदय की गंभीरता को दूर करनेवाले अपने स्वामी माधव को मैं कहाँ देख सकूंगा। बहुत थक गया हूँ। (चारों ओर घूम कर) तब तक इस उद्यान में कुछ समय तक विश्राम कर मकरन्द के साथ अपने स्वामी माधव को देखूंगा। (प्रवेश करके बैठता है।)

(तदनन्तर मकरन्द प्रवेश करता है।)

मकरन्द—अवलोकिता ने कहा है कि माधव मदनोद्यान में गये हैं। जो हाँ, जाता हूं। (कुछ दूर जा कर फिर देखकर) सौभाग्य से हमारे मित्र तो इधर ही चले आ रहे हैं। (देखकर) इनका तो—

हमारे मित्र का गमन आलस्ययुक्त है, दृष्टि सूनी-सूनी-सी है, शरीर सुन्दर नहीं दिखायी पड़ रहा है, श्वास की गति तेज चल रही है—यह सब क्या है? अथवा इसके अतिरिक्त और होगा ही क्या? समस्त संसार में कामदेव की आज्ञा विचरण कर रही है। युवावस्था तो विकार युक्त होती ही है। सुन्दर और प्रिय वे वे (चन्द्रमा और चन्दनादि) पदार्थ धैर्य को दूर किए दे रहे हैं॥१७॥

(तदनन्तर निर्देश के अनुसार रूप धारण किये हुए माधव प्रवेश करता है।)

माधव—(अपने आप) चन्द्रमा के समान मनोहर मुख वाली (मालती) का बहुत समय तक चिन्ता करके मेरा चित्त मन्द विवेक युक्त होकर, लज्जा को जीत-

लज्जां विजित्य विनयं विनिवार्य धैर्य-
मुन्मथ्य मन्थरविवेकमकाण्ड एव ॥१९॥

आश्चर्यम्।

यद्विस्मयस्तिमितमस्तमितान्यभाव-
मानन्दमन्दममृतप्लवनादिवासीत्।
तत्सन्निधौ तदधुना हृदयं मदीय-
मङ्गारचुम्बितमिव व्यथमानमास्ते ॥२०॥

मकरन्दः—(उपसृत्य) सखे माधव! इत इतो ललाटन्तपस्तपति घर्मांशुः। तदस्मिन्नुद्याने मुहूर्तमुपविशावः। (उभौ परिक्रामतः)

कलहंसः—कथं मकरन्दसहचर इदमेव बालोद्यानमलङ्करोति माधवः। तद्दर्शयामि मदनवेदनाखिद्यमानमालतीलोचनसुखावहमात्मनोऽस्य प्रतिच्छन्दकम्। अथवा विश्रामसौख्यं तावदनुभवतु। (कहं मअरन्दसहअरो इमं एव्व बालुज्जाणं अलंकरेदि माहवो। ता दंसेमि मअणवेअणाखिज्जमाणमालदीलोअणसुहावहं अत्तणो से पडिच्छन्दअं। अहवा विस्सामसोक्खं दाव अणुहोदु)

कर शिक्षा के बन्धनरूप विनय को छिन्न-भिन्न करके एवं धैर्य को नष्ट करके अतीव कष्ट सहन करके किसी न किसी प्रकार से वापस लौट आया है ॥१९॥

आश्चर्य है—हमारा जो हृदय मालती के समीप विस्मय के कारण निश्चल था, अन्य पदार्थों के सम्बन्ध में भावना शून्य था एवं अमृत में डूबे हुए की भांति अमन्द आनन्द से स्तब्ध के समान था, वही (हृदय) इस समय (प्रिया के समीप में न रहने से) जलते हुए अंगार से स्पर्श किए हुए की भांति पीडा युक्त हो रहा है ॥२०॥

मकरन्द—(निकट आकर) मित्र माधव! इधर तो आ जाओ, इधर। ललाट को तपानेवाले सूर्यनारायण अतीव प्रखर हो रहे हैं। तो इस उद्यान में थोड़ी देर के लिए हम दोनों बैठ जायें।

(दोनों इधर उधर घूमते हैं।)

कलहंस—मकरन्द के साथ माधव क्यों इसी बालोद्यान को सुशोभित कर रहा है। तो काम-पीडा से खिन्न मालती के नेत्रों को सुख देने वाले इनके अपने चित्र को मैं दिखलाता हूं। अथवा कुछ क्षणों तक यह विश्राम का सुख अनुभव करें।

मकरन्दः—तदस्यैव तावदुच्छ्वसितकुसुमकेसरकषायशीतलामोदवासितोद्यानस्य काञ्चनपादस्याधस्तादुपविशावः।

(उभौ तथा कुरुतः)

मकरन्दः—वयस्य माधव! सकलनगराङ्गनाप्रवर्तितमहोत्सवाभिरामकामदेवोद्यानयात्राप्रतिनिवृत्तमन्यादृशमिव भवन्तमवधारयामि। अपि त्वमवतीर्णोऽसि रतिरमणबाणगोचरताम्।

(माधवः सलज्जमधोमुखस्तिष्ठति)

मकरन्दः—(विहस्य) किमवनम्रमुग्धमुखपुण्डरीकः स्थितोऽसि। पश्य

अन्येषु जन्तुषु च भूयस्तमसावृतेषु
विश्वस्य धातरि समः परमेश्वरेऽपि।
सोऽयंप्रसिद्धविभवः खलुचित्तजन्मा
मा लज्जया तव कथंचिदपह्नुतिं भूत् ॥२१॥

माधवः—वयस्य, किं न कथयामि। श्रूयताम्। गतोऽहमवलोकिताजनितकौतुकः कामदेवायतनम्। इतस्ततः परिक्रम्य परिश्रमादुल्लसितमधुरमदिरामोदपरिमलाकृष्टसकलमिलदलिपटलसंकुलाकुलितमुकुलावलीमनोहराभरणस्य—

मकरन्द—तो तब तक उस विकसित चम्पा के वृक्ष के नीचे हम दोनों बैठें, जो खिले हुए पुष्पों के मकरन्द से निकलती हुई कसैली (खुशबूदार) किन्तु शीतल सुगन्ध से यह (सारा का सारा) उद्यान आमोदित हो रहा है।

(दोनों वैसा ही करते हैं।)

मकरन्द—मित्र माधव! समस्त पुरवासिनी सुन्दरियों द्वारा सम्पन्न महोत्सव से अतीव मनोहर उक्त मदनोद्यान की यात्रा से लौटे हुए आप को मैं किसी दूसरी ही अवस्था में पा रहा हूं। क्या आप भी काम-बाण के लक्ष्य बन गये हैं?

(माधव लज्जित होकर नीचे मुख किए हुए बैठता है।)

मकरन्द—(हँसकर) तो क्यों तुम (इस प्रकार) मनोहर मुख-कमल को नीचे किए हुए बैठे हो? देखो तो—

जो मनोभव कामदेव (रजोगुण एवं) तमोगुण से आवृत्त प्राणियों में, और सम्पूर्ण जगत के सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा एवं परमेश्वर तक में भी समान रूप से (विद्यमान) रहता है, उसका ऐश्वर्य एवं पराक्रम सर्वप्रसिद्ध है। अत: इस प्रकार लज्जायुक्त होकर तुम्हें अपनी मनोदशा को छिपाने का प्रयास नहीं करना चाहिए ॥२१॥

माधव—मित्र! भला मैं (तुमसे) क्यों नहीं कहूँगा? सुनो। अवलोकिता द्वारा उत्कण्ठित होकर मैं कामदेव के उस उद्यान में चला गया था। वहाँ इधर

रमणीयाङ्गणभुवो बालबकुलस्यालवालपरिसरे स्थितः। तस्य च यदृच्छया निरन्तरनिपतितानि विकसितानि कुसुमान्यादाय विदग्धरचनामनोहरां स्रजमभिनिर्मातुमारब्धवान्। अनन्तरं च देवस्य सञ्चारिणी मकरकेतनस्य जगद्विजयवैजयन्तिका निर्गत्य गर्भभवनादुज्ज्वलविदग्धमुग्धबालनेपथ्यविरचनाविर्भावितकुमारीभावा महानुभावप्रकृतिरत्युदारपरिजना कापि तत एवागतवती।

सा रामणीयकनिधेरधिदेवता वा
सौन्दर्यसारसमुदायनिकेतनं वा।
तस्याः सखे नियतमिन्दुकलामृणाल-
ज्योत्स्नादि कारणमभून्मदनश्च वेधाः॥२२॥

अथ प्रणयिनीभिरनुचरीभिः कुसुमसंचयावचयलीलाभिलाषवतीभिरभ्यर्थ्यमाना तमेव बकुलपादपोद्देशमागतवती। तस्याश्च कस्मिंश्चिदपि महाभाग-

---

इधर घूमने से परिश्रान्त होकर मैं उसी रमणीय उपवन भूमि में उत्पन्न एक ऐसे मौलसिरी वृक्ष के थाल्हे के समीप सुस्ताने के लिए बैठ गया था, जिसके मदहोश करनेवाली मदिरा के समान फैलती हुई पुष्पों की सुगन्ध चारों दिशाओं में फैल रही थी, और जिससे आकृष्ट होकर असंख्य भ्रमरगण उस मौलसिरी के पुष्पस्तवकों के ऊपर मंडरा रहे थे। वे पुष्पस्तवक उस वृक्ष के मनोहर आभूषण की भाँति उसकी शोभा बहुत बढ़ा रहे थे। वहाँ उस वृक्ष के नीचे अपने आप निरन्तर गिरते हुए पुष्पों को चुनकर मैंने एक माला बनाना आरम्भ कर दिया, जो मेरी कला-निपुणता से गूंथने के कारण बहुत ही मनोहर लग रही थी। तदनन्तर (मैंने देखा कि वहाँ) भगवान् मकरध्वज की विश्वविजयिनी जीती-जागती पताका के समान कोई सुन्दरी मन्दिर से बाहर निकलकर उसी ओर आने लगी, जो श्वेत-शुभ्र मनोहर बालिका के लिए उचित वेश-भूषा बड़ी निपुणता से धारण किए हुए थी, जिससे उसका कौमार्य प्रकट हो रहा था। उसका अत्यन्त धीर-गंभीर स्वभाव परिलक्षित हो रहा था और उदार स्वभाव की परिचारिकाएं उसके साथ थीं।

वह (सुन्दरी) सुन्दरता के आकर की अधिष्ठात्री देवी थी अथवा इस संसार में जो कुछ भी उत्कृष्ट सौन्दर्य है, उसके समुदाय का एक मात्र आधार थी। मित्र! निश्चय ही चन्द्रमा अमृत, कमलनाल एवं चन्द्रिका उस (सुन्दरी) के उपादान कारण हैं और उसके निर्माता (स्वयं) कामदेव रहे हैं॥२२॥

तदनन्तर स्नेह करनेवाली अनुचरियों द्वारा, जो पुष्पों का चयन करने की क्रीडा के लिए अधीर उत्सुक थीं, प्रार्थना किए जाने पर वह सुन्दरी उसी मौलसिरी

धेयजन्मनि बहुदिवसोपचीयमानमिव मन्मथव्यथाविकारमुपलक्षितवानस्मि । यतः—

परिमृदितमृणालीम्लानमङ्गं प्रवृत्तिः
कथमपि परिवारप्रार्थनाभिः क्रियासु ।
कलयति च हिमांशोर्निष्कलङ्कस्य लक्ष्मी-
मभिनवकरिदन्तच्छेदकान्तः कपोलः ॥२३॥

सा मम दर्शनात्प्रभृत्यमृतवर्तिरिव चक्षुषोनिरतिशयमानन्दमुत्पादयन्त्य-यस्कान्तमणिशलाकेव लोहधातुमन्तःकरणमुपसंहृतवती । किं बहुना ।

सन्तापसन्ततिमहाव्यसनाय तस्या-
मासक्तमेतदनपेक्षितहेतु चेतः ।
प्रायः शुभं च विदधात्यशुभं च जन्तोः
सर्वङ्कषा भगवती भवितव्यतैव ॥२४॥

मकरन्दः—स्नेहश्च निमित्तसव्यपेक्षश्चेति विप्रतिषिद्धमेतत् । पश्य—

के वृक्ष की ओर आ गयी। उसे मैंने देखा कि वह किसी महाभाग्यशाली (पुरुष) के लिए चिरकाल से कामदेव की यातना सहन कर रही है। क्योंकि—

(उसके) हाथ आदि अंग मर्दित मृणाल की भांति मलिन हो गये हैं। परिजनों के अनुरोध पर ही वह किसी प्रकार कार्यों में प्रवृत्त होती है। और नये-नये काटे गये हाथी दांत के खण्ड की भांति पीले वर्ण का उसका कपोल कलंकविहीन चन्द्रमा की सुन्दरता को धारण करता है॥२३॥

सो इस प्रकार मेरे दर्शन करने के समय से ही वह अमृत की शलाका की भांति दोनों नेत्रों में अतिशय आनन्द उत्पन्न करती हुई जैसे चुम्बक मणि लौह धातु को अपनी ओर खींचती है वैसे ही मेरे अन्तःकरण को खींच रही है। अधिक क्या कहूं?

मेरा यह चित्त अनवरत विरह के सन्ताप रूपी बड़ी विपत्ति के लिए किसी कारण के बिना ही उस सुन्दरी में आसक्त हो गया है। सब को पीड़ित करनेवाली भगवती (नियति) ही प्रायः प्राणियों के शुभ एवं अशुभ का विधान करती रहती है॥२४॥

मकरन्द—स्नेह किसी कारण की अपेक्षा करता है—यह तो उल्टी बात है।

व्यतिषजति पदार्थानान्तरः कोऽपि हेतु-
र्न खलु बहिरुपाधीन्प्रीतयः संश्रयन्ते।
विकसति हि पतङ्गस्योदये पुण्डरीकं
द्रवति च हिमरश्मावुद्गते चन्द्रकान्तः॥२५॥

ततस्ततः।

माधवः—ततश्च तत्र—

सभ्रूविलासमय सोऽयमितीव नाम
सप्रत्यभिज्ञमिव मामवलोक्य तस्याः।
अन्योन्यमेव चतुरेण सखीजनेन
मुक्तास्तदा स्मितसुधामधुराः कटाक्षाः॥२६॥

मकरन्दः—(स्वगतम्) कथं प्रत्यभिज्ञापि नाम।

माधवः—अथ ताः सलीलमुत्तालकरकमलतालिकातरलवलयावलीकमुत्सृत कलहंसविभ्रमाभिरामचरणसञ्चरणरणरणायमानमञ्जुमञ्जीररणितानुविद्धमेखला-

देखो—अभ्यन्तर में विद्यमान कोई अनिर्वचनीय कारण पदार्थों को एक-दूसरे से मिलाता है। स्नेह किन्हीं बाहरी कारणों की अपेक्षा नहीं रखता। क्योंकि सूर्य के उदित होने पर कमल खिलता है और चन्द्रमा के उदित होने पर चन्द्रकान्त मणि जलस्राव करने लगती है॥२५॥

(हाँ तो) उसके बाद (क्या हुआ) ? उसके बाद।

माधव—उसके बाद तो वहाँ,

उसकी चतुर सखी ने मुझे देखने के अनन्तर हम दोनों के परस्पर के भावों को भली भांति समझकर—यह वही हैं—इस प्रकार की प्रत्यभिज्ञा से अपने मन्दहास्य से युक्त मधुर कटाक्षों को छोड़ा॥२६॥

मकरन्द—(अपने आप) तो क्या प्रत्यभिज्ञा (पहचान) भी हो गयी ?

माधव—इसके बाद तो वे सखियाँ क्रीडा करतीहुई वापस लौटकर—स्वामी की बेटी ! सौभाग्य से हमारी उन्नति हो रही है जो कि यहीं पर किसी व्यक्ति का कोई प्रियतम बैठा हुआ है—इस प्रकार की बातें अपनी अंगुलियों के संकेत से मुझे दिखाते हुए कहने लगी। वे सखियाँ उस समय अपने कर-कमलों से तालियाँ बजाते हुए अपने मनोहर-चंचल कंकणों को झनकार रही थीं। भयभीत कलहंस के समान मनोहर मन्दगति का अनुकरण करती हुई अपने चरणों के संचरण के समय

कलापकिङ्किणीरणरणत्कारमुखरं प्रतिनिवृत्य 'भर्तृदारिके। दिष्ट्या वर्धामहे। यदत्रैव कोऽपि कस्या अपि वल्लभस्तिष्ठति' इति मामङ्गुलीदलविलासेनाख्यातवत्यः।

मकरन्दः—हन्त, महतः प्रथमानुरागस्योद्भेदः।

कलहंसः—अनयोः सरसरमणीयानुबन्धिनी खलु स्त्रीकथा। (एदाणं सरसरमणिज्जाणुबन्धिणी खु इत्थिआकहा)

मकरन्दः—ततस्ततः।

माधवः—

> अत्रान्तरे किमपि वाग्विभयातिवृत्त-
> वैचित्र्यमुल्लसितविभ्रममायताक्ष्याः।
> मुद्रू रिसात्त्विकविकारमपास्तधैर्य-
> माचार्यकं विजयि मान्मथमाविरासीत्॥२७॥

ततश्च—

> स्तिमितविकसितानामुल्लसद्भ्रूलतानां
> मसृणमुकुलितानां प्रान्तविस्तारभाजाम्।

झन-झन शब्द करनेवाले नूपुर के मनोहर शब्दों के साथ करधनी लगे किंकिणी के शब्दों को प्रतिध्वनित कर रही थी।

मकरन्द—(अपने आप) हाँ, तो ऐसा लगता है कि यह अनुराग बहुत पहले से था और यह प्रकाश में आया है।

कलहंस—(सुनकर) यह तो स्त्री सम्बन्धी कोई बातचीत चल रही है, जो बड़ी सरस एवं मनोहर कथनोपकथन से युक्त है।

मकरन्द—तब उसके बाद। उसके बाद।

माधव—इस अवसर पर उस दीर्घनयना सुन्दरी की ऐसी अनिर्वचनीय एवं (सब को) जीतनेवाली कामदेव प्रदत्त विविध प्रकार की शृंगारचेष्टाएँ उपदेशक के रूप में प्रकट हुईं। जिनकी विचित्रता वाणी की शक्ति से परे है। उनके कारण विविध प्रकार के हाव-भाव प्रकट होने लगे, एवं (स्तम्भ स्वेद आदि) प्रचुर सात्त्विक विकार उपस्थित हो गये; जिनसे हमारा धैर्य भी छिन्न-भिन्न हो गया॥२७॥

तदनन्तर, उस सुन्दरी के दोनों नेत्र (हमारी ओर) (किसी क्षण) निश्चल (किसी क्षण) सुप्रसन्न, (किसी क्षण) ऊपर उठनेवाली भौंहों से युक्त, (किसी क्षण) अपाय भाव में विस्तार से युक्त (किसी क्षण) कोमल भाव से अधमुंदे

प्रतिनयननिपाते किञ्चिदाकुञ्चितानां
विविधमहमभूवं पात्रमालोकितानाम् ॥२८॥

ततश्च—

अलसवलितमुग्धस्निग्धनिष्पन्दमन्दै-
रधिकविकसदन्तर्विस्मयस्मेरतारैः ।
हृदयमशरणं मे पक्ष्मलाक्ष्याः कटाक्षै-
रपहृतमपविद्धं पीतमुन्मूलितं च ॥२९॥

अहं तु तस्याः सर्वाकारहृदयङ्गमायाः संभाव्यमानस्नेहरसेन सन्निधिना विधेयीकृतोऽपि पारिप्लवस्वभावमनो निह्नोतुकामः प्रागप्रस्तुतस्य बकुलपुष्पदाम्नो यथाकथञ्चिदवशेषं ग्रथितवानेव। ततो मिलितवेत्रपाणिवर्षवरप्रायपुरुषपरिवारा गजवधूमारुह्य नगरगामिनं मार्गमिन्दुवदनालङ्कृतवती।

यान्त्या मुहुर्वलितकन्धरमाननं त-
दावृत्तवृन्तशतपत्रनिभं वहन्त्या।

(मुकलित) एवं किसी क्षण मेरे नेत्रों के समागम होने पर लज्जा से संकुचित होने लगे और इस प्रकार मैं उसके अवलोकनों का विविध प्रकार का पात्र (आश्रय) बन गया ॥२८॥

उसके अनन्तर—लज्जा के कारण व्यापार-विरत, पुनः देखने की अभिलाषा से तिरछे, मनोहर स्नेहभरे, लक्ष्य के अतिरिक्त कहीं अन्यत्र न जाने वाले, मन्द एवं अतिशय विस्तार को प्राप्त, अन्तःकरण में स्थित आश्चर्य से फड़कती हुई ताराओं से युक्त उस दीर्घ भौंहों वाली सुन्दरी के (मनोहर) कटाक्षों ने मेरे शरण-विहीन हृदय को अपहृत कर लिया। उस पर (क्रूर) आघात किया, उसको पी लिया और उसे निर्मूल बना दिया ॥२९॥

मैं तो सब प्रकार से मनोहर उस सुन्दरी के स्नेह-रस की सूचना देनेवाले सान्निध्य को प्राप्त करने की संभावना से एक बार वशीभूत होकर भी, अपनी चचलता को छिपाने की इच्छा से पहले ही आरम्भ की गयी उस बकुल-पुष्पों की माला के बचे हुए भाग को किसी प्रकार से गूथने में ही लगा रहा। तदनन्तर वहाँ पर एकत्र हाथों में बेत की छडी लिये हुए सैकडों कंचुकियों (नपुंसकों) एवं अन्यान्य सेवक-परिजनों के साथ उस चन्द्रमुखी ने हथिनी पर चढ़कर नगर को जानेवाले राजमार्ग को अलंकृत किया!

उस समय बार बार अपनी ग्रीवा को परिवर्तित करते हुए उस सुन्दरी ने वायु द्वारा इधर-उधर हिलाते हुए वृन्तवाले कमल के समान मनोहर मुख को धारण

दिग्धोऽमृतेन च विषेण च पक्ष्मलाक्ष्या
गाढं निखात इव मे हृदये कटाक्षः ॥३०॥

ततः प्रभृति—

परिच्छेदातीतः सकलवचनानामविषयः
पुनर्जन्मन्यस्मिन्ननुभवपथं यो न गतवान्।
विवेकप्रध्वंसादुपचितमहामोहगहनो
विकारः कोऽप्यन्तर्जडयति च तापंच तनुते ॥३१॥

अपि च—

परिच्छेदव्यक्तिर्न भवति पुरःस्थेऽपि विषये
भवत्यभ्यस्तेऽपि स्मरणमतथाभावविरसम्।
न सन्तापच्छेदो हिमसरसि वा चन्द्रमसि वा
मनो निष्ठाशून्यं भ्रमति च किमप्यालिखति च ॥३२॥

कलहंसः—दृढं खल्वेष कयाप्यपहृतः। अपि नाम मालत्येव सा भवेत्।
(दिढं क्खु एसो कए वि अज्ज अवहरिदो। अवि णाम मालदी एव्व सा हुवे)

करते हुए अपनी सघन भौंहो से युक्त नेत्रों द्वारा अपने अमृत और विष मे बुझे हुए कटाक्षों को मेरे हृदय मे गहराई तक गड़ा जैसा दिया ॥३०॥

तब से लेकर, ऐसा कोई विकार मेरे अन्तःकरण को जड बना रहा है तथा सन्ताप को बढ़ा रहा है, जो निश्चयात्मक ज्ञान को नष्ट करनेवाला है, सभी प्रकार की वाणियों से प्रकट नही किया जा सकता, पुनर्जन्म में और इस जन्म मे भी जिसका अनुभव कभी नही किया गया है, और जो विवेक के विनष्ट होने से बढ़े हुए महामोह से अतीव भयंकर हो गया है ॥३१॥

और भी, (उस विकार के कारण) सामने स्थित वस्तु या विषय में भी निश्चय नहीं कर पाता, बारम्बार के अभ्यस्त पदार्थों में भी दूसरे रूप से अशान्तिदायी स्मरण होता है। अति शीतल सरोवर मे अथवा चन्द्रमा (किरणों से) से भी सन्ताप की निवृत्ति नहीं हो रही है एवं अधीरमन सदैव घूमता-सा रहता है और किसी अनिर्वचनीय पदार्थ का आश्रय लेता है ॥३२॥

कलहंस—किसी सुन्दरी ने इन्हें अत्यन्त दृढ़ता से (अपनी ओर) आकृष्ट कर लिया है। ऐसी मालती ही हो सकती है।

मकरन्दः—(स्वगतम्) अहो अभिषङ्गः। तत्किं निषेधयामि प्रियसुहृदम्। अथवा—

मा मूमुहत्खलु भवन्तमनन्यजन्मा
मा ते मलीमसविकारघना मतिर्भूत्।
इत्यादि नन्विह निरर्थकमेव यस्मिन्-
कामश्च जृम्भितगुणो नवयौवनं च॥३३॥

(प्रकाशम्) वयस्य, अपि विदिते तदन्वयनामनी।

माधवः—श्रूयताम्। अथ तस्याः करेणुकाधिरोहणसमय एव ततः सखीकदम्बकादन्यतमा वारयोषिद्विलम्ब्य कुसुमापचयक्रमेण नेदीयसी भूत्वा प्रणम्य कुसुमापीडव्याजेन मामेवमुक्तवती—'महाभाग! सुश्लिष्टगुणतया रमणीय एव सन्निवेशः। कुतूहलिनी च नो भर्तृदारिकास्मिन्वर्तते। तस्यामभिनवो विचित्रः

मकरन्द—(अपने आप) अतीव अद्भुत आसक्ति देखी जा रही है। तो क्या अपने प्रिय मित्र को रोकूं। अथवा,

कामदेव तुमको मोहित न कर सके और तुम्हारी मति मलिन विकारों से आच्छन्न न हो—इस प्रकार की उपदेश भरी बातें इनके लिए निरर्थक हैं, क्योंकि इन पर कामदेव ने अपने प्रभाव का विस्तार कर लिया है। नवयौवन की अवस्था तो है ही॥३३॥

(प्रकट रूप में) मित्र! क्या तुम्हें उसके वंश और नाम की जानकारी है।

माधव—सुनो! उसके बाद उस सुन्दरी के हथिनी पर सवार होते समय ही, उसके विशाल सखी-समूह में से ही (निकलकर) एक वारांगना विलंब करके फूल तोड़ते-तोड़ते मेरे समीप में आकर और पुष्पों की माला को सिर में यथास्थान धारण करने के बहाने से मुझे प्रणाम कर मुझसे इस प्रकार बोली—महाभाग्यशालिन्! धागे से सुन्दर रूप में गूंथी हुई यह आपकी माला अतीव मनोहारिणी है। इसकी रचना में हमारे स्वामी की कन्या को बडी उत्कण्ठा है, क्योंकि इस प्रकार की पुष्पमाला की रचना में नूतन और विचित्र ढंग अपनाया गया है, (अथवा उनमें आपके प्रति अतीव आसक्ति के कारण कामदेव का व्यापार नूतन और विचित्र हो उठा है।) तो माला-रचना में आपकी जो इस प्रकार की प्रवीणता (अथवा सम्पूर्ण कलाओं के ज्ञान की प्रवीणता) है, वह कृतार्थ हो और रचना की रमणीयता (रचनाचातुरी) भी सफल हो। यह (नूतनपुष्पों से रचित) सरस माला

कुसुमेषुव्यापारः। तद्भवतु कृतार्थता वैदग्ध्यस्य। फलतु निर्माणरमणीयता। समासादयतु सरस एष भर्तृदारिकायाः कण्ठावलम्बनमहार्घताम्' इति।

मकरन्दः—अहो वैदग्ध्यम्।

माधवः—तया मदनुयुक्तयाख्यातम्—'इयममात्यभूरिवसोः प्रसूतिर्मालती नाम। अहं च भर्तृदारिकायाः प्रसादभूमिर्धात्रेयिका लवङ्गिका नाम' इति।

कलहंसः—(सहर्षम्) किं नाम मालतीति। दिष्ट्या विलसितं भगवता देवेन कुसुमायुधेन। जितमस्माभिः। (किं णाम मालदित्ति। दिट्ठिआ विलसिदं भअवदा देवेण कुसुमाउहेण। जिदं अम्हेहिं)

मकरन्दः—(स्वगतम्) अमात्यभूरिवसोरात्मजेत्यपर्याप्तिर्बहुमानस्य। अपि च। मालती मालतीति मोदते भगवती कामन्दकी। तां च राजा नन्दनाय याचत इति किंवदन्ती श्रूयते। (प्रकाशम्)

माधवः—तथा चानुबध्यमानस्तां बकुलमालामात्मनः कण्ठादवतार्य दत्तवान्। असौ पुनरभिनिविष्टया दृशा मालतीमुखावलोकनविहस्ततया विषमर-

---

हमारे स्वामी की कन्या के कण्ठ में विभूषित होकर महान् (अत्यधिक) मूल्य प्राप्त करे।

मकरन्द—अद्भुत चातुरी है।

माधव—मेरे पूछने पर उस (वारांगना) ने बतलाया—यह अमात्य भूरिवसु की कन्या है। इसका नाम मालती है। मैं स्वामी की कन्या की विश्वासपात्र, उसकी धाय की कन्या हूँ और मेरा नाम लवंगिका है।

कलहंस—(हर्ष के साथ) क्या 'मालती' यह नाम है। सौभाग्य की बात है कि भगवान कामदेव ने (दोनों पर समान रूप से) प्रभाव विस्तार किया है। निश्चय ही हम लोगों की विजय है।

मकरन्द—(अपने आप) अमात्य भूरिवसु की कन्या है—इतने से ही आदर की परिसीमा नहीं है। और भी (कारण) है। भगवती कामन्दकी मालती-मालती—ऐसा कहकर प्रसन्न होती हैं। राजा उसे नन्दन के लिए माग रहे हैं—यह भी किंवदन्ती सुनी जा रही है। (प्रकटरूप में) हाँ, तब इसके बाद (क्या हुआ ?)।

माधव—उसके इस प्रकार अनुरोध करने पर मैंने उस बकुल-पुष्पों की माला को अपने कण्ठ से उतारकर उसे दे दिया। उस (लवंगिका) ने भी तात्पर्य भरे नेत्रों से, मेरे मालती के मुख की ओर देखने के कारण व्यग्रचित्त होने से, पूर्व भाग की अपेक्षा पर भाग की रचना के विपरीत हो जाने पर भी उसी माला को अत्यधिक

धि[illegible]भागामपि तामेव मुहुर्मुहुर्बहुमन्यमाना 'महानयं प्रसाद' इति प्रतिगृहीतवती। अनन्तरं च यात्राभङ्गप्रचलितस्य महतः पौरनिगमजनस्य सम्मर्देन तिरोहितायां तस्यामागतोऽस्मि।

मकरन्दः—वयस्य, मालत्या अपि स्नेहदर्शनात्सुश्लिष्टमेतत्। यो हि कपोलपाण्डुतादिचिह्नैः सूचितः प्रागनुरागस्तस्याः कामाभिषङ्गः सोऽपि त्वन्निबन्धन इति व्यक्तमेतत्। एतत्तु न ज्ञायते क्व दृष्टपूर्वस्तया वयस्य इति। न खलु तादृश्यो महाभागधेयजन्मानोऽन्यासक्तचेतसो भूत्वा परत्र चक्षूरागिण्यो भवन्ति।
अपि च—

अन्योन्यसंभिन्नदृशां सखीनां
तस्यास्त्वयि प्रागनुरागचिह्नम्।
कस्यापि कोऽपीति निवेदितं च

माधवः—किं चान्यत्।
मकरन्दः—

धात्रेयिकायाश्चतुरं वचश्च॥३४॥

मान देती हुई—यह आपका महान् अनुग्रह है—ऐसा कहकर ले लिया। उसके बाद उत्सव की समाप्ति हो जाने पर असंख्य पुरवासी लोगों की बड़ी भीड़ के चल पड़ने के कारण मालती जब तिरोहित (मेरी आंखों से ओझल) हो गयी तो मैं (यहां) चला आया हूँ।

मकरन्द—मित्र ! मालती का भी स्नेह देखा गया है—इससे यह घटना अच्छी हुई है। (मालती के) कपोल में जो पाण्डुता आदि के चिह्न दिखायी देते हैं, वह उसके पूर्वानुराग की सूचना है और उससे उसके काम-विकार की प्रवृत्ता ज्ञात होती है। उसके भी कारण आप ही हैं—यह सुस्पष्ट है। किन्तु यह नहीं ज्ञात हुआ कि मित्र ! (आप) को उसने पहले कहां देखा था ? उनके समान महान भाग्यशालिनी कुमारियाँ किसी पुरुष में आसक्त चित्त होकर किसी अन्य पुरुष में नेत्रानुराग दरसाने वाली नहीं होती हैं।

और भी,

सखियों ने एक दूसरे की ओर देखते हुए जो यह बात कही थी कि—इस स्थान पर किसी का कोई प्रियतम बैठा हुआ है—उससे भी आप में उसके (मालती के) पूर्वानुराग का चिह्न मालूम पड़ता है।

माधव—और क्यों ?

मकरन्द—और धाय की पुत्री लवंगिका का श्लेषगर्भित वचन भी तो यही सूचित करता है (कि आपमें मालती का पूर्वानुराग है)॥३४॥

कलहंसः—(उपसृत्य) एतच्च। (एवं अ) (चित्रं दर्शयति)।

(उभौ पश्यतः)

मकरन्दः—कलहंसक, केनेदं माधवस्य रूपमभिलिखितम्।

कलहंसः—येनैवास्य हृदयमपहृतम्। (जेण एव्व से हिअअं अवहरिदं)

मकरन्दः—अपि नाम मालत्या।

कलहंसः—अथ किम्। (अह इं)

माधवः—वयस्य मकरन्द! प्रसन्नप्रायस्ते तर्कः।

मकरन्दः—कुतोऽस्याधिगमस्ते।

कलहंसः—मम तावन्मन्दारिकाहस्तात्। तया अपि लवङ्गिकासकाशात्। (मह दाव मन्दारिआहत्थादो। तए वि लवंगिआसआसादो)

मकरन्दः—कथय किमाह मन्दारिका माधवालेख्यप्रयोजनं मालत्याः।

कलहंसः—उत्कण्ठाविनोदनमिति। (उक्कण्ठाविणोअणं त्ति)

मकरन्दः—वयस्य, समाश्वसिहि।

या कौमुदी नयनयोर्भवतः सुजन्मा
तस्या भवानपि मनोरथबन्धबन्धुः।

कलहंस—(समीप आकर) यह भी।

(चित्र दिखलाता है।)

(दोनों देखते हैं।)

मकरन्द—कलहंस! किसने माधव के इस (सुन्दर) रूप (चित्र) का आलेखन किया है।

कलहंस—जिसने इनके चित्त को चुरा लिया है।

मकरन्द—क्या मालती ने।

कलहंस—और क्या (किसी दूसरे ने)?

माधव—मित्र मकरन्द! तुम्हारा तर्क (अनुमानतः) प्रायः ठीक हो रहा है।

मकरन्द—तुमने इसे कहाँ से प्राप्त किया?

कलहंस—मुझे तो यह मन्दारिका के हाथ से मिला। उसे भी लवंगिका से मिला था।

मकरन्द—माधव का चित्र बनाने में मालती का क्या प्रयोजन मन्दारिका ने बतलाया था।

कलहंस—केवल उत्कण्ठा की निवृत्ति (यही बतलाया था)।

मकरन्द—मित्र! आश्वस्त हों। जो आप के दोनों नेत्रों की चन्द्रिका है, सत्कुलोत्पन्न आप भी उसके चित्त की अत्यासक्ति के आश्रय (प्राणवल्लभ) हैं।

तत्संगमं प्रति सखे! न हि संशयोऽस्ति
यस्मिन्विधिश्च मदनश्च कृताभियोगः॥३५॥

इष्टव्यरूपा च भवतो विकारहेतुरुन्मदयैवालिख्यताम्।

माधवः—यदभिरुचितं वयस्याय। (लिखन्) सखे मकरन्द!

वारंवारं तिरयति दृशावुद्गतो बाष्पपूर-
स्तत्संकल्पोपहितजडिम स्तम्भमभ्येति गात्रम्।
सद्यः स्विद्यन्नयमविरतोत्कम्पलोलाङ्गुलीकः
पाणिर्लेखाविधिषु नितरां वर्तते किं करोमि॥३६॥

तथाप्यवहितोऽस्मि। (चिरादभिलिख्य दर्शयति)

मकरन्दः—(चित्रं निर्वर्ण्य) उपपन्नस्तावदत्रभवतोऽभिषङ्गः। (सकौतुकम्) कथमचिरेणैव निर्माय लिखितः श्लोकः। (वाचयति)

जगति जयिनस्ते ते भावा नवेन्दुकलादयः
प्रकृतिमधुराः सन्त्येवान्ये मनो मदयन्ति ये।

हे मित्र! इसलिए उसके समागम मे कोई सन्देह नही रह गया है, क्योंकि उसमे ब्रह्मा ने और कामदेव ने पहले ही से अपना आग्रह कर रखा है॥३५॥

आपके ऐसे मनोविकार का कारण मालती का सुन्दर रूप भी देखने ही योग्य होगा तो आप भी उसका चित्र इसी पर उतार दें।

माधव—मित्र की जैसी इच्छा। (चित्र बनाते हुए) मित्र मकरन्द!

आँसुओं का प्रवाह उपस्थित होकर बारम्बार हमारे दोनों नेत्रों को ढँक-सा लेता है, जिससे प्रियतमा (मालती) की चिन्ता से इस कार्य मे अक्षम होकर मेरा शरीर स्तब्ध हो जाता है। यह हाथ तत्क्षण पसीना आ जाने से तथा लगातार काँपते रहने के कारण चचल अगुलियो से युक्त हो जाता है, जिससे मैं चित्र बनाने मे असमर्थ हो रहा हू। अत अब क्या करू॥३६॥

फिर भी मैं चित्र बनाने मे सावधानी बरत रहा हूँ।

(बड़ी देर मे चित्र बनाकर दिखलाता है।)

मकरन्द—(चित्र को भलीभाति देखकर) तब तो इसके प्रति तुम्हारी आसक्ति युक्तिसगत है। (कुतूहल के साथ) शीघ्र ही एक श्लोक भी बनाकर किस प्रकार लिख लिया है। (पढ़ता है।)

लोक मे अतिशय प्रसिद्ध नूतन चन्द्रकला आदि पदार्थ विजयशील है, (इसी प्रकार के) सहज सुन्दर और भी पदार्थ हैं, जो मन को सुप्रसन्न कर देते है। किन्तु

मम तु यदियं याता लोके विलोचनचन्द्रिका
नयनविषयं जन्मन्येकः स एव महोत्सवः ॥३७॥

(प्रविश्य)

मन्दारिका—कलहंस कलहंस, चोर, चोर, पदानुसारेण लब्धोऽसि। (सलज्जम्) कथं तावपि महानुभावावत्रैव। (उपसृत्य) प्रणमामि। (कलहंस कलहंस, चोर चोर, पआणुसारेण लद्धोसि। कहं दे वि महाणुहावा एत्थ एव्व। पणमामि)

उभौ—मन्दारिके, इत आगम्यताम्।

मन्दारिका—कलहंसक, उपनय चित्रफलकम्। (कलहंसक, उवणेहि चित्तफलअं)

कलहंसः—गृहाणेदम्। (गिण्ह इमं)

मन्दारिका—केन किं निमित्तं वाऽत्र मालत्यभिलिखिता। (केन किं णिमित्तं वा एत्थ मालदी अहिलिहिदा)

कलहंसः—य एव यन्निमित्तं मालत्या। (जो एव्व जंणिमित्तं मालदीए)

मन्दारिका—(सहर्षम्) दिष्ट्या उपदर्शितफलं विज्ञानं प्रजापतेः। (दिट्ठिआ उवदंसिदफलं विण्णाणं पआवइणो)

मकरन्दः—सखि मन्दारिके, यदत्र वस्तुन्यपि ते वल्लभः कथयति, अपि तत्तथा।

इस संसार मे नयनों के लिए चन्द्रिका के समान जो यह सुन्दरी दृष्टिगोचर हुई है वही मेरे लिए तो इस जन्म मे एक मात्र महोत्सव के समान है ॥३७॥

(प्रवेश करके)

मन्दारिका—कलहंस, कलहंस! चोर, चोर। तुम्हारे पद-चिह्नों का अनुसरण करके मैंने तुम्हें पकड़ पाया है। (लज्जापूर्वक) क्या वे दोनों महानुभाव भी यहीं पर विद्यमान हैं? (समीप आकर) प्रणाम करती हूं।

दोनों (मकरन्द और माधव)—मन्दारिके। यहाँ आ जाओ।

मन्दारिका—कलहंस! चित्रफलक (अलबम) दे दो।

कलहंस—यह लो।

मन्दारिका—किस प्रयोजन से किसने यहाँ मालती का चित्र बनाया है।

कलहंस—मालती ने जिसका, जिस कारण से (बनाया था)।

मन्दारिका—(हर्ष के साथ) सौभाग्य से विधाता की निर्माण-चातुरी फलवती हुई है।

मकरन्द—सखी मन्दारिके! इस सम्बन्ध मे तुम्हारा प्रेमी (कलहंस) जो कुछ कह रहा है, वह क्या उसी प्रकार (सत्य) है?

मन्दारिका—महाभाग, तत्तथा। (महाभाअ, तत्तहा)

मकरन्दः—क्व पुनर्मालती माधवं प्राग्दृष्टवती।

मन्दारिका—लवङ्गिका भणति वातायनगतेति। (लवंगिआ भणादि वादाअणगदेत्ति)

मकरन्दः—नन्वमात्यभवनासन्नरथ्यैव बहुशः संचरावहे। तदुपपन्नमेतत्।

मन्दारिका—अनुमन्यता महाभाग। यावदिदं भगवतो देवस्य मदनस्य सुचरितं प्रियसख्यै लवङ्गिकायै निवेदयिष्यामि। (अणुमण्णादु महाभाओ। जाव एदं भअवदो देवस्स मअणस्स सुचरिअं पिअसहीए लवंगिआए णिवेदइस्सामि)

मकरन्दः—प्राप्तावसरमेतद्भवत्याः।

(उत्थाय परिक्रामतः)

मकरन्दः—वयस्य, मध्याह्नोऽतिवर्तते। तदेहि। संस्त्यायमेव प्रविशाव.।

(उत्थाय परिक्रामतः)

माधवः—एवं हि मन्ये।

घर्माम्भोविसरविवर्तनैरिदानीं
मुग्धाक्ष्याः परिजनवारसुन्दरीणाम्।

मन्दारिका—महाभाग्यशालिन्! वह उसी प्रकार है।

मकरन्द—मालती ने माधव को सब से पहले कहाँ देखा।

मन्दारिका—लवंगिका का कहना है कि (अपने भवन के) झरोखे पर बैठी हुई (मालती ने माधव को) देखा है।

मकरन्द—अमात्य भूरिवसु के भवन के समीपवर्ती मार्ग से ही अधिकतर हम लोग आते-जाते रहे हैं। इसलिए ऐसा सम्भव है।

मन्दारिका—महाभाग! मुझे अनुमति दें कि मैं भगवान कामदेव के इस सदनुष्ठान (प्रेमी तथा प्रेमिका द्वारा बनाये गये एक दूसरे के सुन्दर चित्र) को अपनी प्रियसखी लवंगिका से जाकर निवेदन करूं।

मकरन्द—यह तो तुम्हारा अवसरोचित कर्तव्य है।

(उठकर दोनों घूमते हैं।)

मकरन्द—मित्र! मध्याह्न बीत रहा है। अतः यहाँ आओ। भवन को ही चलें।

(उठकर दोनों जाते हैं।)

माधव—मैं तो ऐसा मानता हूं कि

इस समय मनोहर नेत्रों वाली मालती की परिचारिका वाराङ्गनाओं के कपोलों

तत्प्रार्तविहितविचित्रपत्ररेखा-
वैदग्ध्यं जहति कपोलकुङ्कुमानि ॥३८॥

अपि च—

उन्मीलन्मुकुलकरालकुन्दकोशप्रच्योतद्धनमकरन्दगन्धवन्धो।
तामीषत्प्रचलविलोचनां नताङ्गीमालिङ्गन्पवन मम स्पृशाङ्गमङ्गम् ॥३९॥

मकरन्दः—(स्वगतम्)

अभिहन्ति हन्त कथमेष माधवं सुकुमारकायमनवग्रहः स्मरः।
अचिरेण वैकृतविवर्तदारुणः कलभं कठोर इव कूटपाकलः ॥४०॥

तदत्रभवती कामन्दकी नः शरणम्।

माधवः—(स्वगतम्)

पश्यामि तामित इतः पुरतश्च पश्चा-
दन्तर्बहिः परित एव विवर्तमानाम्।
उद्बुद्धमुग्धकनकाब्जनिभं वहन्ती-
मासक्ततिर्यगपवर्तितदृष्टि वक्त्रम् ॥४१॥

में विद्यमान कुंकुम, पसीने के प्रवाह के फैलजाने से प्रातःकाल में रचित पत्रावली की रचना की निपुणता का त्याग कर रहे हैं ॥३८॥

और भी,

हे वायुदेव ! तुम विकास के लिए उन्मुख मुकुलों से असमान (छोटे-बड़े) कुन्दपुष्पों के स्तबकों (गुच्छों) से स्रवित होने वाले सघन मकरन्द की सुगन्ध को धारण करने वाले हो। (अतः) किंचित् चंचल नेत्रों से युक्त अवनत अंगों वाली उस सुन्दरी का आलिंगन करके मेरे प्रत्येक अंग का स्पर्श करो ॥३९॥

मकरन्द—(अपने आप) वात, पित्त और कफ के विकारों से उत्पन्न सान्निपातिक भीषण एवं कठिन पित्त ज्वर जिस प्रकार गजशावक को अत्यधिक पीड़ित करता है। हाय ! उसी प्रकार अति कठिनाई से निवारण करने योग्य यह काम सुकुमार शरीर वाले माधव को परिपीडित कर रहा है ॥४०॥

अतः भगवती कामन्दकी ही हम लोगों की शरण (रक्षा करने वाली) हैं।

माधव—(अपने आप)

पूर्ण विकसित एवं मनोहर सुवर्णमय कमल के समान अत्यासक्ति से तिरछी चलने वाली दृष्टि से सुन्दर मुखवाली उस सुन्दरी को दाहिनी और बाईं ओर, आगे और पीछे की ओर, भीतर और बाहर की ओर—यही क्यों सभी दिशाओं में थिरकती हुई-सी (विद्यमान) देख रहा हूँ ॥४१॥

(प्रकाशम्) वयस्य, मम हि संप्रति—

प्रसरति परिमायी कोऽप्ययं देहदाह-
स्तिरयति करणानां ग्राहकत्वं प्रमोहः।
रणरणकविवृद्धिं बिभ्रदावर्तमानं
ज्वलति हृदयमन्तस्तन्मयत्वं च धत्ते ॥४२॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे प्रथमोऽङ्कः ॥१॥

(प्रकट रूप में) मित्र! इस अवसर पर तो मेरा—

अतीव कष्ट देने वाला, अनिवर्चनीय, एक प्रकार का शारीरिक सन्ताप क्रमशः बढ़ता जा रहा है। चित्त का मोह इन्द्रियों की अपने-अपने विषयों की ग्रहण-शक्ति को आच्छादित-सा कर रहा है। कामाग्नि से सन्तप्त हृदय उत्कण्ठा अथवा उद्वेग की अधिकता को धारण करते हुए भीतर ही भीतर खूब जल रहा है और उस (मालती) के प्रति तन्मयता धारण कर रहा है॥४२॥

(सब लोग बाहर जाते हैं।)

महाकवि भवभूति रचित मालतीमाधव नाटक में प्रथम अंक समाप्त॥१॥

द्वितीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशतश्चेट्यौ)

एका—सखि, संगीतशालापरिसरेऽवलोकिताद्वितीया भगवती कामन्दकी किमपि मन्त्रयन्त्यासीत्। (हला, संगीतसालापरिसरे अवलोइआदुईआ भअवदी कामन्दई किं पि मन्तअन्ती आसी)

द्वितीया—सखि, तेन किल माधवप्रियवयस्येन मकरन्देन सकलो मदनोद्यान-वृत्तान्तो भगवत्यै निवेदित। ततो भर्तृदारिकां द्रष्टुकामया प्रवृत्तिनिमित्तमवलोकितानुप्रेषिता। मयाऽपि तस्यै कथितं यथा लवङ्गिकाद्वितीया विविक्ते भर्तृदारिका वर्तत इति। (सहि, तेण किल महावप्पिअवअस्सेण मअरन्देण सअलो मअणुज्जाणउत्तन्तो भअवदिए णिवेदिदो। तदो भट्टिदारिअं दट्ठुकामाए पउत्तिणिमित्तं अवलोइदा अनुप्पेसिदा। मए वि ताए कहिदं जह लवंगिआदुईआ विविक्ते भट्टिदारिआ वट्टदित्ति)

प्रथमा—सखि, लवङ्गिका खलु केसरकुसुमान्यवचिनोमीति गता मदनोद्यानं किं साम्प्रतं निवृत्ता। (सहि लवंगिआ क्खु केसरकुसुमाइं अवइणुम्मित्ति गआ मअणुज्जाणं किं संपदं णिउत्ता)

द्वितीय अंक

[तदनन्तर दो दासियाँ प्रवेश करती हैं।]

एक दासी—सखी! संगीत-शाला के निकट अवलोकिता के साथ भगवती कामन्दकी कुछ गुप्त बातें कर रही थी।

दूसरी—सखी! माधव के प्यारे मित्र उस मकरन्द ने मदनोद्यान का सम्पूर्ण वृत्तान्त भगवती को बतला दिया था। तब भगवती ने स्वामी की कन्या को देखने की इच्छा से कि—वह कैसी है और क्या कर रही है—आदि बातों की जानकारी के लिए अवलोकिता को भेजा है। मैंने भी उनसे कह दिया है कि स्वामी की कन्या मालती निर्जन स्थान में लवंगिका के साथ बैठी हुई है।

पहली—सखी लवंगिका तो—बकुल के पुष्पों को चुनूंगी—ऐसा कह कर मदनोद्यान गयी थी तो क्या अब (वहाँ से) वापस आ गयी।

द्वितीया—अथ किम्। ता सत्वापतन्तीमेव हस्ते गृहीत्वाऽपरिजना भर्तृदारिकोपर्यलिन्द समारूढा। (अह इं। त क्खु आपतन्तीं एव्व हत्थे घेत्तूण अपरिअणा भट्टिदारिआ उपरिअलिन्दं समारूढा।)

प्रथमा—नून तस्य महानुभावस्य सकथयात्मान विनोदयति। (णूणं तस्स महाणुहावस्स सकहाए अत्ताण विणोदेइ)

द्वितीया—(निःश्वस्य) कुतः सत्वस्या आश्वासः। एतेनाद्य सविशेषदर्शनेनातिभूमि खलु तस्या अभिनिवेशो गमिष्यति । अन्यच्च । कल्य एव नन्दनस्य कारणान्महाराजो भर्तृदारिका प्रार्थयमानोऽमात्येन विज्ञप्त.। (कुदो क्खु से आस्सासो। एदिणा अज्ज सविसेसदसणेण अदिभूमिं क्खु ताए अहिणिवेसो गमिस्सदि। अण्ण अं। कल्ले एव्व णन्दणस्स कारणादो महाराओ भट्टिदारिअं पत्थअन्तो अमच्चेण विण्णत्तो।)

प्रथम:—किमिति। (किं त्ति)

द्वितीया—प्रभवति निजस्य कन्यकाजनस्य महाराज इति। अत आमरणं खलु मालत्या हृदयशल्य माधवानुराग इति तर्कयामि। (पहवइ णिअस्स कण्णआजणस्स महाराओ त्ति। अदो आमरणं क्खु मालदीए हिअअसल्ल माहवाणुराओ त्ति तक्केमि)

दूसरी—और क्या? उसे आते ही अपने हाथो से पकडकर और अन्यान्य दासियो को मनाकर स्वामी की कन्या भवन के ऊपरी भाग (अटारी) पर चढ़ गयी।

पहली—निश्चय ही उन्ही महानुभाव (माधव) की चर्चा-वार्ता मे वह अपने दिल को बहला रही होगी।

दूसरी—(गहरी सास लेकर) उस (बेचारी) को कहां से धैर्य होगा? आज जो विशेष प्रकार की भेंट हुई है उससे (माधव के प्रति) उसकी प्राप्त करने की अभिलाषा अतीव बढ गयी होगी। और भी बात तो है। आज प्रातःकाल ही अमात्य भूरिवसु ने नन्दन के लिए स्वामी-कन्या (मालती) को मांगने वाले महाराज को सूचित कर दिया है।

पहली—क्या सूचना दी है?

दूसरी—यही कि अपनी कन्या के मामले में महाराज का पूरा अधिकार है। इसलिए माधव के प्रति मालती का अनुराग आजीवन शल्य की भाति कसकता रहेगा—ऐसा मैं सोचती हू।

प्रथमा—अपि नाम भगवत्यत्र किमपि भगवतीत्वं दर्शयिष्यति। (अवि णाम भअवदी एत्थ किं वि भअवदित्तणं दंसइस्सदि।)

द्वितीया—अयि असम्बद्धमनोरथे, एहि। (अइ असंबद्धमणोरहे, एहि)

(इति निष्क्रान्ते)

प्रवेशकः।

—०—

(ततः प्रविशत्युपविष्टा सोत्कण्ठा मालती लवङ्गिका च)

मालती—सखि, ततस्ततः। (सहि, तदो तदो)

लवङ्गिका—ततस्तेन महानुभावेनोपनीतेयं बकुलमाला। (तदो तेण महाणुहावेण उवणीदा इअं उलमाला)। (इत्यर्पयति)

मालती—(मालां गृहीत्वा सहर्षं निर्वर्ण्य) सखि। एकपार्श्वविषमप्रतिबद्धेयं विरचना। (सहि, एक्कपासविसमपडिबद्धा इअ विरअणा)

लवङ्गिका—अत्रारमणीयत्वे त्वमेवापराद्धासि। (एत्थ अरमणिज्जत्तणे तुमं एव्व अवरद्धासि)

मालती—कथमिव। (कहं विअ)

लवङ्गिका—येन स दूर्वाश्यामलाङ्गस्तथा विहस्तीकृतः। (जेण सो दुव्वासामलङ्गो तहा विहत्थीकिदो)

पहली—(किन्तु मुझे तो भरोसा है कि) भगवती कामन्दकी इस मामले में अवश्य ही अपनी कोई महिमा दिखलाएगी।

दूसरी—अरी ऊटपटांग अभिलाषा रखनेवाली! चलो आओ।

(दोनों जाती हैं।)

प्रवेशक समाप्त

—०—

(तदनन्तर उत्कण्ठायुक्त मालती और लवंगिका बैठी हुई दिखाई पड़ती हैं।)

मालती—सखी! फिर इसके बाद?

लवंगिका—तब उन महानुभाव ने यह बकुलमाला मुझे दे दी।

(माला मालती को देती है।)

मालती—(माला लेकर हर्षपूर्वक देखती हुई) सखी! इसकी रचना एक ओर तो बिल्कुल उल्टी है।

लवंगिका—इस असुन्दरता मे आप ही अपराधिनी हैं।

मालती—सो कैसे?

लवंगिका—जो उस दूर्वा के समान श्यामल अंगो वाले को बिना हाथ का (व्याकुल) कर दिया था।

मालती—सखि लवङ्गिके, सर्वथाऽऽश्वासनशीलासि। (सहि लवङ्गिए, सव्वहा आसासणसीलासि)

लवङ्गिका—सखि, अत्र काऽऽश्वासनशीलता। ननु भणामि। सोऽपि प्रियसख्या मन्दमारुतप्रचलितप्रफुल्लपुण्डरीकविभ्रमाभ्यां प्रथमारब्धबकुलावलीविरचनापदेशसंयमनबलात्कारविस्तृताभ्यां लोचनाभ्यां विजृम्भमाणविस्मयस्तिमितदीर्घपर्यन्तपरिस्पन्दनाविलासोल्लसितभ्रूलताविभावितानङ्गशरसरम्भविभ्रमविदग्धमवलोकयन्प्रत्यक्षीकृत एव। (सहि, एत्थ का आसासणसीलदा। णं भणामि। सो वि पिअसहीए मन्दमारुअप्पअलिअप्पफुल्लपुण्डरीअविब्भमेहिं पढमारद्धबउलावलीविरअणाववेसराअमणबलामोडिअवित्थरन्तेहिं लोअणेहिं विअम्भमाणविम्हअत्थिमिददीहपेरन्तपरिअन्तणाविलासुल्लसिअभूलदाविहाविदाणङ्गसरसरम्भविब्भमविअड्ढ ओलोअन्तो पच्चक्खीकिदो एव्व)

मालती—(लवङ्गिकां परिष्वज्य) आम् प्रियसखि! किं तावत्तस्य स्वाभाविका एव ते मुहूर्तसंनिधायिनो जनस्य विप्रलम्भयितृका विलासाः। आहोस्वित्प्रियसखी यथा सम्भावयति। (आम् पिअसहि, किं दाव तस्स साहाविआ एव्व ते मुहुत्तसंणिहाइणो जणस्स विप्पलम्भइत्तआ विलासा, आदु पिअसही जहा संभावेदि)

लवङ्गिका—(विहस्य सासूयमिव) त्वमपि स्वाभावेनैव तस्मिन्नवसरेऽसङ्गीतकं नर्तितासि। (तुमं वि सहावेण एव्व तस्सि अवसरे असंगीदअं णच्चाविदासि)

मालती—सखी लवंगिके! तुम सब प्रकार से धैर्य बधानेवाली हो।

लवंगिका—सखी! इसमें धैर्य बधाने की क्या बात है? अरी! मैं तो कहती हूं। मन्द-मन्द वायु के झोकों से सचालित एवं विकसित कमल के समान मनोहर एवं पहले से आरम्भ बकुलमाला की रचना को समाप्त करने के बहाने अपने मनोविकारों को छिपाने की इच्छा से जबर्दस्ती फैले हुए दोनों नेत्रों से, जब वह तुम्हें देख रहे थे तो प्रियसखी ने स्वयं प्रत्यक्ष देखा होगा कि उस समय उनका विस्मय कितना बढ़ गया था, जिसमें उनके निश्चल एवं दीर्घ भौंहों के कटाक्ष से युक्त नेत्र-ताराएं फड़क रही थीं और उनकी वक्रिम भ्रूलता संकेत कर रही थी कि कामदेव के बाणों का कैसा प्रहार उन पर हुआ है।

मालती—(लवंगिका का आलिंगन करते हुए) हे प्रियसखी! इस प्रकार कुछ क्षण तक विद्यमान उन महानुभाव के युवतियों को धोखा देनेवाले ये मनोविकार क्या स्वाभाविक थे, अथवा जैसा तू अनुमान कर रही है वैसे थे?

लवंगिका—(हँसते हुए कुछ ईर्ष्या से) उस अवसर पर तो तुमको (तुम्हारे) स्वभाव ने विना संगीत के ही नचाया था।

मालती—(सलज्जं विहस्य) हुं, ततस्ततः। (हुं, तदो तदो)

लवङ्गिका—ततः प्रतिनिवर्तमानयात्राजनमङ्कुलेनान्तरिते तस्मिन्मन्दारिकागृहमुपगतास्मि। तस्याश्चित्रफलकं प्रभाते हस्तीकृतमासीत्। (तदो पडिणिउत्तमाणजत्ताजणसंकुलेण अन्तरिदे तस्सि मन्दारिआघरं उवगदम्हि। ताए चित्रफलअं पहादे हत्थीकिदं आसी)

मालती—किंनिमित्तम्। (किंणिमित्तं)

लवङ्गिका—सा खलु माधवानुचरः कलहंसकः कामयते। सा तस्य दर्शयिष्यतीति। ततः प्रियनिवेदिका मन्दारिका संवृत्ता। (तं क्खु माहवाणुअरो कलहंसओ कामेदि। सा तस्स दंसइस्सदित्ति। तदो पिअणिवेदिआ मन्दारिआ संवुत्ता)

मालती—(स्वगतम्। सानन्दम्) नूनं तेनापि कलहंसकेनैतत्प्रतिच्छन्दकमात्मनः प्रभोर्दर्शितं भविष्यति। (प्रकाशम्) सखि, किमिदानीं ते प्रियम्। (णूणं तेण वि कलहंसएण एदं पडिच्छन्दअं अत्तणो पहुणो दंसिदं हुविस्सदि। सहि, किं दाणीं दे पिअं)

लवङ्गिका—एतत्खलु सन्तापितस्य तव सन्तापकारिणो दुर्लभमनोरथावेशदुःसहायासदह्यमानचित्तस्य क्षणमात्रनिर्वापयितृकं तव प्रतिच्छन्दकम्। (इति चित्रं दर्शयति) (एदं क्खु संदाविदस्स तुह सदावआरिणो दुल्लहमणोरहावेसदूसहाआसदज्झन्तचित्तस्स खणमेत्तणिव्वावइत्तअं तुह पडिच्छन्दअं)।

मालती—(लज्जापूर्वक हँसती हुई) हूं। तब फिर।

लवंगिका—तदनन्तर उस महोत्सव से उठे हुए सारे लोग जब वापस जाने लगे तो उनकी भीड़ के भीतर उनके (माधव के) छिप जाने पर मैं मन्दारिका के घर चली गयी। (आज) प्रातःकाल ही मैंने वह चित्रफलक मन्दारिका के हाथ में दिया था।

मालती—किस लिए।

लवंगिका—उस (मन्दारिका) को माधव का सेवक कलहंस बहुत चाहता है। इसलिए वह उसे दिखलाएगी। उसके बाद तो मन्दारिका हमारा प्रिय निवेदन करने वाली ही बन गयी।

मालती—(अपने आप। आनन्दपूर्वक) निश्चय ही उस कलहंस ने वह चित्रफलक अपने स्वामी (माधव) को दिखलाया होगा। (प्रकट रूप में) सखी! अब तुम्हारा प्रिय विषय क्या है?

लवंगिका—यही तुम्हारे न मिलने में सन्तापित (जलाये गये) और तुमको सन्तप्त करने वाले, एवं दुर्लभ मनोरथ के दुःसह आयास से दग्ध चित्त वाले माधव को कुछ क्षणों तक शीतल करने वाला तुम्हारा यह चित्रफलक। (ऐसा कहकर चित्र दिखलाती है।)

मालती—(सहर्षोच्छ्वासं चिरं निर्वर्ण्य) अहो, इदानीमपि हृदयस्य मेऽनाश्वासः। येनेदमप्याश्वासन विप्रलम्भ इति सम्भाव्यते कथमक्षराण्यपि। ('जगति जयिनः' इत्यादि पठति। सानन्दम्) महाभाग! सदृश खलु ते निर्माणस्य वचनमधुरतया। दर्शनं पुनस्तत्कालमनोहरं परिणामदीर्घसन्तापदारुण च। धन्याः खलु ताः स्त्रियो यास्त्वां न प्रेक्षन्ते। प्रेक्ष्यात्मनो हृदयस्य वा प्रभवन्ति। (अम्हो, दाणीं वि हिअअस्स मे अणासासो। जेण एद वि आसासणं विप्पलम्भो त्ति सम्भावीअदि। कहं अक्खराइं वि। महाभाअ, सरिसं क्खु दे णिम्माणस्स वअणमहुरदाए। दसण उण तक्कालमणोहरं परिणामदीहसंदावदारुण अ। धण्णाओ क्खु ताओ इत्थिआओ जाओ तुमं ण पेक्खन्दि। पेक्खिअ अत्तणो हिअअस्स वा पहुवन्दि)

लवङ्गिका—सखि, एवमपि नास्ति ते आश्वासः। (सहि, एव्व वि णत्थि दे आसासो)

मालती—कथमिव। (कहं विअ)

लवङ्गिका—यस्य कारणात्त्वमुत्खण्डितबन्धन कङ्केल्लिपल्लवमिव हृदयं धारयन्ती क्लाम्यन्नवमालिकाकुसुमनिःसहा कुसुमायुधेन परिहीयसे, सोऽपि ज्ञापितो भगवता मन्मथेन सन्तापस्य दुःसहत्वम्। (जस्स करणादो तुमं उक्खण्डिअबन्धणं कङ्केल्लिपल्लवं विअ हिअअं धरेन्दी किलन्दणोमालिआकुसुमणीसहा कुसुमाउहेण परिहिज्जसि, सो वि आणाविदो भअवदा मम्महेण संदावस्स दूसहत्तणम्)

मालती—(हर्ष और उच्छ्वास के साथ बड़ी देर तक ध्यानपूर्वक देखती हुई) अहो! अब भी मेरे हृदय को आश्वासन (धैर्य) नहीं है। क्योंकि यह आश्वासन भी प्रवचना हो सकते हैं। इसमे कुछ अक्षर भी (लिखावट भी) हैं। (जगति जयिनः आदि श्लोक पढ़ती है। फिर आनन्दपूर्वक) महाभाग्यशालिन्! आपकी जैसी (मनोहर) आकृति है वैसी ही वाणी की मधुरता भी है। आपका यह दर्शन भी उस समय तो मनोहर था किन्तु परिणाम उसका दीर्घकाल व्यापी सन्ताप से दारुण है। वे सुन्दरियां धन्य हैं जो तुम्हें नहीं देखती हैं। अथवा जो तुम्हें देखकर भी अपने को और हृदय को वश मे रखती है।

लवंगिका—सखि! इतना होने पर भी क्या तुम्हें आश्वासन नहीं है।

मालती—कैसे हो?

लवंगिका—जिसके कारण तुम उच्छिन्न मूलवाले अशोक के पल्लव के समान हृदय को धारण करती हुई, मुरझाई हुई नवमल्लिका के पुष्प के समान अति सुकुमार होते हुए भी कामदेव से क्षीण कर दी गयी हो, उसी प्रकार उन्हें (माधव) भी भगवान् कामदेव ने सन्ताप की दुःसहता का ज्ञान करा दिया है।

मालती—सखि, कुशलमिदानी तस्य महाप्रभावस्य भवतु। मम पुनः सुदुर्लभ आश्वासः। (सास्रम् संस्कृतमाश्रित्य) (सहि, कुसलं दाणीं तस्स महाप्पहावस्स होदु। मह उण सुदुल्लहो आसासो)।

मनोरोगस्तीव्रो विषमिव विसर्पत्यविरतं
प्रमाथी निर्धूमो ज्वलति विधुतः पावक इव।
हिनस्ति प्रत्यङ्गं ज्वर इव गरीयानित इतो
न मां त्रातुं तातः प्रभवति न चाम्बा न भवती॥१॥

लवङ्गिका—एवमेतत्। प्रत्यक्षसौख्यदायिनः परोक्षदुःखदुःसहाः सज्जनसमागमा भवन्ति। अपि च प्रियसखि! यस्य वातायनान्तरमुहूर्त्तदर्शनेनापि सुसमिद्धहुतवहायमानपूर्णचन्द्रोदया निष्करुणकामव्यापारसंशयितजीविता ते शरीरावस्था, तस्यैव साम्प्रतं सविशेषदर्शनादद्य सन्तप्यस इति किमत्र भणितव्यम्। तदत्र प्रियसखि! श्लाघनीयं दुर्लभमनोरथफलं जीवलोकस्य यद्गुरुकानुरागसदृशो महाभागवल्लभसमागम इत्येतावज्जानीमः। (एव्वं एदं। पच्चक्खसोक्खदाइणो परोक्खदुक्खदूसहा सज्जणसमाअमा होन्ति। अवि अ पिअसहि, जस्स वादाअणन्दरमुहुत्तदंसणेण वि सुसमिद्धहुदवहाअन्तपुण्णचन्दोदया णिक्करुणकामव्वार-संसइदजीविदा दे सरीरावत्था, तस्स एव्व संपदं सविसेसदसणादो अज्ज संतप्पसि त्ति किं एत्थ भणिदव्वम्। ता एत्थ पिअसहि, सलाहणिज्ज दुल्लहमणोरहफलं

मालती—सखी! उन महानुभाव का मंगल हो। किन्तु मुझे तो आश्वासन दुर्लभ है। (आंखो मे आंसू भर कर। संस्कृत भाषा का सहारा लेकर)

तीव्र एवं अतीव अशान्ति देने वाली मन की पीडा विष की भांति निरन्तर फैलती जा रही है। धूआ से रहित वायु द्वारा विकम्पित अग्नि की ज्वाला की तरह जल रही है। गुरुतर ज्वर के समान प्रत्येक अंग को भीतर और बाहर से पीडित कर रही है। (ऐसी स्थिति मे) मेरी रक्षा करने में न पिता जी समर्थ हैं, न माता जी समर्थ हैं और न आप ही समर्थ हैं॥१॥

लवंगिका—ऐसा ही होगा। सत्पुरुषो के समागम प्रत्यक्ष मे सुखदायी और परोक्ष में दुःखदायी होने के कारण दुःसह होते हैं। और भी हे प्रियसखी! जिसको झरोखे के भीतर से कुछ ही क्षणो तक देखने मात्र से भी तुम्हारे शरीर की अवस्था ऐसी बन गयी है कि पूर्णचन्द्रमा का उदय भी अतीव जलते हुए अग्नि की भांति जलाने वाला मालूम पड रहा है और निर्दय काम के व्यापार के कारण जीवन भी संशययुक्त हो गया है सो उसी व्यक्ति के इस समय विशेष दर्शन करने से तुम इस प्रकार सन्तप्त हो रही हो तो इस विषय मे क्या कहा जाय? हे प्रिय सखी!

जीअलोअस्स जं गुरुआणुराअसरिसो महाभाअवल्लहसमाअमो त्ति एत्तिअं जाणीमो।)

मालती—सखि, दयितमालतीजीविते, साहसोपन्यासिनि, अपेहि। (सास्रम्) अथवा। अहमेव वारवार विलोकयन्ती पलायमानप्रतिष्ठापितधीरत्वावष्टम्भेनात्मनो हृदयेन दूर विलीयमानलज्जत्वेन दुर्विनयलघ्व्यत्रापराध्यामि। तथापि प्रियसखि। (संस्कृतमाश्रित्य) (सहि, दइदमालदीजीविदे, साहसोवण्णासिणि, अवेहि। अहवा। अह एव्व वारवार विलोअअन्ती पलाअंतपडिठाविदधीरत्तणावट्ठम्भेण अत्तणो हिअएण दूरं विलीअन्तलज्जत्तेण दुव्विणअलहुआ एत्थ अवरज्झम्मि। तहावि पिअसहि।)

ज्वलतु गगने रात्रौ रात्रावखण्डकलः शशी
दहतु मदनः किं वा मृत्योः परेण विधास्यतः।
मम तु दयितः श्लाघ्यस्तातो जनन्यमलान्वया
कुलममलिनं न त्वेवायं जनो न च जीवितम्॥२॥

इसलिए अति गंभीर अनुराग के उपयुक्त भाग्यशाली प्रियतम का सम्मिलन इस जीव लोक की दुर्लभ कामना का आदरणीय परिणाम होता है—हम इतना जानती हैं।

मालती—सखी! मालती का जीवन तुम्हें प्रिय है। तुम साहस भरे कार्य करने का उपदेश करती हो। (अत.) तुम यहाँ से दूर जाओ अर्थात् हट जाओ। (आसू बहाते हुए) अथवा, मैं ही उनको बारम्बार देखती हुई अपने ही हृदय द्वारा अपराधिनी बनी हू जो कि पहले भागते हुए और बाद मे धैर्य्य धारण करने से स्थिर हृदयवाली मैं निर्लज्जता एव अविनयशीलता के कारण लघुता को प्राप्त हुई हूँ। फिर भी हे प्रियसखी! (संस्कृत भाषा का आश्रय लेकर)

प्रत्येक रात्रि मे आकाश मे अपनी सम्पूर्ण कलाओ से युक्त होकर चन्द्रमा प्रज्ज्वलित होते रहें। कामदेव जलाते रहे। ये दोनो मृत्यु से बढकर हमारा और अधिक क्या बिगाड सकते हैं। मेरे पिता जी प्रिय और प्रशसनीय हैं, माता उच्चकुल मे उत्पन्न और प्रिय हैं। मेरा वश भी निष्कलक और प्रिय है, किन्तु वह व्यक्ति (माधव) और मेरा जीवन ये दोनो प्रिय नही है। (तात्पर्य यह है कि मैं अपने माता-पिता एवं कुल की मर्यादा की रक्षा करूगी। अपने जीवन को त्याग सकती हूं अथवा उस व्यक्ति को त्याग सकती हू, किन्तु मर्यादा का उल्लंघन नही कर सकती।) ॥२॥

लवङ्गिका—(स्वगतम्) अत्रेदानी क उपायः। (एत्थ दाणीं को उवाओ।)

(नेपथ्यार्धप्रविष्टा)

प्रतिहारी—एषा भगवती कामन्दकी। (एसा भअवदी कामन्दई।)

उभे—किं भगवती। (किं भअवई।)।

प्रतिहारी—भर्तृदारिका द्रष्टुकामाऽऽगता। (भट्टिदारिअं दट्ठुआमा आअदा।)

उभे—ततः किं विलम्ब्यते। (तदो किं विलम्बीअदि।)

(निष्क्रान्ता प्रतिहारी। मालती चित्रं छादयति)

लवङ्गिका—(स्वगतम्) सुसमाहितं खलु जातम्। (सुसमाहिदं क्खु जादम्)।

(ततः प्रविशति कामन्दक्यवलोकिता च)

कामन्दकी—साधु सखे भूरिवसो, साधु। 'प्रभवति निजस्य कन्यकाजनस्य देव' इत्युभयलोकाविरुद्धमुत्तरमुपन्यस्तम्। अपि च। अद्य मन्मथोद्यानवृत्तान्तेन भगवतो विधेरप्यनुकूलतामवगच्छामि। वकुलावलीचित्रफलकव्यतिकरस्तु कमप्यद्भुततमं

लवंगिका—(अपने आप) अब यहाँ (ऐसी दशा मे) क्या उपाय है?

(पर्दे के भीतर से आधा प्रविष्ट होकर)

प्रतीहारी—यह भगवती कामन्दकी (आ रही है)।

दोनों—क्या स्वय भगवती (आ रही है।)।

प्रतीहारी—स्वामीकन्या को देखने के लिए आयी है।

दोनों—तब क्यों विलम्ब कर रही हो।

(द्वारपालिका जाती है। मालती चित्रफलक को ढंक लेती है।)

लवंगिका—(अपने आप) (अब तो) निश्चय ही काम अच्छी तरह बन गया।

(तदनन्तर कामन्दकी और अवलोकिता प्रवेश करती है।)

कामन्दकी—वाह मित्र भूरिवसु! वाह! अपनी कन्या के सम्बन्ध मे महाराज सब कुछ कर सकते हैं—यह दोनों लोको के लिए अनुकूल उत्तर आपने दिया। और भी। आज कामोद्यान मे घटित घटना से भगवान् विधाता की भी अनुकूलता है—मैं ऐसा समझती हूं। (माधव द्वारा बनायी गयी) वकुल की माला एवं (मालती द्वारा बनाये गये) चित्रफलक की अदला-बदली भी मेरे मन मे अतीव अद्भुत हर्ष उत्पन्न कर रही है। क्योंकि विवाह कर्म मे एक दूसरे का अनुराग ही उत्तम मंगल होता है। महर्षि अंगिरा ने ऐसा कहा है कि—जिस कन्या मे मन और

प्रमोदमुल्लासयति। इतरेतरानुरागो हि विवाहकर्मणि परार्घ्यं मङ्गलम्। गीतश्चायमर्थोऽङ्गिरसा यस्यां मनश्चक्षुषोर्निबन्धस्तस्यामृद्धिरिति।

अवलोकिता—एषा मालती। (एषा मालदी)।

कामन्दकी—(निर्वर्ण्य)

निकामं क्षामाङ्गी सरसकदलीगर्भसुभगा
कलाशेषा मूर्तिः शशिन इव नेत्रोत्सवकरी।
अवस्थामापन्ना मदनदहनोद्दाहविधुरा-
मियं नः कल्याणी रमयति मनः कम्पयति च॥३॥

अपि च—

परिपाण्डुपांसुलकपोलमाननं दधती मनोहरतरत्वमागता।
रमणीयजन्मनि जने परिभ्रमंल्ललितो विधिर्विजयते हि मान्मथः॥४॥

नियतमनया संकल्पनिर्मित. प्रियसमागमोऽनुभूयते। तथा ह्यस्या —

नीवीबन्धोच्छ्वसनमधरस्पन्दनं दोर्विषादः
स्वेदश्चक्षुर्मसृणमुकुलाकेकरस्निग्धमुग्धम्।

नेत्र बंध जाय, उससे विवाह करने मे (पुरुष को) सब प्रकार की समृद्धि होती है।

अवलोकिता—यह मालती है।

कामन्दकी—(भलीभांति देखकर) गीली कदली के स्तम्भ के मध्यवर्ती भाग की भांति श्वेतवर्णा सुन्दरी, कृशांगिनी एवं कलामात्र शेष चन्द्रमा की मूर्ति के समान नेत्रो को उत्सव सुख देनेवाली यह कल्याणी मालती कामाग्नि के उत्कट दाह से विह्वल अवस्था को प्राप्त होकर हमारे मन को आनन्दित भी करती है और कंपाती भी है॥३॥

और भी, विशेष रूप से इसके दोनों कपोल रूखे और श्वेतवर्ण के हो गये हैं, जिनसे युक्त मुख को धारण करती हुई यह और भी मनोहारिणी हो गयी है। सत्य है, सौन्दर्यशाली लोगो मे विचरण करता हुआ सुन्दर कामदेव का कोमल व्यापार विजयशील होता ही है॥४॥

निश्चय ही मालती, अपने मन की कल्पना के अनुसार प्रियतम के समागम का सुखानुभव कर रही है। क्योंकि इसके,

कटि भाग मे बंधी नीवी खुलती जा रही है, ओठ कांप रहे हैं, दोनों भुजाओं में (शिथिलता दिखाई पड रही) है, पसीना निकल रहा है, दोनों नेत्र चिकने कोमल कुड्मल के समान कुछ संकुचित हो गये हैं और स्नेहयुक्त तथा मनोहर हो गए हैं।

गात्रस्तम्भः स्तनमुकुलयोरुत्प्रबन्धः प्रकम्पो
गण्डाभोगे पुलकपटलं मूर्च्छना चेतना च॥५॥

(उपसर्पति)

(लवङ्गिका मालतीं चालयति। उभे उत्तिष्ठतः।)

मालती—भगवति, वन्दे। (भअवदि, वन्दामि)।

कामन्दकी—महाभागधेयजन्मतायाः फलस्य भाजनं भूयाः।

लवङ्गिका—भगवति, एतत्पवित्रमासनम्। (भअवदि,एदं पवित्तं आसणम्।)

(सर्वा उपविशन्ति)

मालती—कुशलं भगवत्याः। (कुसलं भअवदीए।)

कामन्दकी—(निःश्वस्य) कुशलमिव।

लवङ्गिका—(स्वगतम्) प्रस्तावना खल्वेषा कपटनाटकस्य। (प्रकाशम्) गुरुकबाष्पभरस्तम्भमन्थरितकण्ठप्रतिलग्ननिर्गममन्यादृशमिवाद्य भगवत्या वचनम्। तत्किमिदानीमुद्वेगकारणं भविष्यति। (पत्थावणा क्खु एसा कवडणाडअस्स। गुरुअवाहभरत्थम्भमन्थरिदकण्ठप्पडिलग्गणिग्गमं अण्णारिसं विअ अज्ज भअवदीए वअणम्। ता किं दाणीं उव्वेअकारणं हविस्सदि।)

शरीर स्तब्ध हो रहा है, स्तन कलिकाएँ धीरता के टूट जाने की सूचना देती हुई काँप रही हैं, कपोल स्थलों पर रोमांच हो आया है, कभी यह मूर्च्छित-सी दिखाई पड़ती है, और कभी चैतन्य युक्त॥५॥

(समीप जाती है।)

(लवंगिका मालती को हिलाती है। दोनों उठ कर खड़ी होती हैं।)

मालती—भगवती! मैं नमस्कार करती हूँ।

कामन्दकी—अपने महान् भाग्यशाली जन्म के अनुरूप सफलता का भाजन बनो।

लवंगिका—भगवती! यह (आपके बैठने के लिए) पवित्र आसन है।

(सब बैठती हैं।)

मालती—भगवती का कुशल-मंगल तो है?

कामन्दकी—(गहरी साँस खींच कर) हाँ, मंगल ही है।

लवंगिका—(अपने आप) यह कपट-नाटक की प्रस्तावना है। (प्रकट रूप में) भीतर की गहरी साँस के अवरोध के कारण कण्ठ से बहुत धीमे निकलते हुए स्वर से युक्त आप की वाणी कुछ दूसरी ही तरह की मालूम पड़ रही है। तो इस समय आपके उद्वेग का क्या कारण है?

कामन्दकी—नन्वयमेव चीरचीवरविरुद्ध. परिचयः।

लवङ्गिका—कथमिव। (कहं विअ)।

कामन्दकी—अयि, त्वमपि किं न जानीषे।

इदमिह मदनस्य जैत्रमस्त्रं
सहजविलासनिबन्धनं शरीरम्।
अनुचितवरसंप्रदानशोच्यं
विफलगुणातिशयं भविष्यतीति॥६॥

(मालती वैचित्र्यं नाटयति)

लवङ्गिका—अस्त्येतन्नरेन्द्रवचनानुरोधेन नन्दनस्य प्रतिपन्ना मालतीति सकलो जनोऽमात्यं जुगुप्सते। (अत्थि एवं जं णरेन्दवअणाणुरोहेण णन्दणस्स पडिवण्णा मालदित्ति सअलो जणो अमच्चं जुउच्छइ।)

मालती—(स्वगतम्) कथमुपहारीकृतास्मि राजस्तातेन। (कह उवहारीकिदम्हि राइणो तादेण।)

कामन्दकी—आश्चर्यम्।

कामन्दकी—अरे यही जो जीर्ण वस्त्रों के टुकड़ों से बनी गुदडी के विरुद्ध तुम जैसे लोगों का परिचय मुझसे हो गया है।

लवंगिका—किस प्रकार से।

कामन्दकी—अरे! क्या तुम भी नही जानती हो।

इस मालती मे कामदेव का विजयशील अस्त्र, सहज विभ्रम-विलास का स्थान यह शरीर, अयोग्य वर (नन्दन) के हाथो मे इसका प्रदान किया जाना और (इस प्रकार) इसके अतीव उत्कृष्ट गुण निष्फल हो जायगे—इन्ही बातो की मुझे चिन्ता है॥६॥

(मालती मन की विह्वलता को प्रदर्शित करने का नाट्य करती है।)

लवंगिका—आपका कहना ठीक ही हैं। क्योकि सभी लोग अमात्य (भूरिवसु) की इस बात के लिए निन्दा कर रहे हैं कि वे राजा के अनुरोध के कारण मालती का नन्दन के लिए प्रदान करेंगे।

मालती—(अपने आप) पिता जी ने क्यों और कैसे मुझे राजा के लिए उपहार बना दिया?

कामन्दकी—आश्चर्य है।

गुणो (सौन्दर्य उदारता आदि) का विचार बिना किए ही यह कर्म (नन्दन के साथ मालती का विवाह) किस प्रकार आरम्भ कर दिया। अथवा कुटिल

गुणापेक्षाशून्यं कथमिदमुपक्रान्तमथवा
कुतोऽपत्यस्नेहः कुटिलनयनिष्णातमनसाम्।
इदं त्विदम्पर्यं यदुत नृपतेर्नर्मसचिवः
सुतादानान्मित्रं भवतु स भवान्नन्दन इति॥७॥

मालती—(स्वगतम्) राजाराधनं खलु तातस्य गुरुकम् न पुनर्मालती। (राआराहणं क्खु तादस्स गुरुअं, ण उण मालदी।)

लवङ्गिका—यथा भगवत्याज्ञापयति न तत्तथैव। अन्यथा तस्मिन्वरे दुर्दर्शनेऽतिक्रान्तयौवने किमिति न विचारितममात्येन। (जहा भअवदी आणवेदि तं तह ज्जेव्व। अण्णहा तस्सिं वरे दुद्दंसणे अदिक्कन्दजोव्वणे किं ति ण विआरिदं अमच्चेण।)

मालती—(स्वगतम्) हा, हतास्मि समुपस्थितानर्थवज्रपतना मन्दभागिनी। (हा, हदम्हि समुवत्थिदाणत्थवज्जपडणा मन्दभाइणी।)

लवङ्गिका—तत्प्रसीद। भगवति, परित्रायस्वास्माज्जीवन्मरणात्प्रियसखीम्। तवाप्येषा दुहितैव। (ता पसीद। भअवदि, परित्ताहि एदो जीवन्मरणादो पिअसहिं। तुह वि एसा दुहिदा ज्जेव्व।)

कामन्दकी—अयि सरले, किमत्र भगवत्या शक्यम्। प्रभवति प्रायः कुमारीणां जनयिता दैवं च। यच्च किल कौशिकी शकुन्तला दुष्यन्तमप्सराः पुरूरवसं चकमे

नीति में निपुण चित्तवालों में अपनी सन्तानों के प्रति स्नेह कहाँ रहता है? इसका तात्पर्य तो यही है कि राजा के क्रीडा-सहचर माननीय नन्दन जी कन्या-दान करने से हमारे मित्र बन जायगे॥७॥

मालती—(अपने आप) महाराज को सन्तुष्ट करना पिता जी को अधिक महत्त्वपूर्ण मालूम पड़ता है किन्तु मालती की प्रसन्नता की उन्हें चिन्ता नहीं है।

लवंगिका—इस विषय में भगवती (आप) जैसा कह रही है वैसी बात नहीं है। अन्यथा जवानी के बीत जाने से देखने में कुरूप उस वर में क्या (आकर्षण रखा) है—इसका विचार अमात्य महोदय ने नहीं किया।

मालती—(अपने आप) हाय। मैं तो मर गयी। अनिष्ट रूपी वज्रपात मेरे सम्मुख उपस्थित है। मैं मन्दभागिनी हूँ।

लवंगिका—अतः आप सुप्रसन्न हों। हमारी प्रिय सखी की इस जीवित-मृत्यु से रक्षा कीजिये। यह आपकी भी तो पुत्री ही है।

कामन्दकी—हे सरले। (तुम्हारी) भगवती (मैं) इस विषय में भला क्या

उर्वशीत्याख्यानविद आचक्षते, वासवदत्ता च पित्रा संजयाय राज्ञे दत्तमात्मान-मुदयनाय प्रायच्छदित्यादि, तदपि साहसकल्पमित्यनुपदेष्टव्यमेव। सर्वथा।

राज्ञः प्रियाय सुहृदे सचिवाय कार्या-
द्दत्त्वात्मजां भवतु निर्वृतिमानमात्यः।
दुर्दर्शनेन घटतामियमप्यनेन
धूमग्रहेण विमला शशिनः कलेव॥८॥

मालती—(स्वगतम्) *हा तात, त्वमपि मम नामैवमिति जित भोगतृष्णया।* (हा ताद, तुम वि मम णाम एव्वं त्ति जिदं भोगतिण्हाए।)

अवलोकिता—विरायितं भगवत्या। ननु भणाम्यस्वस्थचित्तो महाभागो माधव इति। (विराइदं भअवदीए। णं भणामि अस्सत्थचित्तो महाभाओ माहवो त्ति।)

कामन्दकी—इद गम्यते। वत्से, अनुजानीहि माम्।

लवङ्गिका—(*जनान्तिकम्*) *सखि मालति, साम्प्रत भगवत्याः सकाशात्तस्य* महानुभावस्योद्गमं जानीमः। (सहि, मालदि, संपदं भअवदीए सआसादो तस्स महाणुहावस्स उग्गमं जाणीमो।)

कर सकती है। प्रायः कुमारी कन्याओं के लिए माग्य एव पिता ही सब कुछ करने मे प्रभु (समर्थ) हैं। विश्वामित्र की कन्या शकुन्तला ने राजा दुष्यन्त की और उर्वशी नाम की अप्सरा ने राजा पुरूरवा की कामना की—इन कथाओं को पुराणों के जाननेवाले कहते हैं और पिता द्वारा राजा सजय को वचन से प्रदत्त वासवदत्ता ने अपने को (स्वेच्छया) राजा उदयन को सौंप दिया—ये सब (पुराने उदाहरण सुने जाते) हैं—किन्तु ये सब भी प्रायः साहस भरे कार्य हैं। इनका उपदेश (हमें) तो नहीं ही करना चाहिए।

सब प्रकार से अमात्य (भूरिवसु) राजा के प्रिय (नन्दन) को किसी विशेष उद्देश्य से अपनी कन्या को प्रदान करके सुखी हो और धूमकेतु के सहित निर्मल चन्द्रकला के समान मालती भी कुरूप नन्दन के साथ समवेत हो॥८॥

मालती—(अपने आप) हाय तात! आप भी मेरे लिए इस प्रकार (निष्ठुर) हो गये। भोग-लिप्सा की ही सब प्रकार से विजय हुई।

अवलोकिता—भगवती ने विलम्ब कर दिया। मैं कहती हूँ कि महाभाग्य-शाली माधव जी अस्वस्थचित्त हैं।

कामन्दकी—यह (मैं) जाती हूँ। बेटी! मुझे आज्ञा दो।

लवंगिका—(केवल मालती को सुनाकर) सखी मालती! इस समय भगवती से उन महानुभाव (माधव) के जन्मादि का वृत्तान्त (हम लोग) जान लें।

मालती—(जनान्तिकम्) अस्ति मे कौतूहलम् । (अत्थि मे कोदूहलम्) ।

लवङ्गिका—(प्रकाशम्) क एष माधवो नाम, यस्मिन्भगवत्येवं स्नेहगुरु-कमात्मानं धारयति। (को एसो माहवो णाम, जस्सि भअवदी एव्वं सिणेहगुरुअं अत्ताणं धारेदि।)

कामन्दकी—अप्रस्ताविनी महत्येषा कथा।

लवङ्गिका—तथाप्याख्याय भगवती प्रसादं करोतु। (तह वि आअक्खिअ भअवदी पसादं करेदु।)

कामन्दकी—श्रूयताम्। अस्ति विदर्भराजस्यामात्यः समग्रपुरुषप्रकाण्ड-चक्रचूडामणिर्देवरातो नाम । यमशेषभुवनमहनीयपुण्यमहिमानमात्मनः साती-र्थ्यात्पितैव ते जानाति योऽसौ यादृग्यश्चेति । अपि च।

व्यतिकरितदिगन्ताः श्वेतमानैर्यशोभिः
सुकृतविलसितानां स्थानमूर्जस्वलानाम्।
अगणितमहिमानः केतनं मङ्गलानां
कथमिव भुवनेऽस्मिंस्तादृशाः संभवन्ति॥९॥

मालती—(सहर्षम्) सखि, तं खलु भगवत्या गृहीतनामधेयं सर्वथा तातः स्मरति। (सहि, तं क्खु भअवदीए गहीदणामहेअं सव्वहा तावो सुमरेदि।)

मालती—(केवल लवंगिका को सुनाकर) मुझे उत्कण्ठा है।

लवंगिका—(प्रकट रूप में) यह माधव कौन हैं, जिनके विषय में भगवती ऐसी ऊंची वात्सल्य-भावना रखती हैं।

कामन्दकी—यह कहानी लंबी है, इसे सुनाने का उपयुक्त अवसर यह नहीं है।

लवंगिका—फिर भी कुछ कहकर भगवती (हम पर) अनुग्रह करें।

कामन्दकी—तो सुनो। विदर्भ नरेश के अमात्य सभी प्रकार के श्रेष्ठ मनुष्यों में शिरोमणि के समान देवरात नाम के हैं। सम्पूर्ण जगतीतल में उनका पवित्र यश सुसम्मानित हो रहा है और तुम्हारे पिता जी भी सहपाठी होने के कारण उन्हें जिस प्रकार के और जैसे हैं—जानते हैं। और भी।

जिनकी उज्ज्वल कीर्ति सभी दिगन्तों में व्याप्त हो रही है, जो पुण्यदायी एवं प्रबल कार्यों के आश्रय हैं और सम्पूर्ण समृद्धियों के पात्र हैं, उनके समान अतुलित महिमाशाली एवं कल्याणों के प्रतीक पुरुष इस जग में किस प्रकार उत्पन्न होंगे? ॥९॥

मालती—(सहर्ष) भगवती ने अभी जिनका नाम लिया है, उन्हें हमारे पिता जी सर्वदा स्मरण किया करते हैं।

सर्वाङ्गिका—सखि, समं किल भगवत्या गुरुसकाशाद्विद्याधिगमः कृत इ
तत्कालवेदिनो मन्त्रयन्ते। (सहि, समं किल भअवदीए गुरुसआसादो विज्जाहिग
किदो त्ति तक्कालवेदिणो मन्तअन्दि।)

कामन्दकी—

तत उदयगिरेरिवैक एष स्फुरितगुणद्युतिसुन्दरः कलावान्।
इह जगति महोत्सवस्य हेतुर्नयनवतामुदियाय बालचन्द्रः॥१०

सर्वाङ्गिका—(अपवार्य) अपि नाम माधवो भवेत्। (अवि णाम माहवो हवे)

कामन्दकी—

असौ विद्याशाली शिशुरपि विनिर्गत्य भवना-
दिहायातः संप्रत्यविकलशरच्चन्द्रवदनः।
यदालोकस्थाने भवति पुरमुन्मादतरलैः
कटाक्षैर्नारीणां कुवलयितवातायनमिव॥११॥

तदत्र च बालसुहृदा मकरन्देन सह विद्यामान्वीक्षिकीमधीते। स एष माधवं नाम।

मालती—(सानन्दं जनान्तिकम्) सखि लवङ्गिके, श्रुत महाकुलप्रसूतं महाभाग इति। (सहि लवङ्गिए, सुदं महाउलप्पसूवो महाभाओ त्ति।)

लवंगिका—उस समय के जानने वाले ऐसा आपस में कहा करते हैं कि भगवती ने उन दोनों (देवरात और भूरिवसु) के साथ एक ही गुरु से विद्याध्ययन किया था

कामन्दकी—उदयाचल से उदित चन्द्रमा के समान उन्हीं (देवरात) से यह एक मात्र बालक उत्पन्न हुआ, जो अपने अनुपम गुणों की प्रकाशित कान्ति से मनोहर कला युक्त एव इस जगत में नेत्रवालों के लिए महोत्सव का कारण है॥१०॥

लवंगिका—(मालती के समीप धीरे-धीरे) यही बालक क्या माधव है?

कामन्दकी—शरद् ऋतु के पूर्ण चन्द्रमा के समान मनोहर मुखमण्डल वाले वही देवरात के पुत्र बाल्यावस्था में भी सभी विद्याओं में पारंगत होकर अपने भवन से निकल कर सम्प्रति यहाँ आये हुए है, जिनके दर्शन योग्य स्थानों में, सुन्दरियों के कामोन्माद के कारण चंचल कटाक्ष पातों से इस नगर के झरोखे नील कमल से युक्त की भाँति हो जाते हैं॥११॥

इस नगर में अपने बालसखा मकरन्द के संग वह न्यायशास्त्र का अध्ययन कर रहा है, और उसी का नाम माधव है।

मालती—(आनन्दपूर्वक केवल लवंगिका को सुनाकर) सखी लवंगिके! सुना तुमने कि वे महानुभाव महान कुल में भी उत्पन्न हुए हैं।

लवङ्गिका—(जनान्तिकम्) सखि, कुतो वा महोदधिं वर्जयित्वा पारिजातस्योद्गमः। (सहि, कुदो वा महोदहिं वज्जिअ पारिजाअस्स उग्गमो।)

(नेपथ्ये शङ्खध्वनिः)

कामन्दकी—अहो कालातिपातः। सम्प्रति हि—

क्षिपन्निद्रामुद्रां मदनकलहच्छेदसुभगा-
मुपात्तोत्कम्पानां विहगमिथुनानां प्रथमतः।
दधानः सौधानामलघुषु निकुञ्जेषु घनता-
मसौ संध्याशङ्खध्वनिरनिभृतः खे विचरति॥१२॥

वत्से, सुखं स्थीयताम्। (इत्युत्तिष्ठति।)

मालती—(अपवार्य) कथमुपहारीकृतास्मि राज्ञस्तातेन। राजाराधनं खलु तातस्य गुरुकम् न पुनर्मालती। (सास्रम्) हा तात, त्वमपि मम नामैवमिति सर्वथा जित भोगतृष्णया। (सानन्दम्) कथं महाकुलप्रसूतः स महाभागः। सुष्ठु भणितं प्रियसख्या कुतो वा महोदधिं वर्जयित्वा पारिजातस्योद्गम इति। अपि नाम तं पुनरपि प्रेक्षिष्ये। (कहं उहहारीकिदम्हि राइणो तादेण। राआराहणं क्खु तादस्स गुरुअं, ण उण मालदी। हा ताद, तुमं वि मह णाम एव्व त्ति सव्वहा जिदं भोअतिण्हाए। कहं महाउलप्पसूदो सो महाभाओ। सुठ्ठु भणिदं पिअसहीए कुदो वा महोअहिं वज्जिअ पारिजादस्स उग्गमो त्ति। अवि णाम तं उणो वि पक्खिस्सं।)

लवंगिका—(केवल मालती को सुनाते हुए) सखी! महासमुद्र को छोड़कर पारिजात की उत्पत्ति अन्यत्र कहाँ से संभव है?

(नेपथ्य में शंखध्वनि होती है।)

कामन्दकी—अहो! अधिक समय बीत गया। क्योंकि इस समय, सन्ध्याकाल की यह अमन्द शंखध्वनि प्रकट होकर, पहले ही से कंपित होनेवाले चक्रवाक दम्पती की सुरत लीला के अनन्तर आनेवाली मनोहर निद्रा की मुद्रा को दूर हटाती हुई, बड़े बड़े राज भवनों के भीतर (प्रतिध्वनित होने के कारण) निविड़ता (सघनता) को प्राप्त करके आकाश में फैलती जा रही है॥१२॥

बेटी! सुखपूर्वक रहो। (ऐसा कहकर उठती है।)

मालती—(केवल लवंगिका से) पिता जी ने मुझे राजा को उपहार-स्वरूप कैसे दे दिया। राजा को प्रसन्न करना ही पिता जी के लिए अधिक है, मालती कुछ नहीं है। (आँसू बहाती हुई) हाय पिता जी! आप भी हमारे लिए इस प्रकार (निष्कृप) हो गये हैं, जगत में भोग की लिप्सा ही सब प्रकार से विजयिनी

लवङ्गिका—अवलोकिते, इत एतेन सञ्चवनेनावतरावः। (अवलोइद, इदो एदिणा संजवणेण ओदरम्ह।)

कामन्दकी—(अपवार्य) अवलोकिते, साधु सम्प्रति मया तटस्थयैव मालती प्रति निसृष्टार्थदूत्यस्य लघूकृतो भारः। कुतः—

यदेऽन्यस्मिन्दोषः पितरि विचिकित्सा च जनिता
पुरावृत्तोद्गारैरपि च कथिता कार्यपदवी।
स्तुतं माहाभाग्यं यदभिजनतो यच्च गुणतः
प्रसङ्गाद्वत्सस्येत्यथ खलु विधेयः परिचयः॥१३॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे धवलगृहो नामा द्वितीयोऽङ्कः ॥२॥

होती है। (आनन्द के साथ) वे महानुभाव कैसे महान कुल में भी उत्पन्न हुए हैं? ठीक ही कहा है मेरी प्रिय सखी ने कि महासमुद्र को छोड़कर पारिजात की उत्पत्ति अन्यत्र कहाँ से संभव है। क्या मैं उन्हें फिर से देख सकूँगी।

लवंगिका—अवलोकिते! इधर आओ, इस सीढ़ी से हम दोनों नीचे उतरेंगी।

कामन्दकी—(केवल अवलोकिता को सुनाते हुए) अवलोकिते! इस समय तो मैंने बिल्कुल तटस्थ होकर मालती के प्रति निसृष्टार्थ दूती के कर्तव्य का भार हल्का कर दिया है। क्योंकि—

दूसरे वर (नन्दन) में दोष, और पिता (भूरिवसु) की नीयत में सन्देह उत्पन्न कर दिया है। प्राचीन उपाख्यानों को भी सुनाकर कार्य की पद्धति बतला दी है। प्रसंग के अनुसार वात्सल्य-भाजन (माधव) के उच्चकुल और सद्गुणों के कारण प्राप्त होनेवाली महानुभाविता की भी प्रशंसा कर दी है। अब इसके बाद तो इन दोनों का केवल परिचय (सम्मिलन) कराना बाकी रह गया है॥१३॥

महाकवि भवभूति रचित मालतीमाधव नाटक में धवलगृह नामक
दूसरा अंक समाप्त ॥२॥

तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति बुद्धरक्षिता)

बुद्धरक्षिता—(परिक्रम्य आकाशे) अवलोकिते, अपि जानासि क्व भगवती। (अवलोइदे, अवि जाणासि कहिं भअवदी।)

अवलोकिता—(प्रविश्य) बुद्धरक्षिते, किं प्रमुग्धासि। यः कोऽपि कालो भगवत्याः पिण्डपारणवेला विसृज्य मालतीमनुवर्तमानायाः। (बुद्धरक्खिदे, किं पमुद्धासि। जो कोवि कालो भअवदीए पिण्डपारणवेलं विसज्जिअ मालदीं अणुवट्टमाणाए।)

बुद्धरक्षिता—हु, त्व पुन क्व प्रस्थितासि। (हुं, तुमं उण कहिं पत्थिदासि।)

अवलोकिता—अहं खलु भगवत्या माधवसकाशमनुप्रेषिता। संदिष्ट च तस्य शंकरपुरसवन्धि कुसुमाकरोद्यानं गत्वा कुञ्जनिकुञ्जपर्यन्तरक्ताशोकगहने तिष्ठेति। गतश्च तत्र माधवः। (अहं क्खु भअवदीए माहवसआसं अणुप्पेसिदा। संदिट्ठं अ तस्स संकरउरसंबन्धि कुसुमाअरुज्जाणं गदुअ कुञ्जणिउञ्जपेरन्तर-त्तासोअगहणे चिट्ठेत्ति। गदो अ तत्थ माहवो।)

बुद्धरक्षिता—अवलोकिते, किमिति माधवस्तत्रानुप्रेषितः। (अवलोइदे किं ति माहवो तत्थ अणुप्पेसिदो।)

अवलोकिता—अद्य कृष्णचतुर्दशीति जनन्या समं मालती शंकरपुरं गमिष्यति।

तृतीय अंक

(तदनन्तर बुद्धरक्षिता प्रवेश करती है।)

बुद्धरक्षिता—(घूमती हुई। आकाश की ओर देखकर) अवलोकिते! क्या जानती हो भगवती कहाँ हैं?

अवलोकिता—(प्रवेश करके) बुद्धरक्षिते! क्यों तुम अज्ञ बन गयी हो? भोजन के लिये निर्दिष्ट समय को छोड़कर भगवती कामन्दकी का कितना समय मालती का अनुसरण करने में बीत जाता है।

बुद्धरक्षिता—हूँ, तो तुम कहाँ चल पड़ी हो।

अवलोकिता—भगवती ने मुझे माधव के समीप भेजा है। और उन्हें यह सन्देश दिया है कि—तुम शिव के मन्दिर से सम्बद्ध कुसुमाकर के उद्यान में जाकर माला के पुष्पों की लता आदि से आच्छादित स्थान के मध्य भाग में लाल अशोक के वृक्षों के वन में ठहरो। माधव वहीं गये हुए हैं।

बुद्धरक्षिता—अवलोकिते! माधव वहाँ किस लिए भेजे गये हैं।

अवलोकिता—आज कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि है, इस कारण अपनी माता

तत एवं किल सौभाग्यं वर्धत इति देवताऽऽराधननिमित्त स्वहस्तकुसुमावचयमुद्दिश्य लवङ्गिकाद्वितीया मालती तदेव कुसुमाकरोद्यानमानेष्यति। ततोऽन्योन्यदर्शनं भविष्यतीति। त्वं पुन क्व प्रस्थितासि। (अज्ज किसणचउद्दसित्ति जणणीए समं मालदी सङ्करउरं गमिस्सदि। तदो एव्वं किल सोहग्गं वड्ढदि त्ति देवदाराहणणिमित्त सहत्थकुसुमावचअ उद्दिसिअ लवङ्गिआदुदीअ मालदी त एव्व कुसुमाअरुज्जाणं आणइस्सदि। तदो अण्णोण्णदंसण हविस्सदि त्ति। तुमं उण कहिं पत्थिदा त्ति ।)

बुद्धरक्षिता—अह खलु शङ्करपुरमेव प्रस्थितया प्रियसख्या मदयन्तिकया आमन्त्रिता। अतो भगवत्या पादवन्दन कृत्वा तत्रैव गच्छामि। (अहं क्खु सङ्करउर जेव्व पत्थिदाए पिअसहीए मदअन्तिआए आमन्तिदा। अदो भअवदीए पादवन्दणं करुअ तहिं जेव्व गच्छामि।)

अवलोकिता—त्वं खलु भगवत्या यस्मिन्प्रयोजने नियुक्ता तत्र को वृत्तान्तः। (तुमं क्खु भअवदीए जस्सि पओअणे णिउत्ता तत्थ को वुत्तन्तो।)

बुद्धरक्षिता—मया खलु भगवत्या समादेशेन तासु तासु विस्रम्भकथास्वीदृशस्तादृश इति मकरन्दस्योपरि प्रियसख्या मदयन्तिकाया परोक्षानुरागस्तथा दूरमारोपितो यथैवमस्या मनोरथोऽपि नाम त पश्यामीति। (मए क्खु भअवदीए समादेसेण तासु विस्सम्भकहासु ईरिसो तारिसो त्ति मअरन्दस्स उवरि पिअसहीए मदअन्तिआए परोक्खाणुराओ तहा दूरं आरोविदो जहा से मणोरहो अवि णाम त पेक्खामि त्ति।)

के साथ मालती शिव के मन्दिर में जायगी। तदनन्तर—ऐसा करने से सुख-सौभाग्य की वृद्धि होती है—इसलिए देवाराधन के निमित्त अपने ही हाथों से पुष्पचयन करने का उद्देश्य लेकर लवंगिका के साथ मालती को उसी कुसुमाकर उद्यान में भगवती ले जायगी। तब उन दोनों (मालती और माधव) का परस्पर दर्शन होगा। तुम फिर कहाँ चल पड़ी हो?

बुद्धरक्षिता—मुझे तो शिव मन्दिर को ही जानेवाली प्रियसखी मदयन्तिका ने बुलाया है। अतः भगवती का चरण-वन्दन कर मैं वहीं जा रही हूँ।

अवलोकिता—तुम्हें भगवती ने जिस कार्य में नियुक्त किया था, उसका क्या समाचार है?

बुद्धरक्षिता—भगवती के आदेश में मैंने ऐसे-ऐसे मनोहर प्रेम-प्रसंगों में मकरन्द ऐसे हैं, वैसे हैं—इस प्रकार कह-कह कर मकरन्द के ऊपर प्रियसखी मदयन्तिका के छिपे हुए अनुराग को इस प्रकार से दूर तक जमा दिया है कि—मैं उन्हें देखना चाहती हूँ—ऐसी मदयन्तिका की इच्छा हो गयी है।

अवलोकिता—साधु बुद्धरक्षिते साधु। एहि गच्छावः। (साहु बुद्धरक्खिदे, साहु। एहि गच्छम्ह)।

(इति निष्क्रान्ते)

प्रवेशकः।

—०—

(प्रविश्य)

कामन्दकी—

तथा विनयनम्राऽपि मया मालत्युपायतः।
नीता कतिपयाहोभिः सखीविस्रम्भसेव्यताम् ॥१॥

संप्रति हि—

व्रजति विरहे वैचित्यं नः प्रसीदति संनिधौ,
रहसि रमते प्रीत्या वाचं ददात्यनुवर्तते।
गमनसमये कण्ठे लग्ना निरुध्य निरुध्य मां
सपदि शपथैः प्रत्यावृत्ति प्रणम्य च याचते ॥२॥

इदं च तत्र साधीयः प्रत्याशानिबन्धनम्।

शाकुन्तलादीनितिहासवादान् प्रस्तावितानन्यपरैर्वचोभिः।
श्रुत्वा मदुत्सङ्गनिवेशिताङ्गी चिराय चिन्तास्तिमितत्वमेति ॥३॥

अवलोकिता—वाह बुद्धरक्षिते। शाबास। आओ चलें।

(दोनों निकलती हैं।)

(प्रवेशक समाप्त)

—०—

(प्रवेश कर)

कामन्दकी—उस प्रकार (प्राचीन परम्पराओं एवं मर्यादा रक्षा के प्रति अडिग आस्था रखनेवाली) विनय से विनम्र होने पर भी मालती को मैं ने अनेक उपयुक्त उपायों द्वारा कुछ ही दिनों के भीतर विश्वस्त सखियों के समान हमारे प्रति व्यवहार करने के योग्य बना डाला है॥१॥

क्योंकि इस समय

मालती हमारे वियोग से दु:खी होती है और समीप रहने से सुप्रसन्न होती है, एकान्त में क्रीडा-रत होती है, प्रेम से बोलती है, मेरा अनुसरण करती है, जब मैं कहीं जाने लगती हूँ तो गले में लगकर मुझे बारबार रोककर प्रणाम करके तथा शपथ दिलाकर शीघ्र ही वापस लौटने की प्रार्थना करती है॥२॥

यह तो हमारी आशा के सफल होने का सुदृढ कारण (दिखाई पड़ता) है। अन्यान्य प्रसंगों में हमारे द्वारा प्रस्तावित शकुन्तला-दुष्यन्त आदि की पुरानी कथाएँ सुनकर मालती हमारी गोंद में अपने अंगों को रखकर बहुत समय तक चिन्ता से स्तब्ध होकर पड़ी रहती है॥३॥

तदद्य माधवसमक्षमुपक्रमिष्ये । (नेपथ्याभिमुखमवलोक्य।) वत्से, इत इत।

(ततः प्रविशति मालती लवङ्गिका च।)

मालती—(स्वगतम्) कधमुवाअणीकदम्हि रण्णो। राआराहणं क्खु तादस्स गुरुअं, ण पुण मालदी। (सास्रम्) हा ताद, तुमं पि मम णाम एव्वं णिरणुक्कोसो त्ति संवुत्तो। (सानन्दम्) अम्महे महाणुहावो ण महाकुलप्पसूदो। जुत्तं भणिदं पिअसहीए जुत्तो मा अण्णहिं परिजादस्स उप्पत्ती। अवि णाम ण पुणो वि पेक्खिस्सं। (अत्र उपहारीकिदह्मि राइणो तादेन। रामाराहणं क्खु तादस्स गुरुअं, ण उण मालदी। हा ताद, तुम वि मह णाम एव्व त्ति सव्व त्ति सव्वहा जिद भोअतिण्हाए। अहं महाउलप्पसूदो सो महाभाओ। जुज्जदि भणिदं पिअसहीए जुदो मा महोअहिं वज्जिअ पारिजादस्स उग्गमो त्ति। अवि णाम स उणो वि पेक्खिस्सं।)

लवङ्गिका—सखि, एष खलु मधुरमधुरसोद्‌भिन्नमञ्जरीमकरन्दरसोन्मत्त-कोकिलकुलकलकलाकुलितसहकारनिकराङ्कुरोद्भासितकोमलपल्लवपरिणतविलोलपरिमल-करालितसमीरणोत्कम्पितपुष्पपरागपिञ्जरितमधुकरनिकरझङ्कारमुखरितविलसदमलचन्दनवनवाटिकाशीतलपवनसंसर्गसुखितसकलसंसारः परिष्वजति कुसुमाकरोद्यानमाकन्दः। सखि मालति, इतः परि-

---

इसलिए आज इसके बाद का वर्णन माधव के सामने आरम्भ करूँगी। (नेपथ्य की ओर देख कर) बेटी! यहाँ आओ, यहाँ आओ।

(तदनन्तर मालती और लवंगिका प्रवेश करती हैं।)

मालती—(अपने आप) पिता जी ने क्यों मुझे राजा को उपहार के रूप में दे दिया है। पिता जी के लिए राजा की आराधना ही अधिक है, मालती कुछ नहीं। (रोती हुई) हाय तात! आप भी हमारे लिए इस प्रकार (निष्ठुर) हो गये हैं। जगत में भोग की लिप्सा ही सब प्रकार से विजयिनी होती है। (आनन्द के साथ) वे महानुभाव कैसे महान कुल में भी उत्पन्न हुए हैं? ठीक ही कहा है मेरी प्रिय सखी ने कि महासमुद्र को छोड़कर पारिजात की उत्पत्ति अन्यत्र कहाँ से सम्भव है? क्या मैं उन्हें फिर से देख सकूँगी।

लवंगिका—सखी! पुष्पों के सुमधुर रस से मंजरियाँ भीग गयी हैं, उनका भक्षण करने के कारण कोकिल-वृन्दों के कण्ठस्वर अस्पष्ट-से हो गये हैं और अतीव सुमधुर सुनायी पड़ रहे हैं। इनका कोलाहल रसालों के वन को आकुल बना रहा है, जिससे उसके ऊपर उड़ते हुए चंचल भ्रमरों की पंक्तियाँ जा-जा कर चम्पा के

क्रमावः। (सहि, एसो क्खु महुरमहुरसाद्दमञ्जरिकवलणकेलिकलकोइलउलकोलाहलाउलिदसहआररसिहरड्डोणचञ्चरीअणिअरवइअरद्दलिददलकरालचम्पआहिवासमणोहरो मरालजहणपरिणाहुव्वहणमन्थरोरुभरवितंठुलवखलिदचलणसंवलणोवणीदसेअसीअरसुहाविन्दुज्जलमुद्धमुहचन्दचन्दणाअमाणसीअलफसो तुमं परिस्सअदि कुसुमाअरुज्जाणमारुदो। ता पिअसहि, इदो परिक्कमावो।)

(परिक्रम्य प्रविशतः)

(ततः प्रविशति माधवः)

माधवः—हन्त, परागता भगवती। इयं हि मम—

आविर्भवन्ती प्रथमं प्रियायाः सोच्छ्वासमन्तःकरणं करोति।
निदाघसंतप्तशिखण्डियूनो वृष्टेः पुरस्तादचिरप्रभेव ॥४॥

दिष्ट्या लवङ्गिकाद्वितीया मालत्यपि—

पुष्पों की कलियों को विमर्दित करने लगी हैं, और उनकी पखुडियाँ ऊंची-नीची हो गयी हैं। उनकी भीनी-भीनी सुगन्ध से इस कुसुमाकर उद्यान की वायु अतीव मादक हो उठी है। और इधर कोमल, स्थूल और विशाल दोनों नितम्बों के भार को धारण करने से, भारी होने के कारण मन्द-मन्द और इधर-उधर के पाद-विक्षेप के परिश्रम से अमृत की बूँदों के समान पसीने की बूंदें सर्वत्र उत्पन्न होकर तुम्हारे मुखचन्द्र को और भी शुभ्र और मनोहर बनाए दे रही हैं। ऐसे तुम्हारे मुख-मण्डल को इस कुसुमाकरोद्यान के वायु का सस्पर्श चन्दन की भांति शीतलता का अनुभव करा रहा है और तुम्हारा आलिंगन कर रहा है। तो सखी! आओ इस स्थल पर हम भ्रमण करें।

(घूमते हुए प्रवेश करती हैं।)

(तदनन्तर माधव प्रवेश करता है।)

माधव—(प्रसन्नता के स्वर में) बहुत अच्छा। भगवती (कामन्दकी) उपस्थित हैं। क्योंकि यह तो मेरी—

प्रियतमा (मालती) के पहले ही प्रकट हो कर यह (कामन्दकी), ग्रीष्म में सन्तप्त तरुण मयूर के अन्तःकरण को जिस प्रकार वर्षा के पहले चमकनेवाली बिजली सजीव बना देती है उसी प्रकार मेरे अन्तःकरण को आनन्दपूर्ण बना दे रही हैं॥४॥

सौभाग्य से लवंगिका के साथ मालती भी,

आश्चर्यमुत्पलदृशो वदनामलेन्दु-
सांनिध्यतो मम मुहुर्जडिमानमेत्य।
जात्येन चन्द्रमणिनेव महीधरस्य
संधार्यते द्रवमयो मनसा विकारः॥५॥

संप्रतिरमणीयतरा मालती—

ज्वलयति मनोभवाग्निं मदयति हृदयं कृतार्थयति चक्षुः।
परिमृदितचम्पकावलिविलासलुलितालसैरङ्गैः ॥६॥

मालती—सखि, अमुष्मिन्कुब्जकनिकुञ्जे कुसुमान्यवचिनुवः। (सहि, इमस्सिं कुज्जअणिउञ्जे कुसुमाइं अवचिणुम्ह।)

माधवः—

प्रथमप्रियावचनसंश्रवस्फुर-
त्पुलकेन संप्रति मयाऽवलम्ब्यते।
घनराजिनूतनपयःसमुक्षण-
क्षणबद्धकुड्मलकदम्बडम्बरः॥७॥

कमलनयना मालती के निर्मल चन्द्रमुख की समीपता के कारण मेरे चित्त के द्वारा, पर्वत के विशुद्ध जाति में उत्पन्न चन्द्रकान्तमणि के समान बारम्बार जड़ता (अज्ञान एवं द्रवत्व) प्राप्त कर तरलतामय विकार धारण किया जा रहा है—यह आश्चर्य है। (अर्थात् जिस प्रकार चन्द्रोदय होने पर चन्द्रकान्त मणि द्रवित होने लगती है, उसी प्रकार मालती के मुख-चन्द्र के उदय होने से मेरा चित्त भी तरल होता जा रहा है।)

इस समय तो मालती और भी सुन्दर (दिखाई पड रही) है।

परिमर्दित चम्पक के पुष्प से निर्मित माला के समान सुशोभित, मदन पीड़ित और आलस्ययुक्त अंगों से वह हमारी कामाग्नि को प्रदीप्त कर रही है, हृदय (चित्त) को मतवाला बना रही है और नेत्रों को कृतार्थ कर रही है॥६॥

मालती—सखी! आओ हम दोनों इसी कुब्जक वृक्षों के निकुंज में पुष्प चयन करें।

माधव—प्रियतमा के (इस) प्रथम वाक्य के सुनने पर मुझे रोमांच हो आया है, और मैं मेघपंक्तियों के नूतन जल के सींचने के समय मुकुल धारण करनेवाले कदम्ब के वृक्ष की समानता धारण कर रहा हूँ॥७॥

लवङ्गिका—सखि, एवं कुर्वः। (सहि एव्व करेम्ह।)

(पुष्पावचयं नाटयतः)

माधवः—अपरिमेयाश्चर्यमाचार्यकं भगवत्याः।

मालती—सखि तेनेतोऽप्यपरिस्मिन्नवचिनुव.। (सहि, तेण इदो वि अवरस्सिं अवचिणुम्ह)।

कामन्दकी—(मालतीं परिष्वज्य) अयि, विरम विरम। निःसहा जातासि।

स्खलयति वचनं ते संश्रयत्यङ्गमङ्गं
जनयति मुखचन्द्रोद्भासिनः स्वेदबिन्दून्।
मुकुलयति च नेत्रे सर्वथा सुभ्रु खेद-
स्त्वयि विलसति तुल्यं वल्लभालोकनेन॥८॥

(मालती लज्जां नाटयति)

लवङ्गिका—शोभनं भगवत्याज्ञप्तम्। (सोहणं भअवदीए आणत्तं।)

माधवः—हृदयङ्गमः परिहासः।

कामन्दकी—तदास्यताम्। किंचिदाख्येयमाख्यातुकामाऽस्मि।

(सर्वा उपविशन्ति)

लवंगिका—सखी! ऐसा ही करें।

(दोनों पुष्प-चयन का नाट्य करती है।)

माधव—भगवती कामन्दकी का आचार्यत्व आश्चर्यजनक है।

मालती—सखी! अब पुष्पचयन यहाँ से अन्यत्र चलकर करें।

कामन्दकी—(मालती का आलिंगन कर) अरे! छोड़ो पुष्पचयन। छोड़ो। बहुत थक गयी हो।

हे सुन्दर भौंहो वाली! इस पुष्पचयन के परिश्रम ने तुम्हारी वाणी में स्खलन पैदा कर दिया है, सभी अंग-प्रत्यंगों को थका दिया है, मुखचन्द्र को सुन्दर बनाने वाले पसीने की बूँदें पैदा कर दी हैं एवं दोनों नेत्रों को मुकुलित बना दिया है। अतएव यह तो तुम्हारे लिए प्रियतम दर्शन के समान व्यवहार करनेवाला बन गया है॥८॥

(मालती लज्जा का नाट्य करती है।)

लवंगिका—भगवती ने ठीक ही कहा है।

माधव—यह मनोहर हास-परिहास (चल रहा) है।

कामन्दकी—तो बैठो। कुछ करने योग्य बातें कहना चाहती हूँ।

(सब बैठ जाती है।)

कामन्दकी—(मालत्याश्चिबुकमुन्नमय्य) शृणु चित्रमिदं शुभगे!

मालती—अवहितास्मि। (अवहिदम्हि)।

कामन्दकी—अस्ति तावदेकदा प्रसङ्गतः कथित एव मया माधवाभिधानः कुमारः, यस्त्वमिव मामकीनस्य मनसो द्वितीयं बन्धनम्।

लवङ्गिका—स्मराम। (सुमराओ)।

कामन्दकी—स खलु मदनोद्यानयात्रादिवसात्प्रभृति दुर्मनायमानः परवानिव शरीरोपतापेन। तथाहि—

> यदिन्दावानन्दं प्रणयिनि जने वा न भजते
> व्यनक्त्यन्तस्तापं तदयमतिधीरोऽपि विषमम्।
> प्रियङ्गुश्यामाङ्गप्रकृतिरपि चापाण्डु मधुरं
> वपुः क्षामं क्षामं वहति रमणीयश्च भवति॥९॥

लवङ्गिका—एतदपि तस्मिन्नवसरे भगवतीं त्वरयन्त्यावलोकितयोदीरितमासीत्। यथाऽस्वस्थशरीरो माधव इति। (एदं वि तस्सिं अवसरे भअवदिं तुवरावन्तीए अवलोइदाए उदीरिदं आसि। जह अस्सत्थसरीरो माहवो त्ति।)

कामन्दकी—(मालती की ठोढी को ऊपर उठाकर) हे सुन्दरी! यह एक विचित्र बात सुनो।

मालती—सावधान हूँ।

कामन्दकी—एक दिन बातचीत के प्रसंग में मैंने माधव नामक एक कुमार की कथा बतलायी थी, जो तुम्हारे ही समान मेरे मन के लिए द्वितीय बन्धन के समान है।

लवंगिका—हमें स्मरण है।

कामन्दकी—वह मदनोद्यान के यात्रा महोत्सव के दिन से ही अतीव दुःखी चित्त होकर शरीर के सन्ताप से पराधीन-सा हो गया है। क्योंकि—

वह चन्द्रमा में अथवा अपने प्रणयी जन में आनन्द की प्राप्ति नहीं करता और उसी कारण से अत्यन्त धीर-गम्भीर स्वभाव का हो कर भी इस प्रकार का अतीव अन्तस्ताप प्रकट करता है। प्रियंगु की लता के समान श्यामल वर्ण की देह-कान्ति से युक्त होकर भी किंचित् पीले एवं श्वेत रंग का होकर मनोहर एवं शनैः शनैः क्षीण होता हुआ रमणीय शरीर धारण करता है॥९॥

लवंगिका—उस अवसर पर भगवती को शीघ्रता कराती हुई अवलोकिता ने यह भी तो कहा था कि माधव का शरीर अस्वस्थ है।

कामन्दकी—यावदहमश्रृणवं मालत्येवास्य मन्मथोन्मादहेतुरिति। ममापि स एव निश्चय.। कुतः—

अनुभवं वदनेन्दुरुपागमन्नियतमेव यदस्य महात्मनः।
क्षुभितमुत्कलिकातरलं मनः पय इव स्तिमितस्य महोदधेः॥१०॥

माधवः—अहो उपन्यासशुद्धिः। अहो मम च महत्त्वारोपणे यत्नः। अथवा—

शास्त्रे प्रतिष्ठा, सहजश्च बोधः
प्रागल्भ्यमभ्यस्तगुणा च वाणी।
कालानुरोधः, प्रतिभानवत्त्व-
मेते गुणाः कामदुधाः क्रियासु॥११॥

कामन्दकी—यतस्तेन जीवितादुद्विजमानेन दुष्करमपि न किंचिन्न क्रियते। तथा हि—

धत्ते चक्षुर्मुकुलिनि रणत्कोकिले बालचूते
मार्गे गात्रं क्षिपति बकुलामोदगर्भस्य वायोः।

कामन्दकी—मैंने तो सुना है कि मालती ही माधव के इस कामोन्माद का कारण है। और हमारी भी तो यही धारणा है। क्योंकि—

यह चन्द्रमुख निश्चय ही उस महापुरुष (माधव) को प्रत्यक्ष गोचर हुआ है, जिससे तरंग रहित शान्त समुद्र के चन्द्रमा के दर्शन से चंचल तरंगों से युक्त जल राशि के समान उसका चित्त उत्कण्ठाओं से अतीव चवल होकर धैर्य-रहित बन गया है॥१०॥

माधव—अहो। यह निर्दोष वाक्य-विन्यास की विचित्रता है। हमारी महिमा की स्थापना का भी प्रयास किया गया है। आश्चर्य है। अथवा

शास्त्रों में निष्ठा, स्वाभाविक बुद्धि का विकास, प्रगल्भता, सभी गुणों से युक्त वाणी, धर्म के अनुकूल समय-कुसमय का ज्ञान और प्रतिभा की नूतनता -ये सब के सब गुण सम्पूर्ण कार्यों मे अभिलाषाओं की पूर्ति करनेवाले होते हैं॥११॥

कामन्दकी—इसीलिए माधव अपने जीवन से भयभीत होकर कोई दुष्कर कर्म नही करता है—ऐसी बात भी नहीं है। क्योंकि—

कलियों से समन्वित, शब्द करते हुए कोकिलों से युक्त नूतन आम के वृक्ष मे (मृत्यु के लिए) बारम्बार दृष्टिपात करता है, मौलसिरी के पुष्पों की सुगन्धि से सुवासित वायु के मार्ग मे मरने के लिए अनेक बार अपने शरीर को प्रेरित करता है,

दावप्रेम्णा सरसबिसिनीपत्रमात्रोत्तरीय-
स्ताम्यन्मूर्तिः श्रयति बहुशो मृत्यवे चन्द्रपादान् ॥१२॥

मालती—(स्वगतम्) एवं दुष्करं करोति सः। (एव्वं दुक्करं करेदि सो।)

कामन्दकी—तदेवं प्रकृत्या सुकुमारः कुमारः कदाचिदप्यन्यथापरिक्लिष्ट-पूर्वस्तपस्वी। यतः शक्यमनेन मरणमप्यनुभवितुम्।

मालती—सखि, आत्मनः कारणान्मर्त्यलोकालङ्कारभूतस्य तस्य किमप्याशङ्कमाना भूताविष्टेव न जानामि किं प्रतिपद्यत इति। (सहि, अत्तणो कालणादो मच्चलोआलङ्कारभूदस्स तस्स किं वि आसंकमाणा भूदाविट्ठा विअ ण आणामि किं पडिवज्जदि त्ति।)

माधवः—दिष्ट्या, अनुकम्पितोऽस्मि भगवत्या।

लवङ्गिका—भगवत्यैववादिनीत्याख्यायते। अस्माकमपि भर्तृदारिका भवनासन्नरथ्यामुखमुहूर्तमण्डनस्य तस्यैव बहुशोऽनुभूतदर्शना भूत्वा रविकराश्लिष्टमुग्धकमलिनीकन्दसुन्दरावयवशोभाविभावितानङ्गवेदनाव्यतिकररमणीयापि परिजनं दूनयति। नाभिनन्दति कलाक्रीडाः। केवलं म्लायमानकान्तहस्तपर्यस्त-

---

मात्र गीले कमलिनी के पत्र को अपने सन्तप्त शरीर पर उत्तरीय के रूप में धारण किये हुए (माधव) मलिन शरीर होकर दावाग्नि की प्रतीति से मृत्यु के लिए चन्द्रमा की किरणों का वारम्बार आश्रय ग्रहण करता है॥१२॥

मालती—(अपने आप) वह इस प्रकार के कठिन कार्य कर रहा है।

कामन्दकी—स्वभाव से ही कोमल वह कुमार (माधव) कभी अन्यत्र किसी प्रसंग में इस प्रकार का क्लेशानुभव न करने के कारण अनुकम्पा का पात्र है। क्योंकि इस प्रकार मृत्यु का भी अनुभव कर सकता है।

मालती—अपने लिए मनुष्य-लोक के शृंगार स्वरूप उनको (माधव को) किस प्रकार की विपत्ति सहनी पड़ रही है—इस आशंका से भूत के आवेश से युक्त की भांति मैं यह नहीं जान पा रही हूं कि किस प्रकार का उत्तर दिया जाय।

माधव—सौभाग्य से भगवती ने मुझ पर अनुकम्पा की है।

लवंगिका—भगवती ने (माधव की) ऐसी अवस्था की चर्चा की है, इसलिए मैं भी कुछ (अपनी सखी की अवस्था के सम्बन्ध में) कह रही हूँ। हमारे स्वामी की कन्या भी राजभवन के समीपवर्ती मार्ग के अग्र भाग को कुछ क्षणों तक अलंकृत करने वाले उन्हीं (माधव) को वारम्बार देखती हुई प्रभाकर की किरणों के स्पर्श से सुन्दर कमलिनी के मूल मृणाल दण्ड की भांति कुम्हलाए हुए अपने अंग-अंग द्वारा अपनी काम-पीड़ा को प्रकट करती हैं, और उस (काम वेदना की) दशा में

-गण्डमण्डला दिवसानानमयति । अपि च विकसितारविन्दमकरन्दविष्यन्दसुन्दरेण दरदलितकुन्दमाकन्दमधुबिन्दुसंदोहवाहिना भवनोद्यानपर्यन्तमारुतेनोत्ताम्यति । अन्यच्च यत प्रभृति तस्मिन्दिवसे निजमहोत्सवाभ्युदयदर्शनार्थं प्रतिपन्नरूपस्य कामकाननालङ्कारिणो भगवतो मन्मथस्येव तस्य माधवस्य विविधविभ्रमानुरागानुबन्धमहर्घीकृतयौवनारम्भमन्योन्यदृष्टिविनिपातवञ्चनावसरत्वरितचित्तत्वरत्कौतूहलोल्लसितसाध्वसस्तम्भमन्थरावयवप्रतिलग्नस्वेदपुलककम्पानन्दितसखीजनं परस्परावलोकनसुखं समासादितम् । ततः प्रभृति सविशेषदुःसहामासविजृम्भणोद्दामदारुणं दशापरिणाममनुभवन्ती मुहूर्तसंप्राप्तपूर्णचन्द्रोदयेव बालकमलिनी परिम्लायति । तथापि मुहूर्तमात्रहृदयविनिहितनिर्मोदमाणवल्लभसमागमा निर्भरसलिलासारसिच्यमानेव मेदिनी शीतलायत इति जानामि । येन प्रस्फुरितरदनच्छदोज्ज्वलदन्तमौक्तिकखचितकान्तिमविशेषशोभितं निरन्तरो-

---

विशेष रूप से रमणीय प्रतीत होने पर भी अपनी बढ़ती हुई विषम अवस्था से मेरे सदृष परिजनों को चिन्तित करती है। क्रीडा या कला में तो उसका मन रमता ही नहीं है। केवल थके हुए ग्लानियुक्त सुन्दर हथेली पर कपोल को रखे हुए दिनों को बिता देती है। और भी, खिले हुए अरविन्द के मकरन्द से नव विकसित, कुछ खिले हुए कुन्द और रसाल के बौरों के रस-बिन्दु-समूह को धारण करने वाले, एवं निजी भवन के उद्यान की सीमा भूमि में संचरण करने वाले वायु के सस्पर्श से भी यह उत्कण्ठित हो उठती है। और भी, उस (महोत्सव की) यात्रा के दिन, मदनोद्यान में निज महोत्सव की शोभा-सुषमा देखने की इच्छा से पधारे हुए अंग-धारी अनंग (कामदेव) भगवान के समान, उस काम-कानन के अलंकार स्वरूप उन माधव के अनेक प्रकार के विलासों द्वारा चित्त को अपहृत कर अनुरूप अनुराग से भरी चेष्टाओं द्वारा अभिनव यौवन को और अधिक मूल्यवान बना देता है। और ऐसा दर्शन जिसे अंगीकार करने की बलवती लालसा होने पर भी यथेच्छ न मिल सकने के कारण उतावला चित्त उत्कण्ठा से बावला बन जाता है। ऐसे शुभ दर्शन का पारस्परिक सुख इसे ज्यों प्राप्त हुआ कि पलकों का भांजना भी बुरा लगता था। चित्त ऐसा विह्वल हो गया था कि इसके हाथ पैर चलते ही नहीं थे। पसीने से श्लथ-विश्लथ हो गयी थी और पुलकावली खड़ी हो गयी थी। इनके इस प्रकार के पारस्परिक-प्रेम-प्रदर्शन से हम सखियों को उस समय तो बहुत ही सुख मिला था। किन्तु उसी क्षण से इसका दुःख असह्य हो उठा है। शरीर की जलन दिन-दिन बढ़ती जा रही है। अब इसकी दशा शोचनीय हो उठी है। मुहूर्त मात्र के लिए पूर्ण चन्द्रोदय का दर्शन प्राप्त करने वाली बाल-कमलिनी के समान कुछ-कुछ क्षीणकान्ति हो गयी है। फिर भी स्वल्प काल मात्र के लिए ही

ल्लसितपुलकपक्ष्मलकपोलघूर्णमानसततानन्दबाष्पस्तबकमीषद्विषमनिष्पन्दमन्थरतारोत्तानमसृणमुकुलायमाननेत्रनीलोत्पलमविरलोद्भिन्नस्वेदजलबिन्दुसुन्दरनिटिलचन्द्रलेखामनोहरं मुग्धमुखपुण्डरीकमुद्वहन्ती विदग्धसहचरीचित्तसंशयितकौमारभावा भवति। किं च उद्दामशशिमयूखनिकुरुम्बचुम्बितप्रवृत्तनिष्यन्दचन्द्रमणिहारधारिणी प्रचुरकर्पूरसविशेषशिशिरचन्दनरसच्छटासारनिकरदन्तुरितबालकदलीपत्रशयना पादसंवाहनादिव्यापारत्वरमाणसहचरीसार्थविरचितोपनीतकमलिनीदलसलिलार्द्रतालवृन्तोत्क्षिप्तेव रजनीं गमयति। कथमप्युपलब्धनिद्रासुखा प्रक्षालितपादपल्लवार्द्रमलपिण्डालक्तकरसा श्वन्यरायमानपीवरोरुमूलपादवं-विसवादितनीवीग्रन्थनोत्क्षुभ्यमानहृदयान्तरोत्तरङ्गानि स्वामिविषमर्मोच्छ्वसत्स्थूलकणकमल्पमोवरोरपरिविक्षिप्तवेपमानभुजलतावेष्टनबन्धना झटिति प्रति-

---

अपने हृदय में कान्त-समागम का अनुभव कर प्रिय पावस की अतिशय वृष्टिधारा से सिक्त धरती की भांति इसका शरीर शीतल हो जाता है—मैं ऐसा जानती हूँ। कभी-कभी तो इसके मनोहर अधर पल्लव फड़कने लगते हैं जिनमें मुक्तावली के समान समुज्ज्वल दांतों की पंक्तियों के खुल जाने से इसकी कान्ति और भी बढ़ जाती है। निरन्तर के उल्लास से इसके सुन्दर कपोल-द्वय पुलकावली युक्त हो उठते हैं और आनन्द के आंसू उन पर ढुलक पड़ते हैं। नीले कमल के समान सरस, उन्नत, कोमल, मुकुलों के समान मनोहर अधखुले नेत्रों के चारु चंचल तारे जहाँ के तहाँ निश्चल-से रह जाते हैं। नूतन चन्द्रमा की कला के समान इसका मनोमोहक ललाट-स्थल, सघन श्रम-सीकर (पसीने) के कणों के झलकने से और भी रमणीय हो उठता है और इस प्रकार जब इसका भोला भाला मुख कमल की शोभा धारण करता है तो इसकी छवि को देखकर निपुण सखियों को इसके कौमार्य पर संशय हो उठता है। और भी, चन्द्रमा की किरणों के सघन समूह के सम्पर्क होने से द्रवयुक्त चन्द्रकान्त मणि की माला को धारण कर प्रचुर कर्पूर आदि से विशेष रूप से शीतल किए गये चन्दन के रस-धार-समूह से लेप कर ऊंचे नीचे कोमल कदली के पत्तों पर लेटी हुई या तड़प-तड़प कर अति कष्ट में रात बिताती है। नींद तो अभी ही नहीं यद्यपि सखियाँ इसके चरणों के संवाहन (मर्दन) आदि कार्यों में शीघ्रता करती हैं और गीले कमलिनी के पत्तों का पंखा बना कर हवा करती हैं। ऐसी दशा में यदि हमारी स्वामिकन्या किसी प्रकार थोड़ी-सी निद्रा का सुख पा जाती है तो तत्काल ही स्वप्न में प्रियतम के समागम का सुखानुभव करने के कारण इसका सारा शरीर पसीने से डूब जाता है, जिससे चरणों में लगा हुआ लाक्षारस (महावर) भी बहने लगता है। स्थूल जघन स्पर्श

बोधवेलाविसर्जितापाङ्गदृष्टिविनिपातविज्ञानशून्यशयनीयसंजातमोहमीलल्लोचना ससंभ्रमसखीजनप्रयत्नप्रतिपन्नमूर्च्छाविच्छेदसमयसंगलितदीर्घनिःश्वासजनितजीविताशा किंकर्तव्यतामूढ प्रथमं प्रार्थितनिजजीवितावसान दुर्वारदैवदुर्विलसितोपालम्भमात्रव्यापार सखीजनं करोति। तत्पश्यतु भगवती। एषु तावल्लावण्यभूयिष्ठनिर्माणपरिपेशलेष्वङ्गेषु दारुणविजृम्भितस्य कियच्चिरं कुशलावसानता मन्मथस्य। कथं चेमानि रमणकेलिकलहोपरागपल्लवितकेरलीकपोलकोमलकोमलोद्भिन्नविमलचन्द्रिकोद्दामदलिततिमिरावरणानि विभावरीमुखानि। इमे चोल्लसितदुग्धधारापूरधवलोज्ज्वलज्योत्स्नाप्रक्षालितनभोङ्गणा परिमलितपाटलीमुकुलनिर्मथनबहुलपरिमलोत्पीडसकलनमसृणमासलमलयमारुतोद्धूमायितदशदिङ्मुखा अनर्थकारिणो भवन्ति रजनीपरिणाहाश्च प्रियसख्या।

के थरथराने से इसका नीवीबन्धन शिथिलित हो जाता है। हृदय के विक्षुब्ध होने के कारण भीतर आने-जाने वाली निःश्वास वायु से अनेक प्रकार से उत्पन्न होनेवाली पुलकावली युक्त स्तन-मण्डलों के ऊपर कांपती हुई भुजा-रूपी लताओं के बन्धन के पड़ने पर यह झट से जाग उठती है और कटाक्षों द्वारा चारों ओर से शैय्या को सूनी देखकर आँखें बंद कर बेसुध हो जाती है। फिर तो घबरायी हुई सखियों द्वारा सादर प्रबल प्रयास करने पर जब कुछ देर बाद मूर्च्छा हटती है तो इसे फिर लंबी सांसें आने-जाने लगती हैं, तब कहीं जा कर हमें इसके जीवित होने की आशा दिखायी पड़ती है। उस समय किंकर्त्तव्यविमूढ सखीजनों को यह अपने जीवन की समाप्ति चाहने की प्रार्थना व्यक्त करती हुई केवल दुर्निवार दैव को उसके निन्दनीय व्यवहार के लिए, उपालम्भ देने में प्रवृत्त करती है। भगवती स्वयं देखें कि इसके अति लावण्ययुक्त सुकुमार शरीर में क्रूरता के साथ वृद्धि को प्राप्त कामदेव की कितने दिनों बाद कुशलतापूर्वक निवृत्ति होगी। और ऐसे दुःखों में अभी इसको कितनी रातें व्यतीत करनी पड़ेंगी, जिनके पूर्व भाग के अन्धकारावरण को चारु चन्द्रिका दूर करती रहती है और जिसकी उज्ज्वलता कर्णाटक देशीय कामिनी के उन कोमल कपोल-स्थलों के समान है, जो रतिक्रीडा के कलह में उत्पन्न कोप के कारण ईषद् लाल वर्ण के हो जाते हैं। अथवा जब उमड़ते हुए क्षीरसागर के समान श्वेत-शुभ्र ज्योत्स्ना अपने प्रकाशरूपी जल से सर्वथा गगनाङ्गण की सफेदी किया करती है और जब परिमल से युक्त पाटल-पुष्प के मुकुलों के मर्दन से प्रचुर सुगन्ध के उद्गार से सम्मिश्रित होने के कारण सुख-स्पर्शी और परिपुष्ट उद्गत धूम के समान दक्षिण का वायु अपनी अठखेलियों के साथ दसों दिशाओं को प्रफुल्लित करता है, तब ऐसी लंबी-लंबी रातें हमारी इस प्रिय सखी के लिए अनर्थकारिणी हो जाती हैं।

कण्ठावलम्बिता बकुलमाला सञ्जीवनं प्रियसख्याः। (इति बकुलमालां दर्शयति) (अण्णं अ जाणिदं होदु भअवदीए। एदं अ माहप्पपडिच्छन्दआहाणं वित्तफलअं। एसा वि तस्स जेव्व सहत्थविरइदेत्ति कण्ठावलम्बिदा बउलमाला संजीवणं पिअसहीए।)

माधवः—

जितमिह भुवने त्वया यदस्याः
सखि ! बकुलावलि ! वल्लभासि जाता।
परिणतबिसदण्डकाण्डपाण्डु-
स्तनपरिणाहविलासवैजयन्ती ॥१५॥

(नेपथ्ये कलकलः। सर्वे आकर्णयन्ति)

रे रे शङ्करपुरवासिजनाः ! एष खलु यौवनारम्भभरितदुर्विषहामर्षरोषव्यतिकरबलात्कारविघटितोद्घाटितलोहपञ्जरप्रतिलग्नभग्नकलितनिगलो निजलीलाविलासोद्वेल्लवल्लभतुङ्गलाङ्गूलविकटवैजयन्तिकाविषमडामरोड्डामरशरीर-सन्निवेशो मठादपक्रम्य तत्क्षणसतृष्णकवलितानेकदेहिदेहावयवसम्पन्निष्ठुरास्थि-खण्डखण्डनटङ्कारकटकटायमानकरालकठिनदंष्ट्राकरालमुखकन्दरोविकटविस्-

---

हटा कर) यह भी उन्ही के अपने हाथो से बनायी गयी मौलसिरी के पुष्पो की माला है, जो प्रियसखी के कण्ठ मे अवलंबित है और उसके जीवन का सहारा है।

माधव—हे सखी बकुलावली ! इस संसार में तुम विजयिनी हो, जो पके हुए मृणाल दण्ड के खण्ड की भाँति नितान्त शुभ्र वर्ण के मनोहर एवं विशाल युगल स्तनों के ऊपर विलास की पताका के रूप में अवस्थित होकर उसकी प्रियतमा बन गयी हो॥१५॥

(नेपथ्य मे कोलाहल होता है। सभी लोग सुनने का नाट्य करते हैं।)

अरे ! रे ! शंकर के मन्दिर में निवास करने वालो ! यह अत्यन्त भयंकर एवं दुष्ट व्याघ्र क्रुद्ध काल के समान आचरण कर रहा है। यह अपनी नई जवानी के जोर के मारे अतीव क्रोध एवं असहिष्णुता के मिलने से उन्मत्त हो गया है। इसने खींचखाँच कर लोहे के फाटक को खोल दिया है, कटघरे से लगी जंजीर टूटकर इसके पैरों मे ही लगी हुई है। भयंकर पताका के समान अपनी प्रिय पूछ को अपनी इच्छा के अनुसार ऊपर ऐंठते हुए उठाए हुए है, जिससे इसका बन्धन-रहित भयंकर और विशाल शरीर और भी दुर्दर्शनीय बन गया है। अपने बन्धन-गृह से बाहर निकल कर इसने उसी समय क्षुधा के कारण अनेक प्राणियों के शरीर को

म्भगोद्दामदारुणचपेटामोटितपरिमिलितनरतुरङ्गजाङ्गलोद्गारभरितगलगुहागभं-गम्भीरघर्घरो रल्लिगल्लूरणशब्दमंदमंपरिपूरितनभस्तलो निहतनिष्पेषितनष्ट-निःशवितारोपजननिवहः कठोरनखरखररदलिताकृष्टजन्तुगात्रावयवप्रवृत्त-रक्तकर्दमितगतिपथो दुष्टशार्दूलः कृतान्तलीलायितं करोति। तत्परिरक्षत यथा-शक्त्यात्मनो जीवितमिति। (रे रे संकरउरवासिजाणपदा, एसो क्खु जोव्वणार-म्भभरिददुव्विसहामरिसरोसवइअरबलामोडोअविघडिदुग्घअलोहपञ्जरपडिलग्गसंग-लिअणिअलो णिअलीलाविलासुव्वेलिअवल्लहतुङ्गलङ्गूलविअडवंजअन्तिआवि-समडामरुद्दामसरीरसंणिवेसो मठाहो अवक्कमिअ सवलणसतिण्णकवलिआणेअ-देहिदेहावअवमज्झणिट्ठुरत्थिखण्डखण्डणटंकारकडकडाअन्तकरवत्तकठिणदाढाकरा-लमुहकन्दरो विअडविहंगणुद्दामदारुणचपेडामोडिअपरिमिलिअणरतुरङ्गज-ङ्गलुग्गालभरिअगलगुहागब्भगम्भीरघग्घरो रल्लिगल्लूरणसद्दसंदब्भपरिपूरिअणहो-अलो णिहदणिप्पेसिदणट्ठणिट्ठाविदासेसजणणिवहो कठोरणहरकप्परदलिआक-ड्ढअजन्तुगत्तावअवपउत्तरत्तकद्दमिअगइवहो दुट्ठसद्दूलो कअन्तलीलाइदं करेदि। ता पडिरक्खह जहासत्ति अत्तणो जीविदं त्ति)

(प्रविश्य संभ्रान्ता)

बुद्धरक्षिता—परित्रायध्वम्। एषा नः प्रियसख्यमात्यनन्दनस्य भगिनी मदयन्तिकैतेन दुष्टशार्दूलेन हतविद्रावितपरिजनाभिभूयते। (परित्ताअध। एसा

ग्रास बना दिया है। उन शरीरों के मध्य भागों को भक्षण करते समय कठोर हड्डियों को चबाते हुए यह आरे की तरह टन टन और कट कट का शब्द अपनी कठिन दाढ़ों से कर रहा है। उस समय इसके भयंकर गुफा के समान मुख का भीतरी भाग अतीव भीषण दिखाई देता है। प्रचण्ड विहार से नितान्त क्रूर चपेटों के एक ही थाप से अनेक मनुष्यों और घोड़ों को मार कर उनका रुधिर एवं मास उदर में गले तक भर कर गंभीर घोर घर्घर गर्जन ध्वनि के विस्तार से आकाश को प्रतिध्वनित कर रहा है। बहुत से लोग मारे गये। बहुतेरों का ढेर हो गया, बहुत-से लोगों का पता नहीं क्या हो गया, और बहुतेरे डर के मारे भाग रहे हैं। उसके कठोर तीक्ष्ण नखों के शरीरों पर लगने से इतना रक्त गिरा है कि सारी सड़क रक्त की कीचड से सन गयी है। तो सब लोग भाग भाग कर यथाशक्ति अपने अपने प्राणों की रक्षा करो।

(प्रवेश करके घबराई हुई-सी)

बुद्धरक्षिता—बचाइए। रक्षा कीजिए। यह भयंकर दुष्ट व्याघ्र कुछ सखियों

णो पिअसही अमच्चणन्दणस्स भइणी मदअन्तिआ एदिणा दुट्ठसद्दूलेण हदविद्दाविदपरिअणा अभिभवीअदि)

मालती—नरि लवङ्गिके, अहो महान्प्रमाद। (सहि लवङ्गिए, अहो महन्तो पमादो)

माधवः—बुद्धरक्षिते, क्वासौ?

मालती—(सहर्षसाध्वसम्। स्वगतम्) अहो, एषोऽप्यत्रैव। (अम्हहे, एसो वि एत्थ एव्व)

माधवः—(स्वगतम्) हन्त, पुण्यवानस्मि यदहमतर्कितोपनतदर्शनोल्लसितयाऽनया।

अविरलमिव दाम्ना पौण्डरीकेण नद्धः
स्नपित इव च दुग्धस्रोतसा निर्भरेण।
कवलित इव कृत्स्नश्चक्षुषा स्फारितेन
प्रसभममृतमेघेनेव सान्द्रेण सिक्तः॥१६॥

बुद्धरक्षिता—महाभाग, एष खलूद्यानबाह्यरथ्यामुखे। (महाभाअ, एसो क्खु उज्जाणबाहिअरत्थामुहे)

माधवः—(साटोपम्) अप्रमत्तोऽस्मि।

मालती—लवङ्गिके, सप्राणः खलु जात। (लवङ्गिए, ससओ क्खु जादो)

को मार कर और कुछ को भगाकर हमारी प्रिय सखी एवं अमात्यनन्दन की भगिनी मदयन्तिका पर आक्रमण कर रहा है।

मालती—लवंगिके! हाय! यह तो बड़ी असावधानी है।

माधव—बुद्धरक्षिते! वह (व्याघ्र) है कहाँ?

मालती—(हर्ष मिश्रित भय के साथ) अहो! यह भी यहीं पर है।

माधव—(अपने आप) यह हर्ष की बात है जो आकस्मिक ढंग से मुझे यहाँ उपस्थित देखकर यह चकित दृष्टि से मुझे देख रही है। मैं धन्य हो उठा हूँ।

इस प्रकार इन्होंने श्वेत कमलों की माला द्वारा जैसे मुझे खूब कस कर बाँध दिया है, सघन दुग्ध की धारा से जैसे मुझे स्नान करा दिया है, अपने प्रीति-प्रफुल्ल नेत्रों से हमारे समस्त अंगों को ग्रास बना लिया है और अविरल अमृतवर्षी मेघों से जैसे मुझे बलपूर्वक सींच दिया है॥१६॥

बुद्धरक्षिता—महानुभाव! वह व्याघ्र उद्यान के बाहरी मार्ग के अग्रभाग पर है।

माधव—(दर्प समेत) मैं सावधानीपूर्वक सुन रहा हूँ।

मालती—लवंगिके! (मदयन्तिका का जीवन) संशय युक्त हो गया है।

माधवः—(सबीभत्सम्) अहह।

संसक्तत्रुटितविवर्तितान्त्रजाल-

व्याकीर्णस्फुरदपवृत्तरुण्डखण्डः।

कीलालव्यतिकरगुल्फदघ्नपङ्कः

प्राचण्ड्यं वहति नखायुधस्य मार्गः॥१७॥

अहो प्रमादः।

वयं बत! विदूरतः क्रमगता पशोः कन्यका।

सर्वाः—हा मदयन्तिके ! (हा मदअन्तिए!)

कामन्दकीमाधवौ—(सहर्षाकूतम्)

कथं तदवपातितादधिगतायुधः संभ्रमात्।

कुतोऽपि मकरन्द एत्य सहसैव मध्ये स्थितः।

इतराः—साधु, महाभाग! साधु। (साहु, महाभाअ! साहु।)

कामन्दकीमाधवौ—

दृढं च पशुनाहतो व्यसुरसौ कृतश्चामुना॥१८॥

इतराः—अत्याहितम्। (अच्चाहिदं)

माधव—(घृणा के साथ) अहह!

यह दुष्ट व्याघ्र जिस मार्ग पर से हो कर गया है वह अतीव भयकर बन गया है। (मनुष्यों आदि के) छिन्न-भिन्न शरीर कही उलटे पड़े हुए हैं, कही उनकी अंतड़ियाँ दिखायी पड़ रही हैं, कही चलते हुए और कही गिरे हुए कबन्ध पड़े हैं, रक्त से सना हुआ कीचड़ पिंडुली तक फैला हुआ है॥१७॥

अहो! असावधानी हो गयी है। हम तो (इतनी) दूर हैं और बेचारी कन्या उस क्रूर पशु के पादक्षेप के समीप पहुच गयी है।

सभी स्त्रियाँ—हाय मदयन्तिके!

कामन्दकी और माधव—(हर्ष और अभिप्राय के समेत)

अरे किस प्रकार से मकरन्द अकस्मात् शीघ्रतापूर्वक आकर उस क्रूर व्याघ्र से मारे गये सशस्त्र पुरुष से हथियार लेते हुए बीच मे खड़ा हो गया है।

दूसरी स्त्रियाँ—हे महानुभाव! आप धन्य हैं। धन्य हैं।

कामन्दकी और माधव—उस क्रूर पशु ने मकरन्द को दृढता के साथ घायल कर दिया है किन्तु मकरन्द ने उसे निष्प्राण कर दिया है। ॥१८॥

दूसरी स्त्रियाँ—बहुत बड़ा आश्चर्यजनक काम किया।

कामन्दकी—(साकूतम्) कथं व्यालनखप्रहारनिःसृतरक्तनिवहः क्षितितलविपक्तखड्गलतावष्टम्भनिश्चलः संभ्रान्तमदयन्तिकावलम्बितस्ताम्यति वत्सो मकरन्दः।

इतराः—हा धिक्, गाढप्रहारतया क्लाम्यति महाभागः। (हद्धि, गाढप्पहारदाए, किलम्मदि महाभाओ।)

माधवः—कथं प्रमुग्ध एव। भगवति! परित्रायस्व माम्।

कामन्दकी—वत्स, अतिकातरोऽसि। नन्वेहि, पश्यावस्तावत्।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे तृतीयोऽङ्कः।

कामन्दकी—(साभिप्राय) व्याघ्र के नाखून के प्रहार से बहुत सारा रक्त निकल गया है, फिर भी पृथ्वी तल पर लगे हुए खड्ग के अवलंबन से वह निश्चल है, मदयन्तिका ने बड़ी फुर्ती से उसे सहारा दिया है, अहा, मेरा स्नेहभाजन मकरन्द किस प्रकार मूर्च्छित हो गया है।

दूसरी सभी स्त्रियाँ—हाय! धिक्कार है। गंभीर आघात के कारण महाभाग मकरन्द अतीव क्लान्त हो गये हैं।

माधव—अरे क्या मूर्च्छित हो गया है? भगवती! मुझे बचाइए।

कामन्दकी—बेटा! तुम बहुत कातर हो गये हो। आओ, हमारे साथ। हम चल कर देखें।

(सब लोग जाते हैं।)

महाकवि भवभूति रचित मालतीमाधव नाटक में शार्दूल-विद्रावण नामक-तृतीय अंक समाप्त।

चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशतो मदयन्तिकामालतीभ्यामवलम्ब्यमानौ मूर्च्छौ मकरन्दमाधवौ सम्भ्रान्ता कामन्दकी बुद्धरक्षिता लवङ्गिका च)

मदयन्तिका—प्रसीद भगवति, परित्रायस्व मदयन्तिकानिमित्तं संशयित-जीवितं विपन्नानुकम्पिनं महाभागम्। (पसीद भअवदि, परित्ताहि मदअन्तिआ-णिमित्तं संसइदजीविदं विवण्णाणुकम्पिणं महाभाअं।)

इतराः—हा धिक्। किमिदानीमत्र प्रेक्षितव्यमस्माभिः। (हृद्धि। किं दाणिं एत्थ पेक्खिदव्व अम्हेहिं।)

कामन्दकी—(उभौ कमण्डलूदकेन सिक्त्वा) ननु भवत्यः! पटाञ्चलैर्वी-जयध्वम्।

(मालत्यादयस्तथा कुर्वन्ति)

मकरन्दः—(समाश्वस्यावलोक्य च) वयस्य, अतिकातरोऽसि। किमेतत्। ननु स्वस्थ एवास्मि।

चतुर्थ अंक

(तदनन्तर मदयन्तिका और मालती द्वारा सहारा दिए गये मूर्च्छित मकरन्द और माधव प्रवेश करते हैं। तथा उनके साथ शीघ्रता में व्यस्त कामन्दकी बुद्धरक्षिता और लवंगिका रहती हैं।)

मदयन्तिका—भगवती प्रसन्न हों। मदयन्तिका के लिए अपने जीवन को संशयग्रस्त करने वाले और विपद्ग्रस्त जन पर दया करने वाले महाभाग की आप रक्षा करें।

दूसरी स्त्रियाँ—हाय धिक्कार है। हम लोग इस समय क्या देखें (करें)।

कामन्दकी—(मकरन्द और माधव को कमण्डलु के जल से सेचन कर) अरे महाभाग्यशालिनियों। अपने वस्त्राचलों से हवा करती जाओ।

(मालती आदि अपने वस्त्राचलों से वैसा ही (हवा करती) हैं।)

मकरन्द—(होश में आकर और देखकर) मित्र! तुम बहुत कातर हो। यह क्या है?

अरे मैं तो स्वस्थ हूँ।

मदयन्तिका—अहो, इदानीं प्रतिबुद्धो मकरन्दपूर्णचन्द्रेण। (अम्हहे, दाणिं पडिबुद्धं मअरन्दपुण्णचन्देण।)

मालती—(माधवस्य ललाटे हस्तं दत्त्वा) महाभाग, दिष्ट्या वर्धसे। ननु भणामि प्रतिपन्नचेतनो महाभाग इति। (महाभाअ, दिट्ठिआ वड्ढसि। ण भणामि पडिवण्णचेदणो महाभाओ त्ति।)

माधवः—(समाश्वस्य) वयस्य, साहसिक, एह्येहि। (इत्यालिङ्गति)

कामन्दकी—(उभौ शिरस्याघ्राय) दिष्ट्या जीवद्वत्सास्मि।

इतराः—प्रियं नः संवृत्तम्। (पिअं णो संवुत्तं।)

(सर्वा हर्षं नाटयन्ति)

बुद्धरक्षिता—(जनान्तिकम्) सखि मदयन्तिके, एष एव सः। (सहि मदअन्तिए, एसो ज्जेव्व सो)

मदयन्तिका—सखि, ज्ञातमेव मया यथैष माधवोऽयमपि स जन इति। (सहि णादो ज्जेव्व मए जह एसो माहवो अअं वि सो जणो त्ति।)

बुद्धरक्षिता—अपि सत्यवादिन्यहम्। (अवि सच्चवादिणी अहं)?

मदयन्तिका—अहो। अब मकरन्द रूपी पूर्णचन्द्र ने चैतन्य का लाभ कर लिया है।

मालती—(माधव के ललाट पर हाथ लगाकर) महाभाग! सौभाग्य से तुम्हारी उन्नति हो रही है। अरे! मैं (आप से) कह रही हूं कि महाभाग (मकरन्द) ने चैतन्य लाभ कर लिया है।

माधव—(आवेग में आकर) साहसी मित्र! आओ, आओ।

(आलिङ्गन करता है।)

कामन्दकी—(दोनों का मस्तक सूंघते हुए) सौभाग्य से हमारे बच्चे बच गए हैं।

दूसरी स्त्रियाँ—हम लोगों की अभीष्ट-सिद्धि हो गयी।

(सभी हर्षित होने का नाट्य करती हैं।)

बुद्धरक्षिता—(केवल मदयन्तिका को सुनाकर) सखी मदयन्तिके! यह वही हैं।

मदयन्तिका—सखी! मैं समझ गयी हूं कि जैसे (स्वभाव) के यह माधव हैं उसी प्रकार के यह भी हैं।

बुद्धरक्षिता—अब तो मैं सत्यवादिनी हूं न।

मदयन्तिका—न खल्वस्मादृशीषु युष्मादृश्य. पक्षपातिन्यो भवन्ति। (माधवमवलोक्य) सखि, मालत्या अपि रमणीयोऽस्मिन्महानुभावेऽनुराग-प्रवादः। (इति मकरन्दमेव सस्पृहमवलोकयति) (ण क्खु अम्हारिसेसु तुम्हारिसीओ पक्खवादिणीओ होन्ति। सहि, मालदीए वि रमणिज्जो इमस्सि महाणुहावे अणुराअप्पवादो।

कामन्दकी—(स्वगतम्) रमणीयोर्जितं हि मदयन्तिकामकरन्दयोर्दैवादद्य दर्शनम्। (प्रकाशम्) वत्स मकरन्द, कथं पुनरायुष्मानस्मिन्नवसरे मदयन्तिका-जीवितपरित्राणहेतोर्भगवता दैवेन सन्निधापितः।

मकरन्दः—अद्याहमन्तर्नगरमेव कांचिद्वार्तामुपश्रुत्य माधवचित्तोद्वेग-मधिकमाशङ्कमानस्त्वरितमवलोकितानिवेदितकुसुमाकरोद्यानवृत्तवृत्तान्तः परापतन्नेव शार्दूलावस्कन्दगोचरामिमामभिजातकन्यकामभ्युपपन्नवानस्मि।

(मालतीमाधवौ विमृशतः)

कामन्दकी—(स्वगतम्) वृत्तान्तेन खलु मालतीप्रदानेन भवितव्यम्।

मदयन्तिका—हमारी जैसी (सरल मनोवृत्ति वाली) स्त्रियों के लिए तुम्हारी जैसी स्नेहयुक्त सखियाँ कभी पक्षपातिनी नहीं होती हैं। (माधव को देखकर) सखी! इन महानुभाव में मालती का भी प्रेमप्रवाद मनोहर ही है।

कामन्दकी—(अपने आप) आज भाग्य से मदयन्तिका और मकरन्द का इस प्रकार का पारस्परिक दर्शन अतीव मनोहर और तेजस्विता से युक्त हुआ। (प्रकट रूप में) बेटा मकरन्द! मदयन्तिका की जीवन-रक्षा के लिए भगवान् विधाता ने ऐसे संकट के क्षणों में आयुष्मान् को (तुम्हें) किस प्रकार उपस्थित कर दिया था।

मकरन्द—आज मैं नगर के भीतर कोई वृत्तान्त (समाचार) सुनकर--इससे माधव जी के चित्त में अधिक उद्वेग होगा—ऐसी आशंका कर रहा था कि उसी समय अवलोकिता ने मुझे कुसुमाकर उद्यान की खबर दी। तब मैं उसी ओर चल पड़ा कि इसी बीच उस क्रूर व्याघ्र के पंजे में पड़ती हुई उस कुलीन कन्या के समीप पहुँच गया और उसकी रक्षा के प्रयास में जुट गया।

(मालती और माधव चिन्ता करने लगते हैं।)

कामन्दकी—(अपने आप) वह वृत्तान्त (समाचार) मालती को (नन्दन के लिए) दिए जाने का रहा होगा। (प्रकट रूप में) बेटा माधव! सौभाग्य

(प्रकाशम्) वत्स! माधव!! दिष्ट्या वर्धितोऽसि मालत्या। सोऽयमवसरः प्रीतिदानस्य।

माधवः—भगवति, इयं मालती—

यद्व्यालव्रणितसुहृत्प्रमोहमुग्धं
कारुण्याद्विहितवती गतव्यथं माम्।
तत्कामं प्रभवति पूर्णपात्रवृत्त्या
स्वीकर्तुं मम हृदयं च जीवितं च॥१॥

लवङ्गिका—प्रतीष्ट. खलु न. प्रियसख्याऽयं प्रसादः। (पडिच्छिदो क्खु णो पिअसहीए अअं पसादो।)

मदयन्तिका—(स्वगतम्) जानाति महानुभावोऽयं जनो रमणीयं मन्त्रयितुम्। (जाणादि महाणुहावो अअं जणो रमणिज्ज मन्तेदुं।)

से मालती ने तुम्हे (ललाट मे करतल के स्पर्श से होश मे लाकर) उपकृत किया है। अतएव तुम्हारे लिए भी प्रीति-दान का यह (अच्छा) अवसर है।

माधव—भगवती! यह मालती—

(उस दुष्ट) व्याघ्र के आघात से क्षत-विक्षत शरीर वाले अपने मित्र (मकरन्द) की मूर्च्छा के कारण मूर्च्छित मुझ को अपनी दया, सहानुभूति एव करुणा से व्यथाविहीन बनाते हुए, पूर्णपात्र[1] की भाति अपनी इच्छा से हमारे हृदय और जीवन दोनो को स्वीकार करने मे समर्थ हैं॥१॥

लवंगिका—हमारी प्रियसखी इस अनुग्रह (पूर्वक किए गए दान) को अवश्य ही ग्रहण करेगी।

मदयन्तिका—(अपने आप) यह महानुभाव उपयुक्त समय पर सुन्दर भाषण करना जानते हैं।

---

१. उत्सव आदि के अवसरो पर प्रियजनों द्वारा प्रस्तुत वस्त्रालंकार आदि से भरे-पुरे पात्र को लोग प्रसन्नता से जबरदस्ती खींच कर छीन लेते थे, उसे पूर्णपात्र कहा जाता है। जैसा कि आचार्य का कथन है—हर्षादुत्सवकाले यदलंकारांशुकादिकम्। आकृष्य गृह्यते पूर्णपात्रं पूर्णानकं च तत्॥

मालती—(स्वगतम्) किं नाम मकरन्देनोद्वेगकारणं श्रुतं भविष्यति। (किं णाम मअरन्देण उव्वेअकारणं सुदं हुविस्सदि।)

(प्रविश्य)

पुरुषः—वत्से मदयन्तिके, भ्राता ते ज्यायानमात्यनन्दनः समादिशति। अद्य परमेश्वरेणास्मद्भवनमागत्य भूरिवसोरुपरि परं विश्वासमस्मासु च प्रसादमाविष्कुर्वता स्वयमेव मालती प्रतिपादिता। तदेहि सभाजयावः प्रसादमिति।

मकरन्दः—वयस्य, इयं सा वार्ता।

(मालतीमाधवौ वैवर्ण्यं नाटयतः)

मदयन्तिका—(सहर्षं मालतीमाश्लिष्य) सखि मालति! त्वं खल्वेकनगरनिवासेन पांसुक्रीडनात्प्रभृति प्रियसखी भगिनी च साम्प्रतं पुनरस्माकं गृहस्य मण्डनं जाताऽसि। (सहि मालदि! तुमं क्खु एक्कणअरणिवासेण पंसुकीलणादो पहुदि पिअसही भइणी अ संपदं उण अम्हाणं घरस्स मण्डणं जादासि।)

कामन्दकी—वत्से मदयन्तिके, वर्धसे भ्रातुर्मालतीलाभेन।

मालती—(अपने आप) मकरन्द ने कौन सा (माधव के लिए) उद्वेगजनक समाचार सुना होगा।

माधव—मित्र! हमारे लिए वह अति उद्वेगजनक समाचार क्या था?

(प्रवेश करके)

(एक) पुरुष—बेटी मदयन्तिके! आपके ज्येष्ठ भाई अमात्यनन्दन ने आज्ञा दी है कि—आज महाराज ने हमारे निवास-स्थान पर पधार कर अमात्य भूरिवसु के ऊपर अतीव विश्वास तथा हमारे ऊपर परम अनुग्रह प्रकट करते हुए हमारे लिए स्वयमेव मालती को प्रदान किया है। अतः चलो महाराज की कृपा का अभिनन्दन करें।

मकरन्द—मित्र! तो यही वह समाचार है।

(मालती और माधव के मुख मलिन हो जाते हैं—ऐसा नाट्य करते हैं।)

(मदयन्तिका—हर्षपूर्वक मालती का आलिंगन कर) सखी मालती! (हम) तुम इसी एक ही नगर में निवास करते हुए, धूल में खेलने से लेकर मेरी बहिन और प्रियसखी की तरह रही हो। अब फिर तुम हमारे घर का अलंकार बन रही हो।

कामन्दकी—बेटी मदयन्तिके! सौभाग्य से तुम्हारे भाई को मालती प्राप्त हुई। इसके लिए तुम्हें बधाई है।

मदयन्तिका—युष्माकमाशिषां प्रसादेन। सखि लवङ्गिके, भरिता नो मनोरथा युष्माकं लाभेन। (तुम्हाणं आसिसाणं पसादेण। सहि लवङ्गिए, भरिआ णो मणोरहा तुम्हाणं लाहेण)

लवङ्गिका—सखि, अस्माकमप्येतन्मन्त्रयितव्यम्। (सहि, अम्हाणं वि एदं मन्तिदव्वम्)

मदयन्तिका—सखि बुद्धरक्षिते, एहि तावत्। महोत्सव संभावयावः। (सहि बुद्धरक्खिदे, एहि दाव। महोसवं संभावेम्ह) (इत्युत्तिष्ठतः)

लवङ्गिका—(जनान्तिकम्) भगवति, यथा हृदयभरितोद्भिद्यमानविस्मयानन्द-सुन्दरघूर्णितधीरपर्यन्तमनोहरा पर्यस्यन्ते मदयन्तिकामकरन्दयोर्दलितनीलोत्पलमांसलच्छवयो दृष्टिसंभेदा, तथा मन्ये मनोरथनिर्वृत्तसमागमावेताविति। (भअवदि, जह हिअअभरिउब्भिज्जन्तविम्हआणन्दसुन्दरघोलाविदधीरपेरन्तमणोहरा पल्लत्थन्ति मदअन्तिआमअरन्दाणं दलिदणीलुप्पलमसलच्छविआ दिट्ठिसंभेआ, तह मण्णे मणोरहणिव्वुत्तसमाअमा एदे त्ति)

कामन्दकी—(विहस्य) नन्विमौ परस्परं मानसं मोहनमनुभवतः। तथा हि—

> ईषत्तिर्यग्वलनविषमं कूणितप्रान्तमेत-
> त्प्रेमोद्भेदस्तिमितललितं किंचिदाकुञ्चितभ्रु।

मदयन्तिका—आप लोगों के आशीर्वाद का अनुग्रह है। सखी लवंगिके! हमारे मनोरथ तुम लोगों के मिल जाने से सफल हो गये हैं।

लवंगिका—सखी! यही तो हम लोगों को भी कहना चाहिए।

मदयन्तिका—सखी बुद्धरक्षिता! आओ! महोत्सव मनायें।

(दोनों उठती हैं।)

लवंगिका—(केवल कामन्दकी को सुनाकर) भगवती! जिस प्रकार के हृदय में भरे हुए और बाहर निकलते हुए आश्चर्य और हर्ष से मनोहर, चचल एवं धीरता से युक्त, अपागदेश में सुन्दर दिखाई देनेवाले पूर्ण विकसित नील कमल के समान छलकती हुई मांसल शोभा से समन्वित मदयन्तिका और मकरन्द के कटाक्ष-विक्षेप हैं, उस प्रकार से मैं विचार करती हूँ कि इनके भी पारस्परिक समागम के मनोरथ मानों पूरे हो गये हैं।

कामन्दकी—(हँस कर) निश्चय ही ये दोनों मन ही मन समागम के सुख का अनुभव कर रहे हैं। क्योंकि—

इनकी आँखें एक दूसरे को देखते समय कुछ तिरछी होने के कारण विस्तृत होने पर भी वक्र (टेढ़ी) हो गयी है, तीन ओर से सकुचित होकर एक ही भाग

अन्तर्मोदानुभवनसृणं स्रस्तनिष्कम्पपक्ष्म
व्यक्तं शंसत्यचिरमनयोर्दृष्टमाकेकराक्षम् ॥२॥

पुरुष.—वत्से मदयन्तिके ! इत इतः।

मदयन्तिका—(अपवार्य) सखि बुद्धरक्षिते, अपि पुनर्द्रक्ष्यत एष जीवितप्रदायी पुण्डरीकलोचनः। (सहि बुद्धरक्खिदे, अवि पुणो दीसइ एसो जीविदप्पदाई पुण्डरीअलोअणो)

बुद्धरक्षिता—यदि दैवमनुकूलयिष्यति। (जइ देव्वं अणुऊलइस्सदि) (इति निष्क्रान्ता)

माधवः—(अपवार्य)

चिरावाशातन्तुस्त्रुटतु बिसिनीसूत्रभिदुरो
महानाधिर्व्याधिर्निरवधिरिदानीं प्रसरतु।
प्रतिष्ठामव्याजं व्रजतु मयि पारिप्लवधुरा
विधिः स्थैर्यं धत्तां भवतु कृतकृत्यश्च मदनः ॥३॥

में विकसित हो रही हैं, अनुराग के प्रकट होने से निश्चल एवं मनोहर हो गयी हैं; दोनों भौंहें किंचित् सकुचित हैं, मन ही मन आनन्द की अनुभूति के कारण अनुराग से रंजित हैं, पक्ष्म (बरौनियाँ) शिथिलित एवं निश्चल हैं—इस प्रकार इन दोनों का कभी विकसित और कभी संकुचित नेत्रों वाला पारस्परिक दर्शन स्पष्ट रूप से इनके मानसिक समागम के सुखानुभव की सूचना दे रहा है ॥२॥

पुरुष—बेटी मदयन्तिके ! इधर, इधर आओ।

मदयन्तिका—(केवल बुद्धरक्षिता को सुना कर) सखी बुद्धरक्षिता ! मुझे जीवन देने वाले, श्वेत कमल के समान मनोहर नेत्रों वाले यह क्या फिर देखने को मिल सकेंगे ?

बुद्धरक्षिता—यदि दैव अनुकूल होगा तो। (ऐसा कहकर जाती हैं।)

माधव—(केवल कामन्दकी को सुनाकर) मृणाल के तन्तु की भाँति नितान्त क्षीण हमारी आशा का तन्तु चिरकाल के अनन्तर टूट जाय, अति गंभीर मनोव्यथा रूप व्याधि सीमारहित अथवा चिरस्थायी बन कर फैल जाय, चित्त की चंचलता का भार हमारे ऊपर निष्कपट रूप से प्रतिष्ठित हो जाय, भाग्य भी स्थिरता को प्राप्त कर ले तथा कामदेव भी कृतकृत्य हो जाय ॥३॥

अथवा

समानप्रेमाणं जनमसुलभं प्रार्थितवतो
विधौ वामारम्भे मम समुचितैया परिणतिः।
तथाऽप्यस्मिन्दानश्रवणसमयेऽस्याः प्रविगल-
त्प्रभं प्रातश्चन्द्रद्युति वदनमन्तर्दहति माम्॥४॥

कामन्दकी—(स्वगतम्) एवं दुर्मनायमानं पीडयति मां वत्सो माधवो वत्सा मालती च। दुष्करं निराशा प्राणितीति। (प्रकाशम्) वत्स माधव, पृच्छामि तावदायुष्मन्, त्वाम्। अथ किं भवानमस्त यथा भूरिवसुरेव मालतीमस्मभ्यं दास्यतीति।

माधवः—(सलज्जम्) नहि नहि।

कामन्दकी—न तर्हि प्रागवस्थाया भूरिवसु परिहीयते।

मकरन्दः—दत्तपूर्वेत्याशङ्क्यते।

अथवा—तुल्य प्रेम रखनेवाली किन्तु (पिता आदि के कारण) दुर्लभ उस (मालती) को प्राप्त करने की इच्छा रखनेवाले मुझको भाग्य की कुटिलता के कारण जो यह परिणाम देखना पड रहा है वह उचित ही है, किन्तु फिर भी नन्दन को दिये जाने की बात सुनते समय प्रफुल्लताविहीन प्रातःकाल के चन्द्रमा के समान फीकी शोभा से युक्त मालती का वह मुख मुझे भीतर ही भीतर जला रहा है॥४॥

कामन्दकी—(अपने आप) इस घटना से अतीव दुःखी वत्स माधव एवं बेटी मालती—दोनों मुझे दुःख दे रहे हैं। आशा के भग होने पर लोग बडी कठिनाई से जीवित रहते हैं। (प्रकट रूप मे) वत्स माधव! आयुष्मान्! मैं तुमसे पूछती हूं कि क्या तुमने यह मान लिया था कि स्वय भूरिवसु ही मुझे मालती को समर्पित कर देंगे।

माधव—(लज्जा के साथ) नही, नही।

कामन्दकी—यदि ऐसा है तो भूरिवसु पहले की अवस्था से पीछे नही हट रहे हैं।

मकरन्द—पहले दी जा चुकी है—(मालती पहले ही नन्दन को वाग्दत्ता हो चुकी है—) यही आशंका है।

कामन्दकी—जानामि ता वार्ताम्। इदं तावत्प्रसिद्धमेव यथा नन्दनाय मालती प्रार्थयमानं भूरिवसुर्नृपतिमुक्तवान् 'प्रभवति निजकन्यकाजनस्य महाराज' इति।

मकरन्दः—अस्त्येतत्।

कामन्दकी—अद्य च राज्ञा स्वयमेव मालती दत्तेति संप्रत्येव पुरुषेणावेदितम्। तद्वत्स, वाक्प्रतिष्ठानि देहिना व्यवहारतन्त्राणि। वाचि पुण्यापुण्यहेतवो व्यवस्थाः सर्वथा जनानामायत्तन्ते। सा च भूरिवसोर्वागनृतामिवैव। न खलु महाराजस्य निजकन्यका मालती। कन्यकाप्रदाने च नृपतयः प्रमाणमिति नैवविधो धर्माचारसमयः। तस्मादवस्थितमेवैतत्। कथं च मामनवधाना मन्यसे। पश्य—

मा वां सपत्नेष्वपि नाम तद्रू-
त्पापं यदस्यां त्वयि वा विशङ्क्यम्।
तत्सर्वथा संगमनाय यत्नः
प्राणव्ययेनापि मया विधेयः॥५॥

कामन्दकी—मैं उस बात को जानती हूं। यह तो प्रसिद्ध बात है कि नन्दन के लिए मालती को मागने वाले राजा से भूरिवसु ने कहा है कि—अपनी कन्या के विषय में महाराज का सब कुछ करने का अधिकार है।

मकरन्द—यह बात ठीक है।

कामन्दकी—अभी अभी उस पुरुष ने बताया है कि आज राजा ने स्वयं ही मालती का दान दिया है। तो हे वत्स! प्राणियो के समस्त कार्य-व्यापार वचन के ऊपर ही प्रतिष्ठित होते हैं। मनुष्यों के धर्म और अधर्म की विधियाँ सभी प्रकार से वचन के ही अधीन रहती हैं। भूरिवसु का यह वचन मिथ्या ही है। क्योंकि मालती महाराज की अपनी कन्या नहीं है। कन्याओ के दानप्रसग मे राजा ही नियन्ता है—ऐसा धर्मशास्त्र एवं लोकाचार का भी विधान नही है। इसलिए यह सब (भूरिवसु की बातचीत) उपचार मात्र ही है। कैसे तुम समझ रहे हो कि मैं असावधान हू। देखो—

मालती के और तुम्हारे विषय मे जिस प्रकार के अनिष्ट की आशंका की जा रही है। वह तुम दोनो के शत्रुओ के लिए भी न हो। इसीलिए मैं अपने प्राणों को देकर भी तुम दोनो के समागम के लिए प्रयत्न करना चाहूंगी॥५॥

मकरन्दः—सर्वं युक्तयुज्यमानमभिहितं युष्माभिः। अपि च—

दया वा स्नेहो वा भगवति निजेऽस्मिन्शिशुजने
भवत्याः संसाराद्विरतमपि चित्तं द्रवयति।
ततश्च प्रव्रज्यासमयसुलभाचारविमुखः
प्रसक्तस्ते यत्नः प्रभवति पुनर्दैवमपरम्॥६॥

(नेपथ्ये)

भगवति कामन्दकि, एषा भर्त्री विज्ञापयति यथा मालतीं गृहीत्वा त्वरितमागच्छेति। (भअवइ कामन्दइ, एसा भट्टिणी विण्णवेदि जहा मालदिं घेत्तूण तुरिदं आअच्छेत्ति)

कामन्दकी—वत्से उत्तिष्ठोत्तिष्ठ।

(सर्वा उत्थाय परिक्रामन्ति)

(मालतीमाधवौ सकरुणानुरागमन्योन्यमवलोकयतः)

माधवः—कष्टम् एतावती हि माधवस्य मालत्या सह लोकयात्रा। अहो नु खलु भोः—

मकरन्द—आप तो सभी बातें सुन्दर एवं युक्तिसंगत बतला रही हैं। और भी, हे भगवती! अपने इस शिशु (मालती और मुझमें) जन में आपकी दया अथवा स्नेह संसार से विरक्त होते हुए भी आपके चित्त को द्रवित कर दे रहा है। इसी कारण आपके सन्यास काल में नियमित सम्पूर्ण आचारव्यवहारों का विरोधी आपका यह यत्न हो रहा है और इसके अतिरिक्त भाग्य का प्रभाव भी तो है ही॥६॥

(नेपथ्य में)

भगवती कामन्दकी! यह महारानी जी आज्ञा कर रही है कि मालती को लेकर आप तुरन्त आ जायें।

कामन्दकी—बेटी! उठो, उठो।

(सभी उठकर चलने का नाट्य करती है।)

(मालती और माधव एक दूसरे को करुणा और अनुराग की दृष्टि से देखते हैं।)

माधव—कष्ट की बात है। मालती के साथ माधव की बस इतना ही लोकयात्रा थी। हाय!

सुहृदिव प्रकटय्य सुखप्रदां
प्रथममेकरसामनुकूलताम्।
पुनरकाण्डविवर्तनदारुणः
प्रविशिनष्टि विधिर्मनसो रुजम्॥७॥

मालती—(अपवार्य) महानुभाव लोचनानन्दकर, एतावद् दृष्टोऽसि। (महाणुहाअ लोअणाणन्दअर, एत्तिअं दिट्ठोसि)

लवङ्गिका—हा धिक्। शरीरसंशयमेव नः प्रियसख्यारोपिताऽमात्येन। (हद्धि। सरीरसंसअं जेव्व णो पिअसही आरोविदा अमच्चेण)

मालती—परिणतमिदानीं जीवितनृष्णायाः फलम्। निर्व्यूढं च निष्करुणतया तातस्य कापालिकत्वम्। परिनिष्ठितो दैवहतकस्य दारुणसमारम्भपरिणामः। तत्कं वोपालभे मन्दभागिनी। कं वाऽशरणा शरणं प्रतिपद्ये। (परिणदं दाणिं जीविदतिण्हाए फलम्। णिव्वूढं अ णिक्करुणदाए तादस्स कावालिअत्तणं। परिणिट्ठिदो देव्वहदअस्स दारुणसमारम्भपरिणामो। ता कं वा उवालभामि मन्दभाइणी। कं वा असरणा सरणं पडिवज्जामि)

विधाता मित्र एवं बन्धुजनों की भाँति पहले सुख देनेवाली एकमुखी अनुकूलता प्रकट करके पीछे से बिना अवसर के ही परिवर्तन कर क्रूर बन कर मन की पीड़ा को अतिशय बढ़ा रहा है॥७॥

मालती—(केवल माधव को सुनाकर) नेत्रों को आनन्द देनेवाले महानुभाव! आप इतने ही क्षणों तक देखे गये हैं।

लवंगिका—हाय धिक्कार है। मंत्री महोदय ने हमारी प्रियसखी के शरीर को संशय में डाल दिया है। (अर्थात् यह जीवित रह सकेगी—इसमें भी सन्देह हो गया है।)

मालती—अब मेरे जीवन की लालसा का फल समाप्त हो गया। निर्दयी होने के कारण पिता जी का कापालिकत्व[1] सम्पन्न हो गया। दुष्ट विधाता ने जिस भाव से इस दारुण कर्म का समारम्भ किया था उसी भाव से उसका परिणाम भी सम्पन्न हो गया। तो मैं मन्दभागिनी अब किसे उलाहना दूँ। और मैं अशरणा किसकी शरण में जाऊँ।

---

१. जिस प्रकार कापालिक लोग स्त्रियों अथवा बालकों की बलि दे कर अपने इष्टदेव को प्रसन्न करते हैं उसी प्रकार हमारे पिता जी भी हमारा जीवन बलि दे कर अपने इष्टदेव महाराज को सुप्रसन्न करना चाहते हैं।

लवङ्गिका—सखि, इत इत। (परिक्रमन्ति) (सहि, इदो इदो)

माधवः—(स्वगतम्) नूनमाश्वासनमात्रमेतन्मामेवम्य सहजस्नेहमात्रकातरा भगवती करोति। (सोद्वेगम्) हन्त, सर्वथा गतविनजन्मसाफल्यः संवृत्तोऽस्मि। तत्किं कर्तव्यम्। (विचिन्त्य) न खलु महामांसविक्रयादन्यमुपायं पश्यामि। (प्रकाशम्) वयस्य मकरन्द, अपि भवानुत्कण्ठते मदयन्तिकायाम्।

मकरन्दः—अथ किम्।

तन्मे मनः क्षिपति यत्सरसप्रहारमालोक्य मामगणितस्खलदुत्तरीया।
त्रस्तैकहायनकुरङ्गविलोलदृष्टिराश्लिष्टवत्यमृतसंवलितैरिवाङ्गैः ॥८॥

माधवः—न दुर्लभा बुद्धरक्षितायाः प्रियसखी। अपि च—

प्रमथ्य क्रव्यादं मरणसमये रक्षितवतः
परिष्वङ्गं लब्ध्वा तव कथमिवान्यत्र रमताम्।
तथा च व्यापारः कमलनयनाया नयनयो-
स्त्वयि व्यक्तस्नेहः स्तिमितरमणीयश्चिरमभूत् ॥९॥

लवंगिका—सखी! इधर आओ, इधर। (जाती है)।

माधव—(अपने आप) भगवती कामन्दकी निश्चय ही अपने सहज स्नेह से अति कातर होकर मुझ (माधव) को केवल सान्त्वना दे रही हैं। (उद्वेग के साथ) हाय! सब प्रकार से मेरे जन्म की सफलता संशययुक्त हो गयी है। तो अब मुझे क्या करना चाहिए। (सोचकर) अब तो महामांस (नरमांस) के विक्रय के अलावा कोई दूसरा उपाय नहीं देख रहा हूं।

मकरन्द—और क्या?

(उस दुष्ट व्याघ्र के प्रहार के कारण) रक्त से सने हुए अतीव आहत मुझे देखकर अंगों से गिरते हुए उत्तरीय की अपेक्षा न कर, संत्रस्त एकवर्षीय मृग-शावक की भांति चचल नेत्रों वाली मदयन्तिका ने अपने अमृत से मिश्रित की भांति अंगों द्वारा जो मेरा आलिंगन किया था वही मेरे मन को अत्यन्त अधीर कर रहा है॥८॥

माधव—बुद्धरक्षिता की प्रिय सखी (मदयन्तिका) तुम्हारे लिए दुर्लभ नहीं है। और भी,उस दुष्ट मांसभक्षी व्याघ्र को मारकर मृत्यु के संकटपूर्ण अवसर पर रक्षा करनेवाले तुम्हारा आलिंगन प्राप्त कर (मदयन्तिका) किस प्रकार दूसरे पुरुष में अपने चित्त को अनुरक्त कर सकती है। क्योंकि उस कमललोचना मदयन्तिका के दोनों नेत्र तुम्हारे ऊपर चिरकाल तक अनुराग को प्रकट करनेवाले तथा निश्चल एवं सुन्दर दिखायी पड़ रहे थे॥९॥

तदुत्तिष्ठ। वरदासिन्धुसंभेदमवगाह्य नगरीमेव प्रविशावः।

(उत्थाय परिक्रामतः)

मकरन्दः—अयमसौ महानद्योर्व्यतिकरः। य एषः।

जलनिबिडितवस्त्रव्यक्तनिम्नोन्नताभिः
परिगततटभूमिः स्नानमात्रोत्थिताभिः।
रुचिरकनककुम्भश्रीमदाभोगतुङ्ग-
स्तनविनिहितहस्तस्वस्तिकाभिर्वधूभिः ॥१०॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे चतुर्थोऽङ्कः।

तो उठो। वरदा और सिन्धु नदी के संगमस्थल पर स्नान कर पुरी में ही प्रवेश करें।

(दोनों उठकर चलने का नाट्य करते हैं।)

मकरन्द—यही वह दोनों महानदियों का संगम-स्थल है जो कि स्नान करने के अनन्तर जल से निकली हुई रमणियों के भीगे और चिपके हुए वस्त्रों से उनके ऊंचे औरनीचे अंग स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ रहे हैं मनोहर सुवर्ण के कलश के समान कान्तिमय एवं ऊंचे उठे हुए स्तन-मण्डलों के ऊपर स्वस्तिक की भांति (उनके प्रियतमों के) हाथों द्वारा स्थापित चिह्नों को वे धारण कर रही हैं। ऐसी रमणियों से व्याप्त तटभूमि से युक्त यह वरदा और सिन्धु नदी का संगमस्थल अतीव मनोहारि बन गया है॥१०॥

(सभी लोग बाहर जाते हैं।)

महाकवि भवभूति रचित मालती माधव नाटक में शार्दूल विभ्रम नामक चतुर्थ अंक समाप्त॥

पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशत्याकाशयानेन भीषणोज्ज्वलवेषा कपालकुण्डला)

कपालकुण्डला—

षडधिकदशनाडीचक्रमध्यस्थितात्मा
हृदि विनिहितरूपः सिद्धिदस्तद्विदां यः।
अविचलितमनोभिः साधकैर्मृग्यमाणः
स जयति परिणद्धः शक्तिभिः शक्तिनाथः॥१॥

इयमिदानीमहम्—

नित्यं न्यस्तषडङ्गचक्रनिहितं हृत्पद्ममध्योदितं
पश्यन्ती शिवरूपिणं लयवशादात्मानमभ्यागता।
नाडीनामुदयक्रमेण जगतः पञ्चामृताकर्षणा-
दाप्राप्तोत्पतनश्रमा विघटयन्त्यग्रेनभोऽम्भोमुचः॥२॥

पाँचवाँ अंक

[तदनन्तर आकाशयान से भयंकर और उज्ज्वलवेशधारिणी कपालकुण्डला प्रवेश करती है।]

कपालकुण्डला—जो इडा पिंगला आदि सोलह नाड़ी-मण्डलों के मध्यभाग में सन्निहित होकर एवं उनको जाननेवालों के हृदय में अपने स्वरूप को अवस्थित कर अणिमा आदि सिद्धियों को देनेवाले, स्थिरचित्त साधकों द्वारा ढूँढ़े जाते हुए, (ज्ञान इच्छा एवं क्रिया रूप अथवा ब्राह्मी माहेश्वरी आदि आठों) शक्तियों से परिवेष्टित शक्तिपति शंकर जी हैं, उनकी जय हो॥१॥

यह मैं इस समय,

न्यास के द्वारा हृदय आदि छहों अंगों में संस्थापित एवं हृदय कमल की कर्णिका (मध्यभाग) में प्रकाशमान शिव-स्वरूप परमात्मा का सदैव साक्षात्कार करती हुई इन सामने दिखाई देने वाले मेघ-समूहों को दूर हटाती हुई यहाँ (श्रीपर्वत से) मैं आ गयी हूँ। षट्चक्रों का भेदन कर मूलाधार में अवस्थित कुण्डलिनी के ब्रह्मरन्ध्र-स्थित सहस्र दलकमल के अन्तर्गत विराजमान परमात्मरूपी शिव के संग समन्वित होकर एवं प्राणदान के द्वारा शरीर से विष्ठा मूत्रादि पंचामृतों का आकर्षण कर लेने से आकाश में उड़ने में हमें तनिक भी परिश्रम नहीं उठाना पड़ता॥२॥

उद्वृत्तस्खलितकपालकण्ठमाला-
संघट्टक्वणितकरालकिङ्किणीकः।
पर्याप्तं मयि रमणीयडामरत्वं
संधत्ते गगनतलप्रयाणवेगः॥३॥

तथा हि—

विष्वग्वृत्तिर्जटानां प्रचलति निबिडग्रन्थिबन्धोऽपि भारः
संस्कारक्वाणदीर्घं पटु रटति कृतावृत्ति खट्वाङ्गघण्टा।
ऊर्ध्वं धूनोति वायुर्विवृतशवशिरःश्रेणिकुञ्जेषु गुञ्ज-
त्सुसालः किङ्किणीनामनवरतरणत्कारहेतुः पताकाम्॥४॥

(परिक्रम्यावलोक्य च) इदं च पुराणनिम्बतैलाक्तपरिभृज्यमानरसोन-करसगन्धिमिश्चिताधूमैरपस्तादिभावितस्य श्मशानवाटस्य नेदीयः करालायतनम्। यत्र पर्यवसितमन्त्रसाधनस्यास्मद्गुरोरघोरघण्टस्याज्ञया सविशेषमद्य मया पूजासंभारः संनिधापनीयः। कथितं हि मे गुरुणा—'वत्से कपालकुण्डले, भगवत्याः

पहले ऊपर की ओर उछलते एव पीछे नीचे गिरते हुए (नर) कण्ठमाला में परस्पर के सघट्ट से शब्द करनेवाली छोटी-बडी घटियो से युक्त मेरे आकाश मे उडने का वेग मुझमे यथेष्ठ मनोहरता एवं भयंकरता को धारण करता है॥३॥

क्योंकि, सभी दिशाओं में फैला हुआ जटा-समूह सुदृढ ग्रन्थियों से बंधा हुआ होने पर भी गमन के वेग के कारण काँप रहा है। खट्वांग (शिव जी का चमटा) में बधी हुई घण्टा गमन वेग के कारण बारम्बार सुस्पष्ट और दीर्घ काल व्यापी ध्वनि कर रही है। एव किंकिणियों मे अनवरत आवाज कराने वाली हवा स्पष्ट दिखायी देनेवाले मेरी कण्ठमाला में अवस्थित नरकपालों के पंक्ति-रूप कुंजों में अव्यक्त शब्द करती हुई पताका को ऊपर फहराने लगी है॥४॥

चलने का नाट्य करती हुई देखकर) यह तो पुराने नीम के तेल मे भूने हुए लहसुन की सी बास चिता के धुए से आ रही है। उसी से अनुमान होता है कि यह श्मशान का मार्ग है जिसके अति समीप कराला देवि का मन्दिर है। जहां पर पुरश्चरण समाप्त करनेवाले हमारे गुरु अघोरघण्ट जी की आज्ञा से आज मुझे विशेष पूजा सामग्री एकत्र करनी है। मेरे गुरुजी ने कहा है कि बेटी कपालकुण्डले! भगवती कराला के लिए मैंने जिस प्रकार के स्त्रीरत्न को बलि देने की मनौती पहले ही की थी उसे आज उपहार मे देना चाहिए वैसी ही एक सुन्दरी इसी नगर में

करालया यन्मया प्रागुपयाचितं स्त्रीरत्नमुपहर्तव्यम्, तदत्रैव नगरे विदितमास्ते' इति। (सकौतुकमवलोक्य) तत्कोऽयमतिगम्भीरमधुराकृतिरुत्तम्भितकुटिलकुन्तलभारः कृपाणपाणिः श्मशानमवतरति। य एषः—

कुवलयदलश्यामोऽप्यङ्गं दधत्परिधूसरं
ललितविकटन्यासः श्रीमान्मृगाङ्कनिभाननः।
हरति विनयं वामो यस्य प्रकाशितसाहसः
प्रविगलदसृक्पङ्कः पाणिर्ललन्नरजाङ्गलः॥५॥

(निरूप्य) स एष कामन्दकीसुहृत्सुतो महामांसस्य पणयिता माधवः। तत्किमनेन? यथासमीहितं सपादयामि। विगलितप्रायश्च पश्चिमसंध्यासमयः। तथा हि—

व्योम्नस्तापिच्छगुच्छावलिभिरिव तमोवल्लरीभिर्व्रियन्ते
पर्यन्ताः प्रान्तवृत्त्या पयसि वसुमती नूतने मज्जतीव।

सुप्रसिद्ध होकर विद्यमान है? (कौतूहल के साथ देखकर) गम्भीर एवं मधुर आकृति-सम्पन्न, घुंघराले बालों का जूड़ा बांधे हुए, हाथों में तलवार लिये हुए श्मशान-भूमि की ओर यह कौन चला आ रहा है, जो कि--

नीले कमलदल के समान श्यामवर्ण का होते हुए भी धूलिधूसरित अंगों को धारण करता है, मनोहर एवं विकट शरीर संचालन से युक्त है, अतीव सुशोभित चन्द्रमा के समान मुखवाला है, जिसके बाएं हाथ में मनुष्य का मांस है, जिससे गाढ़ा रक्त चू रहा है। इस प्रकार अपने साहस को प्रकट करने वाला यह व्यक्ति अपने बाएं हाथ से (मन की) विनयशीलता को दूर कर रहा है॥५॥

(भलीभांति देखकर) यह तो कामन्दकी के मित्र (देवरात) का पुत्र माधव है, जो नर-मांस का विक्रेता बन गया है। तो इससे हमें क्या (लेना-देना) है। मैं अपना अभीष्ट सम्पादन करूंगी। सायंकाल की सन्ध्योपासना का समय प्रायः बीत रहा है। क्योंकि—

आकाश की सीमाएं तमाल के गुच्छों की पंक्तियों के समान अन्धकार रूपी लताओं से आच्छादित हो गयी हैं, वसुन्धरा पृथिवी चारों दिशाओं में नूतन जल में निमग्न की तरह प्रतीत हो रही है, इस प्रकार रजनी आरम्भ काल में ही इस वन-

वात्यासंवेगविष्वग्विततवलयितस्फीतधूम्याप्रकाशं
प्रारम्भेऽपि त्रियामा तरुणयति निजं नीलिमानं वनेषु ॥६॥

(इति निष्क्रान्ता)

इति शुद्धविष्कम्भः

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टो माधवः)

माधवः—(साशंसम्)

प्रेमार्द्राः प्रणयस्पृशः परिचयदुद्गाढरागोदया-
स्तास्ता मुग्धदृशो निसर्गमधुराश्चेष्टा भवेयुर्मयि।
यास्वन्तःकरणस्य बाह्यकरणव्यापाररोधी क्षणा-
दाशंसापरिकल्पितास्वपि भवत्यानन्दसान्द्रो लयः ॥७॥

अपि च—

अतिमुक्तकग्रथितकेसरावली-
सतताधिवाससुभगार्पितस्तनम्।
अपि कर्णजाहविनिवेशिताननः
प्रियया तदङ्गपरिवृत्तिमाप्नुयाम् ॥८॥

प्रदेश में वायु के वेग से चतुर्दिक् विस्तारित, मण्डलाकार एवं बढ़ायी हुई धूमराशि की भाँति अपने काले रंग को और भी गाढ़ा बना रही है ॥६॥

(ऐसा कहकर चली जाती है।)

शुद्ध विष्कम्भक समाप्त

[तदनन्तर पूर्वोक्त अनुसार माधव (नरमांस लिए हुए) प्रवेश करता है।]

माधव—(आशा से भरे स्वर से) प्रेम से सरस उत्कृष्ट प्रेम के आश्रयभूत, परिचय के कारण प्रगाढ़ अनुराग से सम्पन्न, एवं स्वभाव से सुन्दर (मालती की) कटाक्षपात प्रभृति चेष्टाएँ मेरे ऊपर हों। इस प्रकार की आशा से परिकल्पित होने पर भी तत्काल ही नेत्र आदि बाह्य इन्द्रियों के दर्शन आदि क्रियाओं को रोकने वाला और अतीव आनन्द से प्रगाढ़ चित्त की विलीनता (तन्मयता) हो जाती है ॥७॥

और भी, प्रियतमा (मालती) हमारे कर्णमूल में अपना मुखमण्डल स्थापित करे, मुक्ताहार की अपेक्षा अधिक आदरणीय हमारे द्वारा गूँथी गयी मौलसिरी की माला के निरन्तर पहनने के कारण सुगन्धि युक्त, सौभाग्यपूर्ण एवं मनोहर पयोधरों को मेरे वक्षःस्थल पर स्थापित करे। इस प्रकार उसके मनोहर अंगों से मैं अपने अंग का विनिमय भी प्राप्त कर सकूँगा ॥८॥

अथवा दूरे तावदेतत् इदमेव तावत्प्रार्थये।

संभूयेव सुखानि चेतसि परं भूमानमातन्वते
यत्रालोकपथावतारिणि रतिं प्रस्तौति नेत्रोत्सवः।
यद्बालेन्दुकलोच्चयादुपचितैः सारैरिवोत्पादितं
तत्पश्येयमनङ्गमङ्गलगृहं भूयोऽपि तस्या मुखम्।।९।।

यत्सत्यमधुना सद्दर्शनं नेति स्वल्पोऽपि विशेषः। मम हि सम्प्रति गाढाभ्यास-प्रजनितानुभवभावनात्मनः संस्कारस्यानवरतप्रबोधात्प्रतायमानस्तद्विसदृशैः प्रत्ययान्तरैरतिरस्कृतप्रवाहः प्रियतमास्मृतिप्रत्ययोत्पत्तिसंतानस्तन्मयमिव करोति वृत्तिसारूप्यतश्चैतन्यम्। तथा हि—

लीनेव प्रतिबिम्बितेव लिखितेवोत्कीर्णरूपेव च
प्रत्युप्तेव च वज्रलेपघटितेवान्तर्निखातेव च।

अथवा यह अभिलाषा दूर रहे। मैं अभी तो यही चाहूंगा—

प्रियतमा के जिस सुन्दर मुख के दृष्टिपथ मे आने पर सम्पूर्ण आनन्द हृदय मे एकत्र होकर अतिशय बाहुल्य का विस्तार करते हैं, जिसके दर्शन से उत्पन्न नेत्रोत्सव (प्रियतमा के प्रति) आसक्ति उत्पन्न करता है, जो बालचन्द्र के कलासमूह से संगृहीत तत्त्व भाग से उत्पन्न हुए के समान है, वह कामदेव के मंगलमय निवास-स्थल के समान (प्रियतमा का मनोहर मुखमण्डल) मैं पुन देख सकूंगा।।९।।

जिस कारण से अभी प्रियतमा का वास्तविक दर्शन नहीं है अत भावना द्वारा अनुभूत प्रिया के दर्शन से वास्तविक दर्शन का थोडा सा भेद है। क्योंकि इसके पहिले वह अतिशय प्रत्यक्ष थी, और उससे जो संस्कार पैदा हुए, इस समय अनवरत चिन्तन के कारण वे ही संस्कार अतिशय उद्बुद्ध हो गये हैं, जिससे प्रियतमा मालती का स्मृति-प्रवाह दूसरी बातो या विषयो द्वारा न तो रोके रुकता है और न उसके मार्ग मे कोई विषयान्तर का विचार ही बाधा पहुचा सकता है। सत्य तो यह है कि प्रियतमा की अविराम स्मृति से हमारी चेतना (अन्त करण की वृत्ति) तदाकार हो गयी है। भीतर बाहर सर्वत्र उसीका रूप दृष्टिगोचर हो रहा है। क्योंकि-

हमारी प्रियतमा (मालती) हमारे चित्त मे लीन की तरह, प्रतिबिम्बित की तरह, *लिखी गयी सी, शिलाओ आदि मे उत्कीर्ण रूपवाली की तरह, विरहाग्नि* से द्रवीभूत मन मे (कामदेव) रूप सुवर्णकार (सोनार) से) रचित की तरह, वज्रलेप से जुडी हुई की तरह, अन्त.करण मे गाड़ी हुई की तरह, कामदेव के पाचों

सा नश्चेतसि कीलितेव विशिखैश्चेतोभुवः पञ्चभि-
श्चिन्तासंततितन्तुजालनिविडस्यूतेव लग्ना प्रिया ॥१०॥

(नेपथ्ये कलकलः)

माधवः—(आकर्ण्य) अहो, सम्प्रतीतस्ततः प्रवर्तमानकौणपनिकरस्य महती श्मशानवाटस्य रौद्रता। अत्र हि—

पर्यन्तप्रतिरोधिमेदुरघनस्त्यानं चिताज्योतिषा-
मौज्ज्वल्यं परभागतः प्रकटयत्याभोगभीमं तमः।
संसक्ताकुलकेलयः किलकिलाकोलाहलैः संमदा-
दुत्तालाः कटपूतनाप्रभृतयः सांराविणं कुर्वते ॥११॥

तदुच्चैराघोषयामि। भो भो श्मशाननिकेतनाः कटपूतनाः।

अशस्त्रपूतमव्याजं पुरुषाङ्गोपकल्पितम्।
विक्रीयते महामांसं गृह्यतां गृह्यतामिति ॥१२॥

(नेपथ्ये पुनः कलकलः)

बाणों से बिद्ध की तरह एवं धारावाही (निरन्तर) चिन्ता रूपी सूत्र समूह से हमारे चित्त में सिली हुई की तरह मालूम पड़ती है ॥१०॥

(नेपथ्य में कोलाहल सुनाई पड़ता है।)

माधव—(सुनकर) अहो! इस समय चारों ओर राक्षसगण विचरण कर रहे हैं। जिससे श्मशान भूमि में अत्यन्त भीषणता है। क्योंकि यहाँ—

प्रान्त भाग में दृष्टि को रोकनेवाला, स्निग्ध, गाढ़ा, वृद्धिप्राप्त, तथा चतुर्दिक् के विस्तार से भयकर अन्धकार चिताग्नि की उज्ज्वलता को अपने गुणों के उत्कर्ष से प्रकट करता है। शीघ्रता एवं व्यस्तता के साथ क्रीडा में अनवरत लीन भयकर कटपूतन आदि श्मशानवासी पिशाचगण हर्ष से 'किलकिल' शब्द करते हुए कोलाहल कर रहे हैं ॥११॥

अतः ऊँचे स्वर में घोषणा करता हूँ। अरे श्मशान में रहनेवाले कटपूतन पिशाचो! शस्त्रादि से बिल्कुल ही अछूता, छलविहीन और स्वयं मरे हुए किसी पुरुष के किसी अवयव से काटा गया महामांस (नरमांस) मैं विक्रय कर रहा हूं। अतः ले लो आकर, ले लो ॥१२॥

(नेपथ्य में फिर कोलाहल होता है।)

माधवः—अयमाघोषणानन्तरमेव सर्वतः समुच्चलत्तुमुलव्यस्तकल-कलाकुलः प्रचलित इवाविर्भवद्भूतगणः श्मशानवाटः। आश्चर्यम्।

कर्णाभ्यर्णविदीर्णशुष्कविकटव्यादानदीप्ताग्निभि-
र्दंष्ट्राकोटिविशङ्कटैरित इतो धावद्भिराकीर्यते।
विद्युत्पुञ्जनिकाशकेशनयनभ्रूश्मश्रुजालैर्नभो
लक्ष्यालक्ष्यविशुष्कदीर्घवपुषामुल्कामुखानां मुखैः॥१३॥

अपि च—

एतत्पूतनचक्रमक्रमकृतग्रासार्धमुक्तैर्वृका-
नुत्पुष्णत्परितो नृमांसविघसैरादर्दरं वल्गतः।
खर्जूरद्रुमदघ्नजङ्घमसितत्वङ्नद्धविष्वक्तत-
स्नायुग्रन्थिघनास्थिपञ्जरजरत्कङ्कालमालोक्यते॥१४॥

माधव—हमारी घोषणा के बाद ही क्यों भयंकर वेताल भूत आदि चारों ओर से चलकर अव्यक्त शब्द करते हुए तुमुल कोलाहल करने लगे है। जिससे यह श्मशान भूमि आकुल हो उठी है, और यहां अनेक पिशाचों का आगमन हो गया है, जिससे यह श्मशान प्रदेश कांपता हुआ-सा मालूम पड रहा है। आश्चर्य की बात है।

दोनों कानों के समीप तक फैले हुए ओष्ठ प्रान्तों से विकट, मुख-विवर के फैलाने से जलती हुई अग्नि-ज्वाला से युक्त, दाढों के अग्रभागों से विशाल और सब ओर फैलती हुई बिजलियों के समूह के समान केश, नेत्र, भौंह और दाढी-मूछों सेयुक्त कभी दिखायी पडते हुए और कभी अदृश्य, अतिशय कृश एवं दीर्घ शरीर वाले उल्कामुख नामक पिशाचों के मुखों से यह श्मशानभूमि का आकाश व्याप्त हो रहा है॥१३॥

और भी, यह पूतन नामक पिशाचों का समूह देखा जा रहा है, जो अत्यधिक तृष्णा के कारण काटे गये ग्रास से जमीन पर आधा गिरे हुए नरमांस को खा कर बचे हुए शेष भागों में से चारों ओर दरदर शब्द करते हुए चिल्लाते भेड़ियों को पुष्ट करने वाले, खजूर के वृक्ष जैसी लंबी जांघों वाला, काले चमडे से बांधी गयी और चारों ओर व्याप्त नसों के सन्धि में बंधे हुए अस्थिपंजरों वाले जीर्ण कंकालों से युक्त हैं॥१४॥

(समन्तादवलोक्य विहस्य च) अहो प्रकारः पिशाचानाम् । ततः—

पृथुचलरसनोग्रमास्यगर्तं
दधति विदार्य विशीर्णशुष्कदेहाः।
चलदजगरघोरकोटराणां
द्युतिमिह दग्धपुराणरोहिणानाम् ॥१५॥

(परिक्रम्यावलोक्य च) हन्त, अतिबीभत्समग्रतो वर्तते।

उत्कृत्योत्कृत्य कृत्तिं प्रथममथ पृथूत्सेधभूयांसि मांसा-
न्यंसस्फिक्पृष्ठपीठाद्यवयवसुलभान्युग्रपूतीनि जग्ध्वा।
आत्तस्नाय्वान्त्रनेत्रः प्रकटितदशनः प्रेतरङ्कः करङ्का-
दङ्कस्थादस्थिसंस्थं स्थपुटगतमपि क्रव्यमव्यग्रमत्ति ॥१६॥

अपि च—

निष्टापस्विद्यदस्नः क्वथनपरिगलन्मेदसः प्रेतकायान्
कृष्ट्वा संसक्तधूमानपि कुणपभुजो भूयसीभ्यश्चिताभ्यः।

(चारों ओर देखकर हँसते हुए) अहो। यह पिशाचों की जातियाँ हैं। इसी से—

मलिन एवं मुर्दार्य शरीर वाले पिशाच, जिनके मुख के विवर में लंबी जीभ लपलपा रही है, इस प्रकार भयंकर गड्ढे के समान मुख को फैलाकर यहाँ प्रवेश करके चलते हुए अजगर के कारण भयंकर कोटर से युक्त, दावाग्नि से किसी स्थान पर दग्ध पुराने चन्दन के वृक्षों की कान्ति को धारण कर रहे हैं ॥१५॥

(कुछ दूर चलकर और देखकर) अहो! आगे तो अतीव बीभत्स दृश्य है।)

किसी शव में उसके स्नायुमण्डल आँतों और आँखों को पकड़कर अपने दाँत दिखाते हुए कोई दरिद्र पिशाच पहले उसके (शव के) चमड़े को उलट-पुलट कर काट काट कर फिर उसके ऊपर से उत्कट दुर्गन्ध युक्त कन्धे, कमर के नीचे के स्थल तथा पीठ आदि मांसल अवयवों में सुलभ मांसों को खाकर अपनी गोद में रखे शव के शिरो भाग से हड्डियों में चिपके हुए नीचे, ऊंचे तथा विषम स्थानों के मांसों को भी धैर्यपूर्वक खा रहा है॥१६॥

और भी, मुर्दों के मांस खानेवाले ये पिशाच अनेकानेक चिताओं से ऐसे ऐसे शवों को भी जिनसे चिताग्नि के ताप से रक्त गिर रहे हैं, और अच्छी तरह जल जाने से चर्बी गिरने के कारण दुर्गन्धपूर्ण धूआँ व्याप्त हो रहा है, खींच खींच कर

उत्पक्वस्रंसिमांसं प्रचलदुभयतः संधिनिर्मुक्तभारा-
देते निष्कृष्य जङ्घानलकमुदयिनीर्मज्जधाराः पिबन्ति ॥१७

(विहस्य) अहो, प्रादोषिकः प्रमोदः पिशाचानाम्।

अन्त्रैः कल्पितमङ्गलप्रतिसराः स्त्रीहस्तरक्तोत्पल-
व्यक्तोत्तंसभृतः पिनह्य सहसा हृत्पुण्डरीकस्रजः।
एताः शोणितपङ्ककुङ्कुमजुषः संभूय कान्तैः पिब-
न्त्यस्थिस्नेहसुरां कपालचषकैः प्रीताः पिशाचाङ्गनाः॥१८॥

(परिक्रम्य। पुनः 'अशस्त्रपूतम्'—इत्यादि पठित्वा) कथं नामातिभीषणबिभीषिकाविकारं संदर्श्य पलायन्त पिशाचैः। अहो ! निःसत्त्वाः सर्वे। (सनिर्वेदम्) विचितश्चैष सर्वः श्मशानवाटः। तथा खल्वियं पुरत एव।

गुञ्जत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघूत्कारसंवेल्लित-
क्रन्दत्फेरवचण्डधात्कृतिभृतप्राग्भारभीमैस्तटैः।

अच्छे पककर गिरने वाले मांस से लगे हुए, आँच के कारण हिलते हुए मूल और अग्रभाग में हड्डियों के संयुक्त स्थानों से अलग हुए जाँघ के खण्ड को समीप में शरीर से अलग कर निकलती हुई मज्जा की धारा को पी रहे हैं ॥१७॥

(हँसकर) रात को आया देखकर ये पिशाचगण खूब आमोद-प्रमोद कर रहे हैं।

मुर्दों की आंतों से सौभाग्यसूचक हस्तसूत्र की रचना करने वाली, मृतक स्त्रियों के हस्तरूप-रक्तकमलों को स्पष्ट रूप से कान का आभूषण धारण करनेवाली रक्त से सने कीचड़ को केसर की भाँति शरीर पर धारण करनेवाली ये पिशाचों की स्त्रियाँ आकस्मिक रूप से हृदयभाग में अवस्थित श्वेतकमल के समान (दिखाई पड़नेवाले) मांस के लोथड़ों की मालाएँ कण्ठ में धारण कर अपने पति के साथ मिलकर प्रसन्न होती हुई नर-कपाल (मनुष्य की खोपड़ी) रूपी प्यालों से मज्जा रूपी मदिरा का पान कर रही हैं॥१९॥

(घूमते हुए फिर से—अशस्त्रपूत इत्यादि १२वां श्लोक पढते हुए) अत्यन्त भीषण बिभीषिका उपस्थित करनेवाले ये पिशाचगण झटपट क्यों यहाँ से भाग गये ! अहो। ये सब के सब पिशाच निर्वीर्य है। (उदासीनता के स्वर में) समूचे श्मशान प्रदेश को मैं ढूंढ चुका। सामने ही तो यह (नदी) है।

कुञ्ज कुटीरों में अव्यक्त शब्द करने वाले उलूकों के 'घूत', 'घूत' शब्दों से युक्त प्रचण्ड शोर मचाने वाले सिआरों के 'धात, धात' शब्दों के प्रसार से पूरित भीतरी

अन्तःकीर्णकरङ्कर्परतरत्संरोधिकूलंकष-
स्रोतोनिर्गमघोरघर्घररवा पारेश्मशानं सरित् ॥१९॥

(नेपथ्ये)

हा तात निष्करुण, एष इदानीं ते नरेन्द्रचित्ताराधनोपकरणं जनो विपद्यते।
(हा ताद णिक्करुण, एसो दाणिं दे णरेन्दचित्ताराहणोवअरणं जणो विवज्जइ)

माधवः (साकूतमाकर्ण्य)

नादस्तावद्विकलकुररीकूजितस्निग्धतार-
श्चित्ताकर्षी परिचित इव श्रोत्रसंवादमेति।
अन्तर्भिन्नं भ्रमति हृदयं विह्वलत्यङ्गमङ्गं
गात्रस्तम्भः स्खलयति गतिं कः प्रकारः किमेतत् ॥२०॥
करालायतनाभ्यायमुच्चरन्करुणध्वनिः।
विभाव्यते ननु स्थानमनिष्टानां तदीदृशाम् ॥२१॥
भवतु पश्यामि (इति परिक्रामति)

और अप्रमागों से भयंकर तटों से पहचानी जाने वाली, भीतर बहते हुए शवों की खोपड़ियों की हड्डियों में बहते हुए, अतएव रोकनेवाले तटभेदक प्रवाह के वेग से निकलने के कारण भयंकर 'घर्घर' शब्द करने वाली नदी इस श्मशान के प्रदेश में (बह रही) है॥१९॥

(नेपथ्य में) हाय पिता जी ! हे निर्मम। राजा के चित्त को प्रसन्न करने वाली आपकी यह भेंट—मैं—इस समय ऐसी विपत्ति में पड़ी हुई हूं।

माधव—(विशेष अभिप्राय से सुनकर) भयभीत कुररी पक्षी की आवाज की भांति मधुर और और अतीव तीव्र, परिचित की भांति चित्त को आकृष्ट करने वाली यह आवाज हमारे कानों को कुछ जाना पहचाना सा संकेत दे रही है जिससे भीतर ही भीतर विदीर्ण होता हुआ हमारा हृदय घूम रहा है, प्रत्येक अंग कांप रहे हैं। शरीर की निश्चेष्टता हमारी गति को स्खलित कर रही है। इस प्रकार का यह आर्तनाद (करुण प्रकार) क्या है और यह कहां से सुनाई पड़ रहा है॥२०॥

यह करुण पुकार कराला देवी के मन्दिर से आ रही है—ऐसा अनुमान करता हूं। क्योंकि निश्चय ही ऐसे अनर्थकारी कार्यों का उद्गम स्थान वहीं हो सकता है॥२१॥

खैर, होगा। मैं देखता हूं। (चलने का नाट्य करता है।)

(ततः प्रविशतो देवतार्चनाव्यग्रौ कपालकुण्डलाघोरघण्टौ कृतवध्यचिह्ना मालती च)।

मालती—हा तात निष्करुण, एष इदानीं ते नरेन्द्रचित्ताराधनोपकरणं जनो विपद्यते। हा अम्ब, हृदये हतासि दुर्वारदैवदुर्विलसितेन। हा मालतीमयजीविते, मम कल्याणसाधनैकसुगमसकलव्यापारे भगवति कामन्दकि, चिरस्य शोषितासि दुरन्तस्नेहेन। हा प्रियसखि लवङ्गिके, स्वप्नावसरमात्रदर्शनाहं ते संवृत्ता। (हा ताद णिक्करुण, एसो दाणिं दे णरेन्दचित्ताराहणउअअरणं जणो विवज्जइ। हा अम्ब, हिअए हदासि दुव्वारदेव्वदुव्विलसिदेण। हा मालईमअजीविदे, मह कल्लाणसाहणेक्कसुहसअलव्वावारे भअवदि कामन्दइ, चिरस्स सोसिदासि दुरन्तसिणेहेण। हा पिअसहि लवङ्गिए, सिविणअवसरमेत्तदंसणा अहं दे संवुत्ता)

माधवः—हन्त, संप्रति निरस्त एव मे सन्देहः। तदपि नाम जीवन्तीमेनां सम्भावयेयमिति। (झटिति परिक्रामति)

कापालिकौ—देवि चामुण्डे भगवति, नमस्ते।

सावष्टम्भनिशुम्भसंभ्रमनमद्भूगोलनिष्पीडन-
न्यञ्चत्कर्परकूर्मकम्पविगलद्ब्रह्माण्डखण्डस्थिति।

(तदनन्तर देवता की पूजा में व्यग्र दिखाई पड़नेवाले कपालकुण्डला और अघोरघण्ट का प्रवेश होता है, और रक्तमाल्य आदि बलिदान के चिह्नों से चिह्नित मालती भी साथ है।)

मालती—हे पिता जी। हे निर्दय! आप के राजा के चित्त को प्रसन्न करने वाली यह भेंट—मैं इस समय ऐसी विपत्ति में पड़ गयी हूं। हे मां! दुर्निवार दैव के क्रूर व्यवहार से तुम हृदय में आहत की गयी हो। तुम्हारा जीवन मालतीमय था, मेरे कल्याण-साधनों को जुटाने के सम्पूर्ण व्यापार को एकमात्र सुख माननेवाली भगवती कामन्दकी! (मेरे प्रति आपके) स्नेह ने आपको बहुत समय तक दुःख दिया है। हे प्रिय सखी लवङ्गिके! अब तो केवल स्वप्न में ही तुम मुझे देखने का अवसर प्राप्त कर सकोगी।

माधव—हाय! अब तो मेरा रहा-सहा सन्देह भी दूर हो गया। क्या मैं जीती-जागती मालती का अभिनन्दन कर सकूंगा। (तुरन्त चलता है।)

दोनों कापालिक—(अघोरघण्ट और कपालकुण्डला) देवी चामुण्डे। भगवती! तुम्हें नमस्कार है।

दर्पयुक्त पाद-विक्षेप के कारण शीघ्रता से नीचे दबते हुए पृथ्वीमण्डल के

पातालप्रतिमल्लगल्लविवरप्रक्षिप्तसप्तार्णवं
वन्दे नन्दितनीलकण्ठपरिषद्व्यक्तं तव क्रीडितम् ॥२२॥

अपि च—

प्रचलितकरिकृत्तिपर्यन्तचञ्चन्नखाघातभिन्नेन्दुनिष्यन्दमानामृत-
श्च्योतजीवत्कपालावलीमुक्तचण्डाट्टहासत्रसद्भूरिभूतप्रवृत्तस्तुति।
श्वसदसितभुजङ्गभोगाङ्गदग्रन्थिनिष्पीडनोत्फुल्लफुल्लत्फणापीठनि-
र्यद्विषज्ज्योतिरुज्जृम्भणोड्डामरव्यस्तविस्तारिदोःखण्डपर्यासितक्ष्माधरम्।

भार से जिसकी पीठ की हड्डी नीचे झुक गयी, ऐसे कच्छप के कम्पन से जिस (नृत्य) मे ब्रह्माण्ड खण्ड की स्थिति डाँवाडोल होने लगी और जिसमें पाताल के समान (प्रतिस्पर्धी) दोनों कपोलों के मध्यवर्ती (गले के) छिद्रों में सातों समुद्रों को उछाल दिया गया—ऐसे निशुम्भ नामक विशेष नृत्य के द्वारा आनन्द प्राप्त करने वाले नीलकण्ठ महादेव जी की सभा में सुप्रसिद्ध तुम्हारे उक्त नृत्य का हम अभिवन्दना करते हैं ॥२२॥

और भी हे देवि! (तुम्हारे उक्त निशुम्भनृत्य मे) उत्तरीय के रूप मे गले में धारण किये हुए हस्तिचर्म को जब तुमने ऊपर की ओर झटका दिया तो उसके एक छोर पर लगे चचल नाखूनो की चोट से चन्द्रमा विदीर्ण हो गया और उससे अमृत की बूँदे क्षरित होने लगी। उन बूदों के क्षरित होने से तुम्हारे मुण्डमाल मे ग्रथित नरकंकाल (खोपड़ियाँ) जीवित हो गये और उन्होंने मुक्त अट्टहास किया। उस अट्टहास से प्रमथों की भीड़ भयभीत हो उठी और वह तुम्हारी स्तुति करने लगी।

(तुम्हारे उस नृत्य मे) बाहु मे केयूर की भाति बधे हुए दीर्घ निःश्वास छोडने वाले काले सर्पो को जब तुम्हारे हाथो को ऊपर नीचे उठाने और इधर उधर फेंकने मे पीड़ा होने लगी तो उनके फणपीठ के समान विस्तृत हो (फैल) गये और उनसे विष की धारा निकल पडी। उस समय उनके विष के तेज के बढ़ने से सभी लोग भयभीत हो उठे और इस प्रकार विस्तृत तुम्हारी भुजाओ से पर्वतो के समूह सभी दिशाओं में फेंक उठे।

(तुम्हारे उस नृत्य में) ललाट मे अवस्थित नेत्र से अग्नि की ज्वाला भभक उठी और तुम्हारा वह नेत्र पिंगलवर्ण का हो गया। उससे लपटें उठने लगी, और समूचा मस्तक आच्छन्न एव भयकर बन गया। उस समय उसका घूमना ऐसा प्रतीत होने लगा मानो अग्नि प्रज्वलित काष्ठ को चक्राकार घुमाया जा रहा हो।

ज्वलदनलपिशङ्गनेत्रच्छटाभारभीमोत्तमाङ्गभ्रमिप्रस्तुतालातचक्र-
क्रियास्यूतदिग्भागमुत्तुङ्गखट्वाङ्गशृङ्गध्वजोद्धतिविक्षिप्ततारागणम्।
प्रमुदितकटपूतनोत्तालवेतालतालस्फुटत्कर्णसंभ्रान्तगौरीघनाश्लेष-
हृष्यन्मनस्त्र्यम्बकानन्दि वस्ताण्डवं देवि भूयादरिष्टर्द्धये हृष्टये च नः॥

(इत्यभिनयतः)

माधवः—(विलोक्य) हा! धिक् प्रमादम्।

न्यस्तालक्तकरक्तमाल्यवसना पाषण्डचण्डालयोः
पापारम्भवतोर्मृगीव वृकयोर्भीरुर्गता गोचरम्।
सेयं भूरिवसोर्वसोरिव सुता मृत्योर्मुखे वर्तते
हा धिक्कष्टमनिष्टमस्तकरुणः कोऽयं विधेः प्रक्रमः॥२४॥

उससे समस्त दिङ्मण्डल व्याप्त हो गया। ध्वजा के समान ऊपर उठे हुए तुम्हारे खट्वाङ्ग के अग्रभाग से तारागण छिन्न-भिन्न हो गये हैं।

(तुम्हारे उस नृत्य में) बड़े आनन्द में मग्न कटपूतन आदि पिशाचगण एवं भयंकर बेतालों द्वारा ताली बजाने से भगवती गौरी के दोनों कान जब फटने लगे और वे सन्त्रस्त हो गयी तो उन्होंने शंकर जी को गाढ़े आलिंगनपाश में बाँध लिया। और इस प्रकार शंकर जी का मन अतीव आनन्दित हो उठा। हे देवि! शंकर जी को आनन्द प्रदान करने वाला तुम्हारा यह निशुम्भनृत्य हमारे लिए अभीष्टसिद्धि का देने वाला एवं आनन्ददायक हो॥२३॥

(इस प्रकार स्तुति कर नाचने का अभिनय करते हैं।)

माधव—(देखकर) हाय। अब असावधानी को धिक्कार है।

जिस प्रकार कोई हरिणी दो नर और मादा भेड़ियों के बीच में उपस्थित हो उसी प्रकार अतीव भयभीत वसु के समान प्रभावशाली भूरिवसु की कन्या यह मालती लाक्षारस से रंगे हुए लाल रंग के वस्त्र और माला पहिनकर पापकर्म में प्रवृत्त वेद विहित आर्यधर्म के विरोधी पाखण्ड निरत दो चाण्डालों के मध्य में अवस्थित होकर मानो मृत्यु के कराल मुख में वर्तमान है। हाय! धिक्कार है। बड़े कष्ट की बात है। अनिष्टकारी प्रसंग है। करुणाविहीन विधाता का यह कौन-सा विधान है॥२४॥

कपालकुण्डला—

तं भद्रे! स्मर दयितोऽत्र यस्तवाभू-
दद्य त्वां त्वरयति दारुणः कृतान्तः।

मालती—हा देव माधव, परलोकगतोऽपि युष्माभिः स्मर्तव्योऽयं जनः। न खलु स उपरतो यस्य वल्लभः स्मरति। (हा देव्व माहव, परलोअगदो वि तुम्हेहिं सुमरिदव्वो अअं जणो। ण हु सो उवरदो जस्स वल्लहो सुमरेदि)

कपालकुण्डला—हन्त, माधवानुरक्तेयं तपस्विनी।

अघोरघण्टः—(शस्त्रमुद्यम्य)

चामुण्डे! भगवति! मन्त्रसाधनादा-
वुद्दिष्टामुपनिहितां भजस्व पूजाम्॥२५॥

माधवः—(सहसोपसृत्य खड्गं प्रकोष्ठेन निक्षिप्य) आः कापालिकापसद दुरात्मन्, अपेहि। प्रतिहतोऽसि।

मालती—(ससम्भ्रमं विलोक्य) परित्रायतां महाभागः। (इति माधवमालिङ्गति) (परित्ताअदु महाभाओ)

माधवः—महाभागे, न भेतव्यम्।

मरणसमये त्यक्ताशङ्कं प्रलापनिरर्गल-
प्रकटितनिजस्नेहः सोऽयं सखा पुर एव ते।

कपालकुण्डला—भद्रे! यदि कोई तुम्हारा प्रियतम हो तो इस समय उसका स्मरण कर लो क्योंकि भयंकर यमराज अब तुम्हें शीघ्रता करा रहा है।

मालती—हाय प्रियतम माधव! परलोक गये हुए भी इस व्यक्ति को तुम स्मरण करना, क्योंकि वह व्यक्ति नहीं मरता प्रियजन जिसका स्मरण करते हैं।

कपालकुण्डला—हाय! यह तपस्विनी तो माधव में अनुरक्त है।

अघोरघण्ट—(हथियार उठाकर) भगवती चामुण्डे! पुरश्चरण के आरम्भ में मन में सङ्कल्प की गयी पूजा अब समर्पित कर रहा हूँ, उसे स्वीकार करें॥२५॥

माधव—(अकस्मात् समीप पहुँचकर म्यान से तलवार को बाहर खींचकर) अरे अधम कापालिक! दुरात्मा! भाग यहाँ से नहीं तो अपने को मरा हुआ जान।

मालती—(सहसा देखकर) महाभाग! मेरी रक्षा करें। ऐसा कहकर माधव को पकड़ लेती है।)

माधव—महाभागे! डरो मत। मृत्यु के समय तुमने अपने प्रलाप में बिना किसी संकोच एवं प्रतिबन्ध के अपने प्रेम को जिसके लिए प्रकट प्रकट किया था वह

सुतनु ! विसृजोत्कम्पं संप्रत्यसाविह पाप्मनः
फलमनुभवत्युग्रं पापः प्रतीपविपाकिनः ॥२६॥

अघोरघण्टः—आः ! क एष पापोऽस्माकमन्तरायः संवृत्तः।

कपालकुण्डला—भगवन्, [illegible] एवास्याः स्नेहभूमिः कामन्दकीसुहृत्सुतो महामांसस्य पणयिता माधवः।

माधवः—(सास्रम्) महाभागे, किमेतत् ?

मालती—(चिरादाश्वस्य) महाभाग, अहमपि न जानामि। एतावज्जानामि। उपर्यलिन्दमेव प्रसुप्तेह प्रतिबुद्धास्मि। यूयं पुनः क्व। (महाभाअ, अहं वि ण जाणामि एत्तिअं जाणामि। उवरिअलिन्दं जेव्व पसुत्ता इह पडिबुद्धम्हि। तुम्हे उण कहिं)

माधवः—(सलज्जम्)

त्वत्पाणिपङ्कजपरिग्रहधन्यजन्मा
भूयासमित्यभिनिवेशकदर्थ्यमानः।
श्राम्यन्नृमांसपणनाय परेतभूमा-
वाकर्ण्य भीरु ! रुदितानि तवागतोऽस्मि ॥२७॥

तुम्हारा प्रणयी अब तुम्हारे सामने उपस्थित है। हे सुन्दरी ! तुम काँपो मत। अब यह पापात्मा विपरीत फल देने वाले अपने पापों का भयंकर परिणाम यहाँ अनुभव करेगा ॥२६॥

अघोरघण्ट—अरे ! यह कौन पापी है जो हमारे लिए विघ्न स्वरूप उपस्थित हुआ है।

कपालकुण्डला—भगवन् ! कामन्दकी के मित्र (देवरात) का पुत्र, नरमांस विक्रेता और इसका प्रणयी माधव यही है।

माधव—(आँसू बहाते हुए) महाभागे ! यह (सब) क्या है ?

मालती—(बड़ी देर बाद साँस लेकर) महाभाग ! मैं भी नहीं जान पा रही हूँ। इतना ही जानती हूँ कि अपने भवन के ऊपर के बरामदे में सोई हुई थी और यहाँ आकर जाग उठी हूँ। किन्तु आप यहाँ कहाँ से आ गये।

माधव—(लज्जापूर्वक) हे भीरु ! तुम्हारे कर-कमलों को ग्रहण कर अपने जन्म को धन्य कर सकूँगा—इस प्रकार की बलवती इच्छा से लालित होकर नर-मांस विक्रय करने के कार्य में इस श्मशान भूमि में घूम रहा था, इसी बीच तुम्हारे रुदन को सुनकर यहाँ आ गया हूँ ॥२७॥

मालती—(अपवार्य) कथं मम कारणादेवंत आत्मनिरपेक्षं परिभ्रमन्ति।
(कहं मम कालणादो एव्व एद अप्पणिरवेक्खं परिब्भमन्दि)

माधवः—अहो नु खलु भोः, तदेतत्काकतालीयं नाम। सम्प्रति हि—

राहोश्चन्द्रकलामिवाननचरीं दैवात्समासाद्य मे
दस्योरस्य कृपाणपातविषयादाच्छिन्दतः प्रेयसीम्।
आतङ्काद्विकलं द्रुतं करुणया विक्षोभितं विस्मया-
त्क्रोधेन ज्वलितं मुदा विकसितं चेतः कथं वर्तते ॥२८॥

अघोरघण्टः—अरे ब्राह्मणडिम्भ!

व्याघ्राघ्रातमृगीकृपाकुलमृगन्यायेन हिंसारुचेः
पाप! प्राण्युपहारकेतनजुषः प्राप्तोऽसि मे गोचरम्।
साऽहं प्राग्भवतैव भूतजननीमृघ्नोमि खड्गाहति-
ध्वस्तस्कन्धकबन्धरन्ध्ररुधिरप्राग्भारनिष्यन्दिना ॥२९॥

मालती—(अपने आप) हमारे लिए यह इस प्रकार आत्मनिरपेक्ष होकर विचरण कर रहे हैं।

माधव—अरे यह कितने आश्चर्य की बात है कि (यहाँ प्रिया का दर्शन) काकतालीय[1] न्याय (की भाँति) हो गया। अब इस समय—

सौभाग्य से इस श्मशान भूमि में आकर राहु के मुख में पड़ी चन्द्रकला के समान अपनी प्रियतमा (मालती) को इस दस्यु कापालिक के खड्ग प्रहार के लक्ष्य बनने से बचाकर मेरा चित्त भय से विह्वल हो गया है, करुणा से विगलित हो गया है, आश्चर्य से विक्षुब्ध हो गया है, क्रोध से जल रहा है एवं आनन्द से उत्फुल्ल हो कर न जाने कैसा हो रहा है॥२८॥

अघोरघण्ट—अरे ब्राह्मण के बालक! पापी! व्याघ्र से आक्रान्त हरिणी में दया से व्याकुल हरिण के समान तुम इस समय हिंसा में प्रवृत्त एवं प्राणि-बलिदान के स्थान पर अवस्थित मेरे सम्मुख उपस्थित हो। अतः अब मैं मालती के पहले ही अपने खड्ग के आघात से तुम्हारे कन्धे को अलग कर, कबन्ध के छिद्र से गिरने वाले रक्त की धारा से प्रमथगणों की माता कराला देवी को प्रसन्न करता हूं॥२९॥

---

१. जिस प्रकार कोई कौआ ताड़ के वृक्ष पर बैठें और उसी समय ताड़ का फल दैव योग से नीचे गिर पड़ें उसी प्रकार आकस्मिक संयोग से जब कोई कठिन काम हो आता है तो उसे काकतालीय कहते हैं। कौए जैसे मामूली भार के पक्षी से ताड़ के कठोर एवं सुदृढ़ फल नहीं गिराये जा सकते किन्तु दैव योग से कभी-कभी ऐसी घटना हो जाती है।

माधवः—आः दुरात्मन्पाखण्डचण्डाल !

असारं संसारं, परिमुषितरत्नं त्रिभुवनं
निरालोकं लोकं, मरणशरणं बान्धवजनम्।
अदर्पं कंदर्पं जननयननिर्माणमफलं
जगज्जीर्णारण्यं कथमसि विधातुं व्यवसितः ॥३०॥

अपि च रे रे पाप !

प्रणयिसखीसलीलपरिहासरसाधिगतै-
र्ललितशिरीषपुष्पहननैरपि ताम्यति यत्।
वपुषि वधाय तत्र तव शस्त्रमुपक्षिपतः
पततु शिरस्यकाण्डयमदण्ड इवैष भुजः ॥३१॥

अघोरघण्टः—आः दुरात्मन् ! प्रहर प्रहर। मन्यय न भवसि।

मालती—प्रसीद नाथ साहसिक ! दारुणः खल्वय हताशः। तत्परित्रायस्व माम्। निवर्ततामस्मादनर्थसंकटात्। (पसीद णाह साहसिअ ! दारुणो क्खु अअं हदासो। ता परित्ताअदु मं। णिवत्तअदु इमादो अणत्थसंकडादो)

कपालकुण्डला—भगवन् अप्रमत्तो भूत्वा दुरात्मानं व्यापादय।

माधव—अरे दुष्ट पाखण्डी चाण्डाल ! पापी ! तुम किस लिए इस संसार को असार करने में प्रवृत्त हुआ है, त्रिभुवन के रत्न का अपहरण करने के लिए उद्यत हुआ है। लोक को आलोकविहीन तथा इस (मालती) के परिवार के लोगों को मृत्यु के अधीन करने जा रहे हो। कन्दर्प को दर्पविहीन, मनुष्यों की नेत्र-सृष्टि को निष्फल तथा जगत् को जीर्ण वन बनाने के लिए तुम क्यों प्रवृत्त हो रहे हो? ॥३०॥

और भी। अरे रे पापी ! प्रणयिनी सखियों के लीलायुक्त परिहास के अवसर पर स्वेच्छया फेंके गये शिरीष के कोमल-पुष्पों के प्रहार से भी इनका जो शरीर वेदनायुक्त हो जाता है, उसी शरीर पर, हत्या के लिए हथियार उठानेवाले तुम्हारे सिर पर आकस्मिक रूप से प्रहार करने वाले यमदण्ड की भाँति मेरी यह भुजा गिरे ॥३१॥

अघोरघण्ट—अरे दुरात्मन् ! मारो, मारो। अब तुम नहीं बच सकोगे।

मालती—हे साहसशील स्वामिन् ! प्रसन्न हों। यह निर्दयी बड़ा ही भयंकर है, अतएव मेरी रक्षा करें। इस अनर्थकारी संकट से आप दूर हट जाइए।

कपालकुण्डला—भगवन् ! सावधान होकर इस दुरात्मा का वध कीजिए।

माधवाघोरघण्टौ—(मालतीकपालकुण्डले प्रति) अयि भीरु!

घैर्यं निधेहि हृदये, हत एष पापः
किं वा कदाचिदपि केनचिदन्वभावि।
सारङ्गसंहृतिविधाविभकुम्भकूट-
कुट्टाकपाणिकुलिशस्य हरेः प्रमादः॥३२॥

(नेपथ्ये कलकलः। सर्वे आकर्णयन्ति)

भो भो मालत्यन्वेषिणः, इयममात्यभूरिवसुमाश्वासयन्त्यप्रतिहतप्रज्ञाचक्षुर्भगवती कामन्दकी समादिशति, पर्यवष्टभ्यतामेतत्करालायतनम्।

नाघोरघण्टादन्यस्मात्कर्मैतद्दारुणादभूत्।
न करालोपहाराच्च फलमन्यद्विभाव्यते॥३३॥

कपालकुण्डला—भगवन्! पर्यवष्टब्धाः स्मः।
अघोरघण्टः—सम्प्रति विशेषतः पौरुषस्यावसरः।
मालती—हा तात! हा भगवति! (हा ताद! हा भअवदि!)

माधव और अघोरघण्ट दोनों—(मालती और कपालकुण्डला के लिए) अरे डरपोक! हृदय में धैर्य धारण करो, यह पापात्मा को मरा हुआ समझो। क्या कभी भी, किसी ने भी, हरिण के वध की विधि में बड़े-बड़े गजराजों के मस्तक-पिण्डों को मर्दित करनेवाले वज्र के समान दृढ पंजों वाले सिंह की असावधानी का अनुभव किया है॥३२॥

(नेपथ्य में कोलाहल होता है। सभी लोग सुनते हैं।)

अरे अरे मालती को खोजने वालो! अमात्य भूरिवसु को आश्वासन देती हुई अकुण्ठित बुद्धि रूपी नेत्रों से युक्त भगवती कामन्दकी ने आज्ञा दी है कि इस कराला देवी के मन्दिर को चारों ओर से घेर लो। (क्योंकि)

भयानक (कर्म करने वाले) अघोरघण्ट को छोड़कर किसी अन्य से यह कर्म संभव नहीं है। और कराला देवी के (बलिदान रूप) उपहार के अतिरिक्त मालती के अपहरण का कोई दूसरा फल (प्रयोजन) भी नहीं जाना जाता॥३३॥

कपालकुण्डला—भगवन्! हम लोग चारों ओर से घिर गये हैं।
अघोरघण्ट—अब इस समय विशेष पुरुषार्थ दिखाने का अवसर आ गया है।
मालती—हाय तात! हाय भगवती!

माधवः—भवतु बान्धवसमाजमुस्थितामेनां विधाय तत्समक्षमेनं व्यापादयामि (मालतीमन्यतः प्रेषयन्परिक्रामति)

(माधवाघोरघण्टावन्योन्यमुद्दिश्य)

आः ! रे रे पाप !

कठरास्थिग्रन्थिव्यतिकरघणत्कारमुखरः
खरस्नायुच्छेदक्षणविहितवेगव्युपरमः।
निरातङ्कः पङ्केष्विव पिशितखण्डेषु निपत-
न्नसिर्गात्रंगात्रं सपदि लवशस्ते विकिरतु ॥३४॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे पञ्चमोऽङ्कः।

माधव—जो हो, (मालती को) उसके बान्धव जनों के समूह में सुखपूर्वक रखकर, उन लोगों के सामने ही इस पापी को मारता हूं।

(मालती को उसके बान्धव-समूह में भेजते हुए चारों ओर घूमता है।)

माधव और अघोरघण्ट (एक दूसरे के लिए)

अरे रे पापी ! कठोर अस्थि-ग्रन्थियों में बधे होने के कारण घणघण शब्दों से शब्दायमान, कठिन स्नायु मण्डलों के काटने से कुछ क्षणों तक वेग की विश्रान्ति से युक्त हमारी तलवार कीचड़ की भांति (तुम्हारे शरीर में स्थित) मांसपिण्ड के भीतर घूमती हुई तुरन्त ही तुम्हारे प्रत्येक अंग को बोटी बोटी काट कर दिशाओं में फेंक दे ॥३४॥

(ऐसा कहने के अनन्तर सभी लोग चले जाते हैं।)

महाकवि भवभूति रचित मालतीमाधव नाटक में श्मशान वर्णन
नामक पांचवां अंक समाप्त ॥५॥

षष्ठोऽङ्कः

(ततः प्रविशति कपालकुण्डला)

कपालकुण्डला—आः पाप दुरात्मन् ! मालतीनिमित्तं विनिपातितास्मद्गुरो ! माधवहतक ! अहं त्वया तस्मिन्नवसरे निर्दयं निघ्नत्यपि स्त्रीत्यवज्ञाता। (सक्रोधम्) तदवश्यमनुभविष्यसि कपालकुण्डलाकोपस्य फलम्।

शान्तिः कुतस्तस्य भुजङ्गशत्रोर्यस्मिन्निबद्धानुशया सदैव।
जागर्ति दंशाय निशातदंष्ट्राकोटिर्विषोद्गारगुरुर्भुजङ्गी ॥१॥

(नेपथ्ये)

भो राजानश्चरमवयसामाज्ञया संचरध्वं
कर्तव्येषु, श्रवणसुभगं भूमिदेवाः पठन्तु।
चित्रं नानावचननिवहैश्चेष्टयतां मङ्गलेभ्यः
प्रत्यासन्नस्त्वरयतितरां जन्ययात्राप्रवेशः ॥२॥

(तदनन्तर कपालकुण्डला प्रवेश करती है।)

कपालकुण्डला—अरे पापी दुरात्मन् ! नीच माधव ! मालती के लिए तुमने मेरे गुरु जी की हत्या कर दी है। उस अवसर पर निर्दय प्रहार करने पर स्त्री कह-कर तुमने मेरी अवज्ञा कर दी (क्रोध के साथ) तो अब तुम कपालकुण्डला के क्रोध के फल को अवश्य चखोगे।

उस सर्प की हत्या करनेवाले को भला शान्ति किस प्रकार मिलेगी, जिसे चिर-काल से विद्वेष रखनेवाली, तीक्ष्ण दाढ़ों के अग्रभाग से युक्त तथा विष के उद्वमन से अतीव भयकर सर्पिणी सदा ही डँसने के लिए जागरूक रहती है ॥१॥

(नेपथ्य में)

हे नृपतिगण ! कुल के आचार-व्यवहार को देखनेवाले वृद्ध जनों की आज्ञा से करणीय कार्यों में प्रवृत्त हो। हे ब्राह्मणो ! आप लोग श्रवण-सुखदायी घोषा-मगल पाठ करें, (वन्दीजन) अनेक प्रकार की रचनाचातुरी में निर्मित विचित्र वाक्यों द्वारा लोगों के हृदयों में विस्मय पैदा करने की चेष्टा करें, वरयात्रा में सम्मिलित होनेवाले लोगों की यात्रा का समय समीप आकर सब को अतिशय शीघ्रता करने की प्रेरणा दे रहा है। ॥२॥

यावच्च सम्बन्धिनो न परापतन्ति तावद्वत्सया मालत्या नगरदेवतागृहमविघ्नमङ्गलाय गन्तव्यमित्यादिशति भगवती कामन्दकी। अन्यच्च गृहीतमङ्गलविशेषमण्डनः प्रतीक्ष्यतामानुयात्रिको जन इति।

कपालकुण्डला—भवतु। मालतीविवाहपरिसंभ्रमपुरन्ध्रिप्रतिहारजनबहुल-संकुलात्प्रदेशादपक्रम्य माधवापकारं प्रत्यभिनिविष्टा भवामि। (इति निष्क्रान्ता)

इति शुद्धविष्कम्भकः

कलहंसः—(प्रविश्य) आज्ञप्तोऽस्मि नगरदेवतागर्भगृहवर्तिना मकरन्दसनाथेन माधवेन 'जानीहि तावदितोमुखं प्रवृत्ता मालती न वेति'। तद्यावदेनमानन्दयिष्यामि। (आणत्तोम्हि णअरदेव्वदागब्भघरवट्टिणा मअरन्दसणाहेण माहवेण जाणीहि दाव इदोमुहं पउत्ता मालदी ण वेत्ति। ता जाव णं आणन्दइस्सं)

(ततः प्रविशतो माधवमकरन्दौ)

माधवः—

मालत्याः प्रथमावलोकनदिनादारभ्य विस्तारिणी
भूयः स्नेहविचेष्टितैर्मृगदृशो नीतस्य कोटिं पराम्।

भगवती कामन्दकी की आज्ञा में चलनेवाली अमात्य महोदय की पत्नी का आदेश है कि जब तक बरयात्रा में सम्मिलित होनेवाले लोग उपस्थित नहीं होते तब तक वात्सल्य-भाजन मालती विघ्न-विनाश तथा मंगल-प्राप्ति के लिए नगराधिष्ठित देवता के मन्दिर में जाय। और विशेष अलंकार एवं वस्त्र आदि धारण करके (मालती) के भृत्य वर्ग उसकी प्रतीक्षा करें।

कपालकुण्डला—हाँ, मालती के विवाह की तैयारी में व्यस्त परिवार की स्त्रियों तथा बहुतेरे द्वारपालों से संकुल इस स्थान से दूर हटकर मैं माधव के अपकार की बात निश्चित करूँ।

(ऐसा कहकर जाती है।)

शुद्ध विष्कम्भक समाप्त

कलहंस—(प्रवेश करके) मकरन्द के साथ हमारे स्वामी माधव नगर देवता के मन्दिर के भीतर अवस्थित हैं, उन्होंने हमें आदेश दिया है कि—देखो मालूम करो कि मालती इस ओर आ रही है कि नहीं। तो चलकर उन्हें आनन्दित करूँ।

(तदनन्तर माधव और मकरन्द प्रवेश करते हैं।)

माधव—हरिणी के समान मनोहर नेत्रों वाली मालती के प्रथम दर्शन के दिन से जो काम-वेदना क्रमशः वृद्धि को प्राप्त हो रही थी एवं हमारी प्रतिमूर्ति

अद्यान्तः खलु सर्वथास्य मदनायासप्रबन्धस्य मे
कल्याणं विदधातु वा भगवतीनीतिर्विपर्येतु वा ॥३॥

मकरन्दः—कथं भगवत्या. सा मेधाशक्तिर्विपर्येष्यति।

कलहंसः—(उपसृत्य) नाथ, दिष्ट्या वर्धसे। प्रवृत्ता खल्वितोमुखं मालती। (णाह, दिट्ठिआ वड्ढसि। पउत्ता क्खु इदोमुहं मालदी)

माधवः—अपि सत्यम्?

मकरन्दः—किमश्रद्दधानः पृच्छसि। न केवलं प्रवृत्ता प्रत्यासन्ना च वर्तते। तथा हि—

अस्माकमेकपद एव मरुद्विकीर्णजीमूतजालरसितानुकृतिर्निनादः।
गम्भीरमङ्गलमृदङ्गसहस्रजन्मा शब्दान्तरश्रवणशक्तिमपाकरोति॥४॥

तदेहि। जालमार्गेण पश्याम.।

(तथा कुर्वन्ति)

कलहंसः—नाथ, पश्य। इमे तावदुत्पतितराजहंसविभ्रमाभिरामचाम-

की चित्र-रचना आदि प्रणय सूचक चेष्टाओं से जो अपनी चरम सीमा को प्राप्त हो गयी थी। उस परम्परा का आज निश्चय ही सब प्रकार से अवसान होगा (देखें) भगवती कामन्दकी की नीति हमारा कल्याण करती है या विपरीत फल लाती है॥३॥

मकरन्द—भगवती कामन्दकी अतीव मेधाशक्ति सम्पन्न है। उनकी बुद्धि का कौशल भला कैसे विपरीत फल ला सकता है।

कलहंस—(समीप आकर) नाथ! सौभाग्य से आपको बधाई है। मालती इसी ओर आ रही है।

माधव—क्या सचमुच (मालती इसी ओर आ रही है।)

मकरन्द—क्यों आपको विश्वास नहीं जो ऐसा पूछते हैं। न केवल इस ओर आ ही रही है, वरन् वह नितान्त समीप आ गयी है। क्योंकि—वायु द्वारा प्रेरित मेघमण्डल की गर्जना का अनुकरण करनेवाले एवं गंभीर आवाज करनेवाले सहस्रों मांगलिक मृदंगों से उत्पन्न ध्वनि अकस्मात् हम लोगों की अन्य आवाज सुनने की शक्ति को दूर किए दे रही है॥४॥

अतः आओ। झरोखे के मार्ग से हम लोग उसे देखें।

(वैसे करते हैं।)

कलहंस—स्वामी! देखें। यह सम्पूर्ण शुभ्र वर्ण के मांगलिक छत्र-समूह दिखाई

रसमीरणोद्वेलत्पताकावलीतरङ्गितोत्तानगगनाङ्गणसरोनिरन्तरोद्दण्डपुण्डरीकविभ्रमं वहन्तो मङ्गलधवलातपत्रनिवहा दृश्यन्ते। इमाः सविलासवल्गितताम्बूलीभिपूरितकपोलमण्डलाभोगव्यतिकरसंगलितमधुरमङ्गलोद्गीतबद्धकोलाहलैर्विविधरत्नालंकारकिरणावलीविडम्बितमहेन्द्रचापविच्छेदैर्विच्छुरितगगनाभोगैर्वारसुन्दरीकदम्बकैरध्यासिता कणत्कनककिङ्किणीरणितझणझणत्कारिण्यः करिण्यः। (णाह, पेक्ख। इमे दाव उप्पाडिअराअहंसविब्भमाहिरामचामरसमीरणुव्वेल्लिरपडाआवलीतरङ्गिदुत्ताणगअणङ्गणसरोणिरन्तरुद्दण्डपुण्डरीअविब्भमं वहन्दो मङ्गलधवलादवत्तणिवहा दीसन्ति। इमाओ सविलाससव्वलिदतम्बूलाहिपूरिदकवोलमण्डलाभोअव्वदिअरसंगलिदमहुरमङ्गलुग्गीअबद्धकोलाहलेहिं विविहरअणालंकारकिरणावलीविडम्बिदमहिन्दचावविच्छेदेहिं विच्छुरिदणहत्थलेहिं वारसुन्दरीकदम्बेहिं अज्झासिआओ कणन्तकणअकिङ्किणीरणिअझणझणआरिणीओ करिणीओ)

(माधवमकरन्दौ सकौतुकं पश्यतः)

मकरन्दः—स्पृहणीया खल्वमात्यभूरिवसोर्विभूतयः। तथा हि—

प्रेङ्खद्भूरिमयूरमेचकवपुरम्भोधिचापच्छद-
च्छायासंवलितैर्विवर्तिभिरिव प्रान्तेषु पर्यावृताः।

पड रहे हैं, जो उड़ते हुए राजहंसो की भांति विलास-सौन्दर्य से सम्पन्न, चामरों की हवा से ऊपर हिलने वाली पाताकाओं की पंक्ति से तरंगित ऊपर ऊँचे उठे हुए आकाश-मंडल रूपी सरोवर में सघन सान्द्र नालदण्डोंवाले श्वेतकमलों की छवि को धारण कर रहे हैं। ये सामने हथिनियों की जो पंक्तियां दिखायी पड रही हैं, उनके ऊपर जो सब वेश्याएँ बैठी हुई हैं, उनके कपोल-स्थल लीला पूर्वक चबाये गये ताम्बूल से रंग-से उठे हैं, उनके द्वारा सुमधुर मंगलगान का कोलाहल बढ़ता जा रहा है, उनके द्वारा जो विशेष आभूषण और वस्त्र धारण किए गए हैं, उनमें लगे रत्नों की किरणों की पंक्तियों से मानो अनेक इन्द्रधनुषों का निर्माण हो गया है जिससे गगनमण्डल व्याप्त हो गया है। और इनकी पहनी हुई सुवर्ण की किंकिणियाँ जो बज रही हैं, उनसे यह हथिनियों का समूह झनझन का शब्द कर रहा है।

(माधव और मकरन्द कौतूहलपूर्वक देखते हैं।)

मकरन्द—अमात्य भूरिवसु का ऐश्वर्य एवं धन-सम्पदा सब कुछ स्पृहणीय है। क्योंकि उड़ते हुए नीलकण्ठ पक्षियों के पंखों की कान्ति से मिश्रित आकाश में

व्यक्ताखण्डलकार्मुका इव भवन्त्युच्चित्रचीनांशुक-
प्रस्तारस्थगिता इवोन्मुखमणिज्योतिर्वितानैर्दिशः ॥५॥

कलहंसः—कथं ससंभ्रमानेकप्रतीहारमण्डलावर्जितोज्ज्वलकनककलधौतपङ्कलिप्तचित्रवेत्रलतापरिक्षिप्तरेखारचितमण्डलो दूरसंस्थितः परिजनः। एषा च बहुलसिन्दूरनिकरसंध्यारागोपरक्तमुखमधुरघूर्णमाननक्षत्रमालाभरणधारिणी करेणुरजनीमलंकुर्वतीव एव कौतूहलोत्फुल्लमुखसमस्तलोकदृश्यमानमनोहरापाण्डुरपरिक्षामदेहशोभाविभावितानङ्गवेदना प्रथमचन्द्रलेखाविभ्रमं वहन्ती किंचिदन्तरं प्रभूता मालती। (कहं ससंभमाणेअपडिहारमण्डलावज्जिदुज्जलकणअकलधोअपङ्कलित्तचित्त वेत्तलदापरिक्खित्तरेहारइअमण्डलो दूरसंठिदो परिअणो। एसा अ बहुलसिन्दूरणिअरसंज्झारारओवरत्तमुहमहुरघोलन्तणक्खत्तमालाभरणधारिणि करेणुरअणिं अलंकरन्ती इवो जेव्व

उड़नेवाले बहुसंख्यक मयूरों के चंचल पुच्छों में अवस्थित चन्द्रकों[1] की भांति (इन गणिकाओं द्वारा धारण किये गये अलंकारों में जड़े हुए) रत्नों की ऊपर फैलती हुई किरणों के विस्तारों से दिशाओं के सभी अंचल व्याप्त हो रहे हैं। जिससे वे स्पष्ट दिखाई पड़ने वाले इन्द्रधनुषों से सुशोभित की भांति, अथवा रंग-बिरंगे चित्रों से विमण्डित चीन देश के रेशमी वस्त्रों से आच्छादित की भांति दिखाई दे रही हैं ॥५॥

कलहंस—यह क्यों जल्दी मचानेवाले अनेक द्वारपाल लोग सुवर्ण और चांदी के मुलम्मों से सुशोभित उज्ज्वल एवं रंग बिरंगी अपनी बेंत की छड़ियों को पृथ्वीतल पर झुकाकर रेखाओं से घेर कर मण्डल बना रहे हैं, जिसमें अवस्थित मालती के परिजनवर्ग (परिचारिका वृन्द) दूर ही बैठे हुए हैं। और मालती इस हस्तिनी रूपी रजनी को, जो सिन्दूर-रूपी सन्ध्या की लालिमा से अनुरंजित होकर मुख (मुखरूपी प्रथम प्रहर में) के ऊपर सुन्दर ढंग से अपने प्रभामण्डल से चक्राकार घूमती-सी हार रूपी नक्षत्रों की पंक्तियाँ धारण कर रही है, अलंकृत करती हुई अपनी परिचारिकाओं से कुछ अन्तर पर आती दिखायी पड़ रही है। सभी लोग

---

१. नीले पीले रंगों से सुशोभित चन्द्रमा के समान गोली आकृति मयूरों के पुच्छों में होती है। उन्हें भी चन्द्रक कहा गया है।

कोदूहलुप्फुल्लमुहसमत्थलोअदिस्सन्तमणहरप्पण्डुरपरिक्खामदेहसोहा दिभाविआण-ङ्गवेअणा पढमञ्चन्दलेहाविब्भमं वहन्दी किंचिअन्दरं पसरिदा मालदी)

मकरन्दः—वयस्य, पश्य।

> इयमवयवैः पाण्डुक्षामैरलंकृतमण्डना
> फलितकुसुमा बालेवान्तर्लता परिशोषिणी।
> वहति च वरारोहा रम्यां विवाहमहोत्सव-
> श्रियमुदयिनीमुद्भूतां च व्यनक्ति मनोरुजम्॥६॥

कथं निपादिता गजवधूः।

माधवः—(सानन्दम्) कथमवतीर्य भगवतीलवङ्गिकाभ्यां प्रवृत्तैव।

(ततः प्रविशति कामन्दकी, मालती लवङ्गिका च)

कामन्दकी—(सहर्षमपवार्य)

> विधाता भद्रं नो वितरतु मनोज्ञाय विधये
> विधेयासुर्देवाः परमरमणीयां परिणतिम्।

कुतूहल से विकसित मुख होकर उस मनोहारिणी को देख रहे हैं। हृदय में स्थित कामवेदना के कारण शरीर का रंग श्वेत हो गया है। अत्यन्त दुबले पतले शरीर से वह प्रतिपदा के चन्द्रमा की शोभा धारण कर रही है।

मकरन्द—मित्र देखो न,

अपने श्वेत-पीले और दुर्बल अंगों से अलंकारों को भी अलङ्कृत करनेवाली, पुष्पावली-विमण्डित, भीतर से (कीटादि द्वारा) सूखती हुई नवीन लता की भाँति यह मालती, मन को मोहनेवाले एवं अभ्युदय के सूचक विवाह महोत्सव की शोभा भी धारण कर रही है और अपने मन की तीव्र वेदना भी व्यक्त कर रही है॥६॥

क्या हथिनी बैठा दी गयी।

माधव—(आनन्दपूर्वक) हथिनी से नीचे उतरकर (मालती) भगवती कामन्दकी और लवङ्गिका के साथ आ रही है।

(तदनन्तर कामन्दकी, मालती और लवङ्गिका प्रवेश करती हैं।)

कामन्दकी—(हर्ष के साथ अपने ही आप)

विधाता इस मनोहर मङ्गल-विवाह के लिए हमें कल्याण का वितरण करें। देवता लोग अतिशय सुन्दर परिणाम प्रकट करें। अपने प्रिय मित्रो (भूरिवसु

कृतार्था भूयासं प्रियसुहृदपत्योपनयतः
प्रयत्नः कृत्स्नोऽयं फलतु, शिवतातिश्च भवतु ॥७॥

मालती—(स्वगतम्) केन पुनरुपायेन सांप्रतं मरणनिर्वाणरयान्तर संभावयिष्यामि। मरणमपि मे मन्दभागधेयाया अभिमतमतिदुर्लभं भवति। (केण उण उवाएण संपदं मरणणिव्वाणस्स अन्दरं संभावइस्सं। मरणं वि मे मन्दभाअहेआए अहिमदं अदिदुल्लहं होदि)

लवङ्गिका—अतिक्लेशिता खलु प्रियसख्येतेनानुकूलविप्रलम्भेन (अदि कीलालिदा क्खु पिअसही एदिणा अणुऊलविप्पलम्भेण)

(प्रविश्य भूषणपटलकहस्ता)

प्रतीहारी—भगवतीममात्यो भणति। एतेन नरेन्द्रानुप्रेषितविवाहनेपथ्येन देवतायाः पुरतोऽलंकर्तव्या मालतीति। (भअवदीं अमच्चो भणादि। एदिणा णरिन्दाणुप्पेसिदविवाहणेवत्थेण देवदाए पुरदो अलंकरिदव्वा मालदि त्ति)

कामन्दकी—युक्तमाङ्गलिकं हि तत्स्थानम्। इतो दर्शय।

प्रतीहारी—एतत्तावद्धवलपट्टांशुकयुगम्। एतच्चोत्तरीयरक्तवर्णांशुकम्। इमे च सर्वाङ्गिका आभरणसयोगा इमे च मौक्तिकहाराः एतच्चन्दनम्। एष सितकुसुमापीड इति। (एदं दाव धवलपट्टंसुअजुअलं। एदं अ उत्तरीअवण्णसुअं।

और देवरात) की सन्तानों (मालती और माधव) के पारस्परिक विवाह से मैं कृतकृत्य हो जाऊं। यह सम्पूर्ण प्रयास फलवान एवं मगलदायी हो॥७॥

मालती—(अपने आप) मैं इस समय किस उपाय द्वारा मृत्यु-रूप दुःख-निवृत्ति को प्राप्त कर सकती हूं। मुझ अभागिनी को अभिमत मृत्यु भी अतीव दुर्लभ हो रही है।

लवंगिका—हमारी प्रियसखी अपने प्रियतम (माधव) के विरह से अतिशय दुःखी है।

(आभूषण की पिटारी को हाथ में लेकर प्रवेश कर)

प्रतीहारी—अमात्य ने भगवती से कहा है कि राजा द्वारा भेजे गये इन विवाहोचित अलंकारों से देवता के सम्मुख आप मालती को अलंकृत करें।

कामन्दकी—वह (देवता का) स्थान ऐसे मंगल कार्य के लिए सर्वथा उचित ही है। इधर दिखलाओ।

प्रतीहारी—यह एक जोड़ा श्वेत रेशमी वस्त्र है। यह उत्तरीय (ओढ़नी) के

इमे अ सव्वङ्गिआ आहरणसंजोआ। इमे अ मोत्तिआहारा। एदं चन्दणं। एसो सिदकुसुमापीडो त्ति)

कामन्दकी—(अपवार्य) रमणीय वत्स मकरन्दमवलोकयिष्यति जनः। (प्रकाशम्। गृहीत्वा) भवतु। एवमुच्यताममात्यः।

(प्रतिहारी निष्क्रान्ता)

कामन्दकी—लवङ्गिके, प्रविश त्वमभ्यन्तर वत्सया मालत्या सह।

लवङ्गिका—भगवती पुन। (भअवदी उण)

कामन्दकी—अहमपि विविक्ते तावदलंकरणरत्नाना प्राशस्त्य शास्नतः परीक्ष्ये। (इति निष्क्रान्ता)

मालती—(आत्मगतम्) लवङ्गिकामात्रपरिवारा तावत्संवृत्ता। (प्रकाशम्) इद देवतामन्दिरद्धारम्। तत्प्रविशतु प्रियसखी। (लवङ्गिकामेत्तपरिवारा दाव संउत्ता। एदं देवदामन्दिरदुवारं। ता पविदु पिअसही)

(प्रविशतः)

मकरन्द—इतः स्तम्भान्तरितौ पश्याव।

लिए लाल रग का रेशमी वस्त्र है। ये सभी अंगों मे पहनाने के आभूषण हैं। ये मुक्ता के हार हैं। यह चन्दन है, और यह श्वेत पुष्पो का शिरोभूषण है।

कामन्दकी—(अपने आप) नगर निवासी गण वात्सल्यभाजन मकरन्द को सुन्दर रूप मे देखेंगे। (प्रकट रूप मे। पकड़ कर) अच्छी बात है। अमात्य महोदय को ऐसा कह देना।

(प्रतीहारी चली जाती है।)

कामन्दकी—लवंगिके! तुम बच्ची मालती के साथ भीतर चली जाओ।

लवंगिका—और भगवती फिर (कहाँ आयगी?)

कामन्दकी—मैं भी एकान्त स्थान मे शास्त्रीय वचनों के अनुसार इन रत्नों और अलंकारों की श्रेष्ठता की परीक्षा करती हूँ।

(ऐसा कह कर बाहर जाती है।)

मालती—(अपने आप) मैं तो अब एक मात्र लवंगिका के साथ बच गयी हूँ। (प्रकट रूप मे) यह देव मन्दिर का द्वार है। इसलिए प्रिय सखी प्रवेश करें।

(दोनों प्रवेश करती हैं।)

मकरन्द—इस ओर खम्भे की आड़ मे छिप कर हम लोग देखें।

(तया कुरुतः)

लवङ्गिका—सखि, अयमङ्गरागः। इमाः कुसुममालाः। (सहि, अअं अङ्गराओ। इमाओ कुसुममालाओ)

मालती—ततः किम्। (तदो किं)

लवङ्गिका—सखि, अस्मिन्पाणिग्रहणमङ्गलारम्भे कल्याणसंपत्तिनिमित्तं देवता पूजयेत्यम्बयानुप्रेषितासि। (सहि, इमस्सिं पाणिग्गहणमङ्गलारम्भे कल्लाणसंवत्तिणिमित्तं देवदा पूजेहि त्ति अम्बाए अणुप्पेसिदासि)

मालती—(स्वगतम्) कस्मादिदानीं दारुणसमारम्भदैवदुर्विलासपरिणामदुःखनिर्दलितमानसां पुनरपि मर्मच्छेददुःसहां मन्दभागिनीमुपतापयसि। (कुदो दाणिं दारुणसमारम्भदेव्वदुव्विलासपरिणामदुक्खणिद्दलिअमाणसं पुणो वि मम्मच्छेददूसहं मन्दभाइणीं दूमिज्जसि)

लवङ्गिका—अयि किं वक्तुकामासि। (अइ, किं वत्तुकामासि)

मालती—किमिदानीं दुर्लभाभिनिवेशमनोरथविसंवदद्भागधेयो जनो मन्त्रयते। (किं दाणिं दुल्लहाहिणिवेसमणोरहविसंवदन्तभाअहेओ जणो मन्तेदि)

मकरन्दः—सखे, श्रुतम्।

माधवः—असंतोषस्तु हृदयस्य।

(वैसा ही करते हैं।)

लवंगिका—सखी! यह अंगराग है और यह फूलों की मालाएँ हैं।

मालती—इससे क्या?

लवंगिका—माता जी ने आपको इसीलिए यहाँ भेजा है कि इस मंगल-विवाह के आरम्भ में कल्याण-सम्पत्ति की प्राप्ति के लिए देवता की पूजा करो।

मालती—(अपने आप) इस समय भयकर कार्य का आरम्भ करने वाले विधाता के दुर्व्यवहार के परिणाम-रूप दुःख से विदीर्ण हृदयवाली एवं दुःसह मर्मस्थल के भेदन से पीडित इस अभागिनी को तुम फिर क्यों जला रही हो?

लवंगिका—अरे! तुम क्या कहना चाहती हो।

मालती—जिसका मनोरथ दुर्लभ वस्तु का प्रार्थी हो, और उसका भाग्य विपरीत हो तो वह और क्या बोलेगा।

मकरन्द—मित्र! सुना (कुछ)।

माधव—यह तो इसके हृदय का असन्तोष है।

मालती—(लवङ्गिकां परिष्वज्य) परमार्थभगिनि ! प्रियसखि ! लवङ्गिके ! एषेदानीं ते प्रियसख्यनाथा मरणे वर्तमानाऽऽगर्भनिर्गमनिरन्तरोपारूढविस्रम्भसदृशं परिष्वज्याभ्यर्थयते। यदि तेऽहमनुवर्तनीया ततो मां हृदयेन धारयन्ती समग्रसौभाग्य-लक्ष्मीपरिग्रहैकमङ्गलं माधवस्य श्रीमुखारविन्दमानन्दमसृणं प्रलोकय। (इति रोदिति) (परमत्थबहिणि पिअसहि लवङ्गिए, एसा दाणिं दे पिअसही अणाहा मरणे वट्टमाणा आगब्भणिग्गमणिरन्तरोवारूढविस्सम्भसरिसं परिस्सजिअ अब्भत्थेदि। जइ दे अहं अणुवट्टणीआ तदो मं हिअएण धारअन्ती समग्ग-सोहग्गलच्छीपरिग्गहेक्कमङ्गलं माहवस्स सिरिमुहारविन्दं आणन्दमसिणं पलोएहि)

माधवः—वयस्य मकरन्द

म्लानस्य जीवकुसुमस्य विकासनानि
संतर्पणानि सकलेन्द्रियमोहनानि।
आनन्दनानि हृदयैकरसायनानि
दिष्ट्या मयाप्यधिगतानि वचोमृतानि॥८॥

मालती—यथा तस्य जीवितप्रदायिनोऽवसितां मां श्रुत्वा संतप्यमानस्य तथाविधं शरीररत्नं न परिहीयते यथा च लोकान्तरगतामपि मामुद्दिश्य स जनः स्मरणकथामात्रपरिशेषां कालान्तरेणापि लोकयात्रां न शिथिलीकरोति तथा कुरु। एवं ते प्रियसखी मालती सकामा भवति। (जह तस्स जीविदप्पदाइणो अवसिदं

मालती—(लवंगिका का आलिंगन करती हुई) हे वास्तविक बहिन ! प्रिय सखी ! लवंगिके ! अब इस समय यह तुम्हारी प्रियसखी अनाथ है और प्राण-त्याग का निश्चय कर चुकी है अत तुम्हें आलिंगन कर के गर्भावस्था से निकलने के समय से लेकर आज तक निरन्तर प्रगाढ विश्वास के अनुरूप प्रार्थना कर रही है कि यदि तुम्हें मेरे मन के अनुरूप चलना है तो मुझे हृदय में धारण कर, समस्त सौभाग्य-श्री के स्वीकार-रूप अनुपम मंगलमय, आनन्द से मनोहर माधव के मुख-कमल का दर्शन कराओ। (ऐसा कह कर रोती है।)

माधव—मित्र मकरन्द ! मैंने भी आज भाग्यवश ग्लानियुक्त जीवन-पुष्प को विकसित करने वाले, अतीव तृप्तिदायी सम्पूर्ण इन्द्रियों को मोहित करने वाले, आनन्ददायी एवं रसायन ओषधि की भांति मन को पुष्टि देने वाले (मालती के) वचन रूप अमृत को प्राप्त कर लिया है॥८॥

मालती—मेरी मृत्यु का संवाद सुन कर सन्तप्त मेरे जीवनदाता माधव का वह अनुपम शरीर-रत्न जिस प्रकार से नष्ट न हो और जिस प्रकार से दूसरे लोक में

मं सुणिअ संदप्पमाणस्स तहाविहं सरीररअणं ण परिहीअदि, जह अ लोअन्द-रअगअं वि मं उद्दिसिअ सो जणो सुमरणकहामेत्तपरिसेसं कालन्तरेण वि लोअजत्तं ण सिढिलेदि तह करेसु। एव्वं दे पिअसही मालदी सकामा होइ)

मकरन्दः—हन्त अतिकरुणं प्रस्तुतम्।

माधवः—

नैराश्यकातरधियो हरिणेक्षणायाः
श्रुत्वा निकामकरुणं च मनोहरं च।
वात्सल्यमोहपरिदेवितमुद्वहामि
चिन्ताविषादविपदं च महोत्सवं च॥९॥

लवङ्गिका—अयि प्रतिहतं तेऽमङ्गलम्। इतोऽप्यपरं न श्रोष्यामि। (अइ, पडिहदं दे अमङ्गलं। इदो वि अवरं ण सुणिस्सं)

मालती—सखि प्रियं खलु युष्माकं मालतीजीवितं न पुनर्मालती। (सहि, पिअं क्खु तुम्हाणं मालदीजीविदं ण उण मालदी)

लवङ्गिका—सखि किमिति भणितं भवति। (सहि, किं त्ति भणिदं होदि)

मालती—येन प्रत्याशानिबन्धनैर्वचनसविधानैर्जीवयित्वेमं महावीभत्सारम्भमनु-भावितास्मि। सांप्रतं पुनर्मे मनोरथ एतावानेव। यत्तस्य देवस्य परकीयत्वे-

---

जाने वाली स्मरण एवं कथामात्र से अवशिष्ट मुझको लक्ष्य कर कालान्तर में भी वह अपना लौकिक जीवन-व्यवहार शिथिल न करें, वैसा ही तुम करना। इस प्रकार से तुम्हारी यह सखी मालती कृतार्थ होगी।

मकरन्द—हाय! यह तो कारुणिक प्रसंग उपस्थित हो गया है।

माधव—निराशा से दुःखित चित्त हरिणनयना मालती का यह अतीव करुणाजनक, मन को मोह लेने वाला, सच्चे प्रेम और मोह से भरा हुआ विलाप सुन कर मैं चिन्ताजनित विषाद से युक्त विपत्ति और महोत्सव—दोनों का अनुभव कर रहा हूँ॥९॥

लवंगिका—अरे! तुम्हारे अमंगल विनष्ट हों। मैं इससे अधिक नहीं सुनना चाहती हूँ।

मालती—सखी! तुम लोगों को मालती का जीवन प्यारा है, किन्तु मालती नहीं।

लवंगिका—सखी! तुम यह क्या कह रही हो?

मालती—क्योंकि तुमने आशाजनक वचनों द्वारा इस शरीर को रक्षा कर इस

नापराद्धमात्मानं परित्यज्य निर्वृता भविष्यामि। अस्मिन्प्रयोजने प्रियसखी मेऽपरिपन्थिनी भवतु। (इति पादयोः पतति) (जेण पच्चासाणिब्बन्धणेहिं पअणसंधिहाणेहिं ओआयिअ इमं महाबीभच्छारम्भं अनुभाविदम्हि। संपदं उण मे मणोरहो एत्तिअं जेव्व। जं तस्स चेवस्स परकेरअत्तणेण अवरद्धं अत्ताणं परिच्चइअ णिव्वुदा हुविस्सं। अस्सि पओअणे पिअसही मे अपरिपन्थिणी होदु)

मकरन्दः—एषा परमा सीमा स्नेहस्य।

(लवङ्गिका माधवं संज्ञयाऽऽहूयति)

मकरन्दः—वयस्य, लवङ्गिकास्थाने तिष्ट।

माधवः—परवानस्मि साध्वसेन।

मकरन्दः—इयमेव नेदीयसां प्रकृतिरभ्युदयानाम्।

(माधवः स्वैरं लवङ्गिकास्थाने तिष्ठति)

मालती—सखि, अनुकूलतया प्रसाद कुरु। (सहि, अणुऊलदाए पसादं करेहि)

माधव—सरले! साहसरागं परिहर, रम्भोरु! मुञ्च संरम्भम्।
विरसं विरहायासं सोढुं तव चित्तमसहं मे॥१०॥

अतीव कुत्सित घटना के आरम्भ का अनुभव कराया है। अब तो मेरा मनोरथ इतना ही है कि जो यह हमारा शरीर उन (माधव) महानुभाव के लिए परकीय हो गया है तो अब इस अपराधी शरीर को त्याग कर मैं सुखयुक्त हो जाऊँगी। तो हमारी प्रियसखी इस कार्य में प्रतिकूल न बनें। (ऐसा वह कर पैरों पर पड़ती है।)

मकरन्द—यह तो प्रेम की चरम सीमा है।

(लवंगिका माधव को इशारे से बुलाती है।)

मकरन्द—मित्र! आप लवंगिका के स्थान पर जा कर खड़े हो जायें।

माधव—मैं तो इस समय भय के कारण अपने वश में नहीं हूँ।

मकरन्द—अतीव समीपवर्ती अभ्युदय का यही स्वभाव होता है।

(माधव बहुत धीरे धीरे लवंगिका के स्थान पर जा कर खड़ा होता है।)

मालती—सखी! अनुकूल बन कर अनुग्रह करो।

माधव—हे सरले! हे कदली के स्तम्भ के समान जघों वाली! अपने दुःसाहस का संकल्प दूर करो। इस दुष्प्रयास को छोड़ो। क्योंकि तुम्हारे नीरस विरह की वेदना सहने के लिए मेरा चित्त असमर्थ हो रहा है॥१०॥

मालती—सखि, अलङ्घनीयस्ते मालतीप्रणामः। (सहि, अलङ्घणिज्जो दे मालदीप्पणामो)

माधवः—

किं वा भणामि विच्छेददारुणायासकारिणि !
कामं कुरु वरारोहे ! देहि मे परिरम्भणम् ॥११॥

मालती—(सहर्षम्) कथमनुगृहीतास्मि। (उत्थाय) इयमालिङ्गामि। दर्शनं पुनर्बाष्पोत्पीडनेन प्रियसख्याः प्रत्यक्षं न लभ्यते। (आलिङ्ग्य सानन्दम्) सखि, कठोरकमलगर्भपक्ष्मलोऽन्यादृश एव तेऽद्य निर्वापयति मां शरीरस्पर्शः। (सास्रम्) किंच मौलिविनिवेशिताञ्जलिमेंम वचनेन विज्ञापय तं जनम्। यथा न मया मन्दभाग्यया विकसच्छतपत्रलक्ष्मीविलासहारिणो मुखचन्द्रमण्डलस्य स्वच्छन्ददर्शनेन सभावितश्चिरं लोचनमहोत्सवः। मुधा मनोरथैरविरतविजृम्भमाणदुर्वारदुःखावेगव्यतिकरोद्वर्तमानबन्धनं धारितं हृदयम्। गमितास्च वारंवारं सविशेषदुःसहायाभ्युपायितसखीजनाः शरीरसंतापाः। कथमप्यतिवाहिताश्चन्द्रातपमलयमारुतप्रमुखा अनर्थपरम्पराः। सांप्रतं पुनर्निराशास्मि संवृत्तेति। त्वयापि प्रियसखि, सर्वदा स्मर्तव्यास्मि। एषा च माधवश्रीहस्तनिर्माणमनोहरा बकुलमाला मालतीनिर्विशेषं प्रियसख्या द्रष्टव्या सर्वदा हृदयेन धारणीया चेति। (इति स्वकण्ठादुन्मुच्य माधवस्य हृदि बकुलमालां विन्यस्यन्ती सहसापसृत्य साध्व-

---

मालती—सखी ! तुम्हें मालती के प्रणाम (अनुनय भरे वचन) का उल्लंघन नहीं करना चाहिए।

माधव—मैं क्या कहूं ? हे प्रियतम के वियोग में दारुण प्रयास करने वाली सुन्दरी ! अपनी अभिलाषा को पूरी करो और मुझे आलिंगन दो ॥११॥

मालती—(हर्ष पूर्वक) मैं कैसे अनुग्रह का भाजन बन गयी ? (उठ कर) यह मैं आलिंगन दे रही हूँ। किन्तु आसुओं के प्रवाह से आंख की पुतलियां के अवरुद्ध हो जाने से मैं अपनी प्यारी सखी को देख नही पा रही हूं (आलिंगन कर आनन्द के साथ) हे सखी ! कठोर कमल के बीज कोष के समान रोमावली युक्त तुम्हारे शरीर का स्पर्श आज कुछ दूसरे ही प्रकार का मालूम हो रहा है और मुझे शीतल कर रहा है। (आसू बहाते हुए) सिर में अंजलि बाध कर मेरी ये बातें उन (माधव जी) से निवेदिन कर देना कि मुझ अभागिनी द्वारा विकसित कमलदल की शोभा को हरण करने वाले आपके मनोहर मुखचन्द्र मण्डल का स्वच्छन्द दर्शन कर बहुत समय तक अपने नेत्रों का महोत्सव नही मना सकी। कोरे मनोरथों से ही अपने

सोत्कम्पं नाटयति) (वहं अणुगहीदम्हि। इअं आलिङ्गामि। वंतणं उण दाफ्फीडणेण पिसाढिहिअए पच्चवणं ण लभिअदि। सहि, कठोरचवलणअवग्गहूनो अणारिसो वेब्ब दे अज्ज णिव्वावेदि मं सरीरफंसो। चिअ मौलिविनिवेसिदअञ्जली एह पअणेण विण्णवेहि तं जणम्। जह ण मए मन्दभाआए विअसन्तणदपत्तलच्छीविलास-हारिणो मुहचन्दमण्डलस्स सच्छन्ददंसणेण संभाविदो चिरं लोअणमहोसवो। मुहा मणोरहेहिं अधिरअधिअभ्भमाणदुव्वारदुक्खावेअवड्ढअदवत्तमाणबन्धणं धारिदं हिअअं। गमिआ अ वारंवारं सविसेसदूसहाआसदूमाविदसहीअणा सरीरसंदावा। वहे वि अविआहिदा चन्दादवमलअमारुअप्पमुहा अणत्थपरम्पराओ। संपदं उण णिरासम्हि संजत्तेति। तुए वि पिअसहि, सव्वदा सुमरिदव्वम्हि। एसा अ माहवसरीहत्थणिम्माणमणोहरा वउलमाला मालदीणिव्विसेसं णिउञ्जीए दट्ठव्वा सव्वदा हिअएण धारणिज्जा अत्ति)

माधवः—हन्त। (अपवार्य)

एकीकृतस्त्वचि निषिक्त इवावपीड्य
निर्भुग्नपीनकुचकुड्मलयानया मे।

घबराते हुए हृदय को धारण किए रही, यद्यपि निरन्तर बढ़ते हुए दुर्निवार दुःख के आवेग के सम्पर्क से उसका (हृदय) बन्धन उन्मूलित हो चुका था। अतीव दुःसह आयासों द्वारा अपनी सखियों को पीड़ित करने वाले शारीरिक सन्ताप बारम्बार सहन किया। काम वेदना मे अनर्थ उपस्थित करने वाले चन्द्रमा के आतप (चादनी) एव मलय वायु आदि अनिष्टकारी पदार्थों को किसी प्रकार सहन किया। किन्तु अब मैं पुनः अतीव निराश हो गयी हूँ। हे प्रिय सखी? तुम्हें भी सदैव मेरा स्मरण करना होगा। यह माधव जी के सुन्दर हाथों की रचना से सुशोभित मनोहारिणी मौलसिरी की माला को तुम अपनी सखी मालती की तरह देखना और इसे सदैव अपने हृदय पर भी धारण करना।

(ऐसा कह कर अपने कण्ठ से उतार कर मौलसिरी की माला माधव के गले में पहनाती हुई मालती यकायक हट कर भयजनित कपन का अभिनय करती है।)

माधव—(अपने आप) यह बड़े सौभाग्य की बात है जो गाढ़े आलिगन से अवमर्दित हो कर कुछ मोटे हुए पीन स्तन मण्डलो से युक्त इन्होंने मेरा आलिगन कर के मेरी चमड़ी को कर्पूर, मुक्ताहार, हरि चन्दन, एव चन्द्रकान्त मणि के रस

कर्पूरहारहरिचन्दनचन्द्रकान्त-
निष्यन्दशैवलमृणालहिमादिवर्गः॥१२॥

मालती—अहो लवङ्गिकया मालती विप्रलब्धा। (अम्हहे, लवङ्गिआए मालदी विप्पलद्धा)

माधवः—अयि स्वचित्तवेदनामात्रवेदिनि! परव्यसनानभिज्ञे! इय-मुपालभसे।

उद्दामदेहपरिदाहमहाज्वराणि
संकल्पसंगमविनोदितवेदनानि।
त्वत्स्नेहसंविदवलम्बितजीवितानि
किं वा मयापि न दिनान्यतिवाहितानि॥१३॥

लवङ्गिका—सखि उपालम्भनीयमुपालब्धासि। (सहि, उवालम्भणिज्जं उवालद्धासि)

कलहंसः—अहो सरसरमणीयता संविधानस्य। (अहो सरसरमणिज्जदा संविहाणस्स)

समेत शैवाल, कमलनाल और हिम आदि शीतल पदार्थों को मिश्रित कर सिक्त कर दिया है—ऐसा ही अनुभव इस समय मुझे हो रहा है॥१२॥

मालती—अरे! लवंगिका ने मालती को धोखा दे दिया है।

माधव—अरे अपने ही चित्त की वेदना को जानने वाली! दूसरे की वेदना को न समझने वाली! यह तो तुम मुझे उलाहना दे रही हो।

क्या मैंने भी ऐसे दिनों को नहीं बिताया है, जो प्रचण्ड शारीरिक सन्ताप देने वाले महाज्वर से युक्त थे, मन ही मन आपके समागम-सुख की कल्पना से वेदना के भार को कुछ कम करने वाले एवं हमारे ऊपर आपका सहज अनुराग है—इस धारणा से हमारे जीवन की रक्षा करने वाले थे॥१३॥

लवंगिका—सखी! उलाहने योग्य विषय को उद्देश्य बना कर इन्होंने तुम्हें उचित ही उलाहना दिया है।

कलहंस—अहो! विधाता का विधान भी कितना सरस और रमणीय होता है।

मकरन्दः—महाभागे, एवमेतत्।

> त्वं वत्सलेति कथमप्यवलम्बितात्मा
> सत्यं जनोऽयमियतो दिवसाननैषीत्।
> आबद्धकङ्कणकरप्रणयप्रसाद-
> मासाद्य नन्दतु, चिराय फलन्तु कामाः॥१४॥

लवङ्गिका—महानुभाव, हृदयेऽप्यनिरुद्धस्वयंग्राहसाहसोऽयं जनः किमिदानीं करग्रहणे विचारयति। (महाणुहाव, हिअए वि अप्पडिहदसअंगाहसाहसो अअं जणो किं दाणिं करग्गहणे विआरेदि।)

मालती—हा धिक् कन्यकाजनविरुद्धं किमप्युपन्यस्यति। (हद्धि, कण्णआजणविरुद्धं किं वि उवण्णसदि)

कामन्दकी—(प्रविश्य) पुत्रि कातरे किमेतत्।

(मालती कम्पमाना कामन्दकीमालिङ्गति)

कामन्दकी—(तस्याश्चिबुकमुन्नमय्य) वत्से।

> पुरश्चक्षूरागस्तदनु मनसोऽनन्यपरता,
> तनुग्लानिर्यस्य त्वयि समभवद्यस्य च तव।

मकरन्द—महाभागे! यह ऐसा है।

तुम इनके प्रति अनुरक्त रही हो—इस कारण से किसी प्रकार इन्होंने अपने जीवन को धारण करते हुए इतने दिनों को व्यतीत किया—यह बात सत्य है। कंकण से सुशोभित आपके पाणि का प्रणय-प्रसाद पा कर यह आनन्दित हो—इस प्रकार चिरकाल के अनन्तर हमारी अभिलाषाएं पूरी हों॥१४॥

लवंगिका—महानुभाव! इसके पहिले अपने हृदय में स्वयं ग्रहण करने के साहस को जो नहीं रोक सकी वह (मालती) व्यक्ति इस अवसर पर पाणिग्रहण के लिए क्या विचार करेगी।

मालती—हाय धिक्कार है। कुमारी कन्याओं के प्रतिकूल यह क्या कर रही है।

कामन्दकी—(प्रवेश करके) बेटी! डरपोक! यह क्या है?

(मालती कांपती हुई कामन्दकी को भेंटती है।)

कामन्दकी—(उसकी ढोढी को ऊपर उठाते हुए) बेटी!

कामन्दकी—(उसकी ढोढी को ऊपर उठाते हुए) बेटी! तुम्हारे लिए जिसकी और जिसके लिए तुम्हारी नेत्रों के परस्पर देखते ही प्रीति हुई थी, उसके

युवा सोऽयं प्रेयानिह, सुवदने ! मुञ्च जडतां
विधातुर्वैदग्ध्यं विलसतु, सकामोऽस्तु मदनः ॥१५॥

लवङ्गिका—भगवति, कृष्णचतुर्दशीरजनीश्मशानसंचारनिर्व्यूढविषमव्यवसायनिष्ठापितप्रचण्डपाषण्डदोर्दण्डसाहसः साहसिकः खल्वेषः। अतः प्रियसख्युत्कम्पिता। (भअवदि, किसणचउद्दसीरअणिमसाणसंचारणिव्वूढविसमववसाअणिट्ठाविदपचण्डपाखण्डदोद्दण्डसाहसो साहसिओ क्खु एसो। अदो पिअसही उक्कम्पिदा)

कामन्दकी—लवङ्गिके, स्थाने खल्वनुरागोपकारयोर्गरीयसोरुपन्यासः।

मालती—हा तात हा अम्ब ! (हा ताद, हा अम्ब)

कामन्दकी—वत्स माधव !

माधवः—आज्ञापय।

कामन्दकी—इयमशेषसामन्तमस्तकोत्तंसपरागरञ्जितचरणाङ्गुलेरमात्यभूरिवसोरेकापत्यरत्नं मालती, भगवता सदृशसंयोगरसिकेन वेधसा मन्मथेन मया च तुभ्यं दीयते। (इति बाष्पं विमुञ्चति)

बाद मन मे एकाग्रता हुई थी और उसके पश्चात् शरीर मे शिथिलता आयी थी, तुम्हारा वह युवा प्रियतम यही है। हे सुन्दरी ! अपनी जड़ता का त्याग करो। विधाता की रचनाचातुरी सुफल हो और कामदेव की अभिलाषा पूरी हो ॥१५॥

लवंगिका—भगवती ! कृष्णपक्ष की अंधकार भरी चतुर्दशी की रात्रि में श्मशान भूमि में जा कर (नरमांस विक्रय जैसा) भयकर कार्य करने वाले एवं पाखण्डी अघोरघण्ट के दुःसाहस को (सदा के लिए) समाप्त करने वाले यह माधव जी अतीव साहसी पुरुष हैं। इसी कारण से हमारी प्यारी सखी काँप उठी हैं।

कामन्दकी—लवंगिके ! तुमने उचित अवसर पर गभीर अनुराग एवं गम्भीर उपकार का उल्लेख किया है।

मालती—हाय तात ! हाय मा।

कामन्दकी—बेटा माधव !

माधव—आज्ञा करें।

कामन्दकी—सम्पूर्ण सामन्त नृपतिगण अपने मस्तक पर धारण करने वाले पुष्पों की धूल (मकरन्द) द्वारा जिसके चरणों की अगुलियों को रजित करते हैं, उन्ही अमात्य भूरिवसु की एकमात्र श्रेष्ठ सन्तान रत्न मालती को योग्य के साथ योग्य को मिलाने के अनुरागी भगवान ब्रह्मा, कामदेव और मैं तुम्हे अर्पित कर रहे हैं। (ऐसा कह कर आँसू बहाती है।)

मकरन्दः—फलितं हि तर्हि भगवतीपादप्रसादेन।

माधवः—तत्किमिदमनवरतबाष्पायितमाननं भगवत्याः।

कामन्दकी—(अंशुकाञ्चलेन नेत्रे परिमृज्य) वत्स, किमपि कल्याणं वक्तुकामास्मि।

माधवः—ततः किम्।

मकरन्दः—विज्ञापयामि।

माधवः—आज्ञापय।

कामन्दकी—

परिणतिरमणीयाः प्रीतयस्त्वद्विधाना-
महमपि तव मान्या हेतुभिस्तैश्च तैश्च।
तदिह सुवदनायां तात! मत्तः परस्मा-
त्परिचयकरणायाः सर्वथा मा विरंसीः॥१६॥

(इति पादयोः पतितुमिच्छति)

माधवः—(निवारयन्) अहो, वात्सल्यादतिक्रामति प्रसङ्गः।

मकरन्द—भगवती के चरणों का अनुग्रह आज फलदायी सिद्ध हुआ।

माधव—तब फिर भगवती का मुख क्यों इस प्रकार आंसुओं से भीगा हुआ है?

कामन्दकी—(अपने चीर के आंचल से दोनों आंखों को पोंछ कर) बेटा! मैं तुम्हें कुछ कल्याण की बातें बताना चाहती हूँ।

माधव—वह क्या?

कामन्दकी—बताती हूँ।

माधव—आज्ञा करें।

कामन्दकी—तुम्हारे जैसे लोगों की प्रीति का परिणाम सुन्दर होता है। मैं भी अनेक कारणों से तुम्हारी मान्या हूँ। अतः हे तात! मेरे परोक्ष में भी इस सुमुखी (मालती) के प्रति तुम प्रगाढ़ स्नेह युक्त दया की भावना से कभी विरत मत होना॥१६॥

(ऐसा कह कर माधव के चरणों में गिरना चाहती है।)

माधव—(रोकते हुए) अरे! अतीव स्नेह की भावना से अभिभूत हो कर औचित्य का उल्लंघन कर रही हैं।

मकरन्दः—भगवति।

श्लाध्यान्वयेति नयनोत्सवकारिणीति
निर्व्यूढसौहृदरसेति गुणोज्ज्वलेति।
एकैकमेव हि वशीकरणं गरीयो
युष्माकमेवमियमित्यथ किं ब्रवीमि॥१७॥

कामन्दकी—वत्स! माधव!

माधवः—आज्ञापय।

कामन्दकी—स्वीक्रियतामियम्।

माधवः—स्वीकरोमि।

कामन्दकी—वत्स! माधव! वत्से! मालति!

माधवः—आज्ञापय।

मालती—आज्ञापयतु भगवती। (आणवेदु भअवदी)

कामन्दकी—

प्रेयो मित्रं, बन्धुता वा समग्रा सर्वे कामाः, शेवधिर्जीवितं वा।
स्त्रीणां भर्ता, धर्मदाराश्च पुंसामित्यन्योन्यं वत्सयोर्ज्ञातमस्तु॥१८॥

मकरन्द—भगवती! यह मालती उच्चकुलोत्पन्ना है, नेत्रों को परमानन्द देने वाली है। प्रेम-रस का निर्वाहक करने वाली है, सद्‌गुणों से समलङ्कृता है—इस प्रकार इनका एक-एक गुण ही इन्हें (माधव को) गंभीर रूप से अपने वश में करने का साधनभूत है। और उसके बाद यह आपकी स्नेहपात्र है अतः मैं आपके इस प्रस्ताव के बारे में क्या कहूँ? ॥१७॥

कामन्दकी—वत्स माधव!

माधव—आज्ञा करें।

कामन्दकी—इस (मालती) को स्वीकार करो।

माधव—स्वीकार करता हूँ।

कामन्दकी—वत्स माधव। बेटी मालती।

माधव—आज्ञा करें।

मालती—भगवती आज्ञा दें।

कामन्दकी—स्त्रियों के लिए उनका पति, और पतिजनों के लिए उनकी धर्मपत्नियाँ प्रियतम, प्रिय मित्र, सम्पूर्ण बन्धु-समूह, सभी प्रकार की अभिलाषाओं के विषय, विविध संपदाओं की निधि एवं जीवन स्वरूप हैं—यह तुम दोनों बच्चों को विदित होना चाहिए॥१८॥

मकरन्दः—अथ किम्।

लवङ्गिका—यथा यूयमाज्ञापयथ। (जह तुम्हे आणवेत्थ)

कामन्दकी—वत्स मकरन्द, अनेनैव वैवाहिकेन मालतीनेपथ्येनापवारितः प्रवर्तस्व परिणयायात्मनः। (इति पटलकमर्पयति)

मकरन्दः—यदाज्ञापयसि यावदितश्चित्रजवनिकामन्तर्धाय नेपथ्यं धारयामि। (तथा करोति)

माधवः—भगवति गुरुमपि बह्वनर्थकमतिसंकटमेतद्वयस्यस्य।

कामन्दकी—कस्त्वमस्यां चिन्तायाम्?

माधवः—एवं भगवत्येव जानाति।

मकरन्दः—(प्रविश्य विहसन्) एषोऽस्मि मालती संवृत्तः।

(सर्वे सविस्मयं सकौतुकं पश्यन्ति)

माधवः—(गाढं मकरन्दं परिष्वज्य) भगवति, कृतपुण्य एव नन्दनः। यतः प्रियवयस्यमीदृशं मनसा मुहूर्तमपि कामयिष्यति।

मकरन्द—और क्या (आज्ञा है?)

लवंगिका—आप जैसी आज्ञा करें।

कामन्दकी—वत्स मकरन्द! मालती के विवाह अवसर के लिए तैयार इन्ही वस्त्राभूषणो को पहिन कर तुम भी दूसरो से अविदित रहते हुए अपने विवाह के लिए तैयार हो जाओ।

(ऐसा कह कर मकरन्द को मालती के वस्त्राभूषणो की पिटारी देती है।)

मकरन्द—आपकी जैसी आज्ञा। मैं इसी रगबिरगे पर्दे के पीछे छिप कर अपनी वेश-भूषा धारण करता हूँ। (वैसा करता है।)

माधव—भगवती! हमारे मित्र के लिए यह उपक्रम सुगम होते हुए भी बड़े अनर्थों एवं संकटो से युक्त है।

कामन्दकी—इसकी चिन्ता तुम्हे क्यो है?

माधव—यदि ऐसा है तो फिर भगवती जानें।

मकरन्द—(*प्रवेश कर के हँसते हुए*) *यह मैं मालती बन गया हूँ।*

(सभी लोग आश्चर्य और कौतूहल मे देखते हैं।)

माधव—(मकरन्द का गाढ आलिंगन कर) भगवती! नन्दन ने पुण्यकर्म ही किया है। जो इस प्रकार (मालती वेशधारी) अपने प्रिय मित्र को कुछ क्षणों के लिए ही सही मन से कामना करेगा।

कामन्दकी—वत्सौ मालतीमाधवौ, इतो निर्गत्य वृक्षगहनेन गम्यतामुद्वाह-मङ्गलार्थम्। अस्ति तत्र दीर्घिकायाः पश्चादुद्यानवाटः। सुविहितं तत्रैव वैवाहिक-द्रव्यजातमवलोकितया भूयश्च।

गाढोत्कण्ठकठोरकेरलवधूगण्डाच्छपाण्डुच्छदै-
स्ताम्बूलीपटलैः पिनद्धफलितव्यानम्रपूगद्रुमाः।

अतस्तत्रैव मदयन्तिकामकरन्दयोर्विवादागमनं स्थातव्यम्।

माधवः—(सहर्षम्) कल्याणान्तरावतंसा कल्याणसंपदुपरिष्टाद्भवतु।

कलहंसः—दिष्ट्या इदमपि प्रियं नो भविष्यति। (दिट्ठिआ इदं वि पिअं णो हुविस्सदि)

कामन्दकी—कथं सदेहो भवतः।

लवङ्गिका—श्रुतं प्रियसख्या। (सुदं पिअसहीए)

कामन्दकी—वत्स मालती एवं माधव! तुम लोग इस स्थान से निकल कर विवाह के मंगलाचरण के लिए वृक्षों से बहुल मार्ग द्वारा जाओ। वहाँ पर बावली के पीछे जो वाटिका है वहीं अवलोकिता ने विवाह के लिए उपयोगी सुन्दर वस्तुओं का आयोजन किया है। और भी,

प्रगाढ उत्कण्ठायुक्त प्रौढा केरल देशीय रमणियों के कपोलों के समान निर्मल श्वेत-पीत पत्रों से युक्त, नागवल्लरी (ताम्बूललता) के समूहों से वेष्टित, फल युक्त झुके हुए सुपारी के वृक्षों से युक्त, कक्कोली फल का भक्षण करने वाले मनोहर पक्षियों के शब्दों से गुंजायमान एवं वायु से संचालित बीजपूरों की बाड़ से सुरक्षित उस वाटिका प्रदेश के भूमिभाग तुम दोनों के लिए अतीव प्रीतिकारी बनें॥१९॥

इसलिए जब तक मदयन्तिका और मकरन्द का आगमन वहाँ न हो जाय तब तक तुम दोनों को रहना चाहिए।

माधव—(सहर्ष) हमारी यह कल्याणी समृद्धि कालान्तर में दूसरे कल्याणों का अलंकरण बने।

कलहंस—क्या सौभाग्य से यह भी (मदयन्तिका और मकरन्द का विवाह) हम लोगों का अभीष्ट सिद्ध होगा।

कामन्दकी—आपको सन्देह क्यों है?

लवंगिका—क्या प्रियसखी ने सुना?

कामन्दकी—वत्स मकरन्द, भद्रे लवङ्गिके, इतः प्रतिष्ठामहे।

मालती—सखि, त्वयापि गन्तव्यम्। (सहि, तुए वि गन्तव्वं)

लवङ्गिका—(विहस्य) साम्प्रतं खलु वयमत्रापसरामः। (इति निष्क्रान्ताः कामन्दकीलवङ्गिकामकरन्दाः) (संपदं वखु अम्हे एत्थ ओसरम्ह)

माधवः—अयमिदानीमहम्।

आमूलकण्टकितकोमलबाहुनालमार्द्राङ्गुलीदलमनङ्गनिदाघतप्तः।
अस्याः करेण करमाकलयामि कान्तमारक्तपङ्कजमिव द्विरदः सरस्याः॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे षष्ठोऽङ्कः

कामन्दकी—वत्स मकरन्द! भद्रे लवंगिका! यहाँ से प्रस्थान करें।

मालती—सखी! क्या तुम्हें भी जाना होगा।

लवंगिका—(हंस कर) इस अवसर पर तो हम लोग जा रहे हैं।

(ऐसा कह कर कामन्दकी, लवंगिका और मकरन्द जाते है।)

माधव—इस समय यह मैं।

जिसका नालदण्ड मूल भाग से कण्टकित होने पर भी कोमल है, जिसके पत्र-समूह जल से शीतल है, ऐसे मनोहर, रक्तिम वर्ण के सरोवर के कमल को अपने शुण्डा दण्ड में जिस प्रकार ग्रीष्म की ऊष्मा से सन्तप्त गजराज ग्रहण करता है, उसी प्रकार कामदेव की पीड़ा से व्यथित मैं अपने हाथ से मूलपर्यन्त रोमाचयुक्त, कोमल मृणाल दण्ड की भांति मनोहर, स्वेद जल से भीगी हुई अगुलियों से सुशोभित मालती के सुन्दर रक्तिम हाथ को ग्रहण करता हूँ॥२०॥

(सभी लोग बाहर जाते है।)

श्री महाकवि भवभूति रचित मालतीमाधव नाटक में
मालती-उपहार नामक छठा अंक समाप्त

सप्तमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति बुद्धरक्षिता)

बुद्धरक्षिता—अहो, सुश्लिष्टमालतीनेपथ्यलक्ष्मीविप्रलब्धनन्दनकरग्रहोऽमात्यभूरिवसुमन्दिरे भगवत्याः सविधानेन क्षेमेण गोपायितोऽद्य मकरन्दः। अद्य वयं नन्दनावासमुपगताः। अतो भगवती नन्दनमापृच्छ्य निजावसथं गता। अयं च नववधूगृहप्रवेशविरचिताकालकौमुदीमहोत्सवप्रमत्तपर्याकुलाशेषपरिजनः प्रदोषोऽनुकूलयिष्यत्यद्य नो व्यवसितम्। सांप्रतं च त्वरमाणकामः कामयितुं सपादपतनमभ्यर्थ्य पुनर्बलात्कारेणाभिद्रवन्मकरन्देन निष्ठुरं प्रतिहतो जामाता। स च वैलक्ष्यरोषावेशस्खलदक्षरोऽवरदितनयनप्रस्फुरद्वदनो 'न मे सांप्रतमनया कौमारबन्धक्या प्रयोजनमि'ति सशपथं प्रतिज्ञां कृत्वा वासभवनान्निर्गतः। तस्मादनेन प्रसङ्गेन मदयन्तिकामानीय मकरन्देन संयोजयिष्यामि। (इति निष्क्रान्ताः) अम्हहे, सुसिलिट्ठमालदीणेवच्छलच्छीविप्पलद्धणन्दकरग्गहो अमच्चभूरिवसुमन्दिरे भअवदीए संविहाणेण खेमेण गोवाइदो अज्ज

सातवां अंक

(तदनन्तर बुद्धरक्षिता प्रवेश करती है।)

बुद्धरक्षिता—अरे! मालती का वस्त्राभूषण धारण कर उसकी सुन्दरता से ठगे गये नन्दन ने अमात्य भूरिवसु के भवन में आज जिसका पाणिग्रहण किया है, वह मकरन्द जी भगवती कामन्दकी के उद्योग से कुशलपूर्वक सुरक्षित हो चुके हैं। आज हम लोग नन्दन के भवन में आ गये हैं और भगवती कामन्दकी नन्दन से अनुज्ञा लेकर अपने आवास को चली गयी। और इधर नववधू के गृह-प्रवेश के उपलक्ष्य में आयोजित अकाल कौमुदी-महोत्सव के कारण सभी नौकर-चाकर असावधान और व्यस्तचित्त हो गये हैं, अतः यह रात्रि के आरम्भ (सन्ध्या) का समय आज हम लोगों के अभीष्ट मदयन्तिका (और मकरन्द) के विवाह के प्रयास के लिए अनुकूल सिद्ध होगा। इस समय काम की वेदना में विलम्ब को न सहन कर सकने वाले जामाता नन्दन (मालती रूप धारी मकरन्द के साथ) सहवास करने के लिए उसके चरणों पर गिर कर जब प्रार्थना करने लगे (किन्तु फिर भी मालती रूपधारी

मअरन्दो। अज्ज अम्हे णन्दणावासं उगवदाअदो भअवदो नन्दणं आपुच्छिअ णिआवसहं गआ। अअं अ णववहूवरप्पवेसजनिरदहासालकोमुदीमहूसवप्पसत्तदव्जाउलासेसपरिअणो पदोसो अगुऊलइस्सदि अज्ज णो प्पवसिदं। संपदं अ तुवरन्तकामो कामेदुं सपादपडणं अब्भत्थिअ पुणो बलामोडिअ अभिद्दवन्तो मअरन्देण णिट्ठुरं पडिहदो जामादा। सो अ मेल्लअरोसावेसतरलन्तअक्खरो ओहट्टणअणप्फुरन्तरअणो ण मे संपद इमाए कोमारवड्डईए पओअणं त्ति सासवहं पइण्णं कादूण य।सभवणादो णिग्गदो। ता एदेण पसङ्गेण मदअन्तिअं आणोअ मअरन्देण संओजइस्सं)

इति प्रवेशकः।

(ततः प्रविशति शय्यागतो मकरन्दो लवङ्गिका च)

मकरन्दः—लवङ्गिके, अपि नाम बुद्धरक्षितामशल्या भगवतीनीतिर्निर्वक्ष्यते।

लवङ्गिका—क संदेहो महाभागस्य? किं बहुना? यथैव मञ्जीरशब्दस्तथा जानामि तेन व्यपदेशेनानीता बुद्धरक्षितया मदयन्तिकेति। तदुत्तरीयापवारितः सुप्तलक्षणस्तिष्ठ। (को सदेहो महाभाअस्स। किं बहुणा। जह एसो मञ्जीरसद्दो तह

मकरन्द जब समागम के लिए सहमत नही हुए तो नन्दन) फिर बलपूर्वक समागम के लिए प्रवृत्त हो कर आक्रमण पर उतारू हो गया। उस समय मकरन्द ने नन्दन को बड़ी निष्ठुरता के साथ अपने चरण प्रहार से आहत कर दिया, जिससे अत्यन्त अप्रतिम एवं क्रोधावेश से विचलित होने के कारण नन्दन के मुख से वाक्य स्खलित होने लगे, नेत्रों से आसू गिरने लगा और होठ फड़कने लगे। उसी अवस्था मे यह अब मुझे इस कुमारी अवस्था मे वेश्या की भाति आचरण करने वाली चरित्रहीना से कोई प्रयोजन नही रह गया है—इस प्रकार की शपथपूर्ण प्रतिज्ञा कर अपने निवास-भवन से बाहर निकल पड़ा। अतः इसी प्रसग से मदयन्तिका को ले कर मकरन्द के साथ उसका संयोग कराऊगी। (ऐसा कह कर बाहर जाती है।)

प्रवेशक समाप्त

(तदनन्तर शय्या पर आरूढ मालती (वेशधारी मकरन्द) के साथ लवगिका प्रवेश करती है।)

मकरन्द—लवगिके! क्या बुद्धरक्षिता मे भगवती कामन्दकी ने जिस (कार्य सिद्धि की सफलता दिलाने वाली) नीति को स्थिर किया है, वह सफल हो सकेगी।

लवंगिका—महाभाग को इस विषय मे सन्देह ही क्यों है? बहुत कहने की क्या जरूरत है? जिस तरह यह मजरी (पायल) की झनकार सुनाई पड़ रही है उससे मालूम पड रहा है कि बुद्धरक्षिता किसी बहाने से मदयन्तिका को

जाणामि देणववदेसेण आगोदा वुद्धरक्खिदाए मदअन्तिएत्ति। ता उत्तरीआववारिदो सुत्तलक्खणो चिट्ठ)

(मकरन्दस्तथा करोति)

(ततः प्रविशति मदयन्तिका बुद्धरक्षिता च)

मदयन्तिका—सखि, सत्यमेव परिकोपितो मम भ्राता मालत्या ?
(सहि, सच्च जेव्व परिकोविदो मे भादा मालदीए ?)

बुद्धरक्षिता—अथ किम्। (अह इं)

मदयन्तिका—अहो अत्याहितम्। तदेहि, वामशीलां मालती निर्भर्त्सयावः। (अहो अच्चाहिदं। ता एहि, वामसीलं मालदीं णिब्भच्छेम्ह)

(इति परिक्रामतः)

बुद्धरक्षिता—इदं वासभवनम्। (इदं वासभवणं)

(उभे प्रविशतः)

मदयन्तिका—सखि लवङ्गिके, ज्ञायते प्रसुप्ता ते प्रियसखीति। (सहि लवङ्गिए, जाणीअदि पसुत्ता दे पिअसही त्ति)

लवङ्गिका—सखि, मैना प्रतिबोधय। एपा चिरं दुर्मनायमानेदानीमेवेपन्मन्ये प्रसुप्तेति। अतः शनैरिहैव शयनार्धे उपविश। सहि, माणं पडिवोधेहि। एसा चिरं दुम्मणाअन्दी दाणिं जेव्व ईस मण्णे पसुत्तेति।

यहीं आ रही है। तो तुम अपनी चादर से मुख ढक कर निद्रित की तरह लेट जाओ।

(मकरन्द वैसा ही करता है।)

(तदनन्तर मदयन्तिका और बुद्धरक्षिता प्रवेश करती हैं।)

मदयन्तिका—सखी ! क्या सचमुच मालती ने मेरे भाई को क्रोधित कर दिया है ?

बुद्धरक्षिता—और क्या ?

मदयन्तिका—अरे ! यह तो गंभीर चिन्ता की बात है। अतः आओ, प्रतिकूल स्वभाववाली मालती को डाँट-फटकारें।

(ऐसा कहकर दोनों चलने का नाट्य करती हैं।)

बुद्धरक्षिता—यही (मालती का) आवास-कक्ष है।

मदयन्तिका—सखी लवंगिके! मालूम पड़ता है कि तुम्हारी प्यारी सखी सो गयी हैं ?

लवंगिका—सखी ! इन्हें मत जगाओ। यह बेचारी बड़ी देर तक अफसोस

अदो सणिअं इध जेब्ब सअणद्धम्मि उवविस)

मदयन्तिका—(तथा कृत्वा) दुर्मनायते कथमियं वामशीला। (दुम्मणाअदि कहं इअं वामसीला)

लवङ्गिका—कथं नाम नववधूविस्रम्भणोपायाभिज्ञं स्वहं विदग्धं मधुरभाषिण-मरोषणं ते भ्रातरं भर्तारमासाद्य न दुर्मनायिष्यते मे प्रियसखी। (कहं णाम णववहूविस्सम्भणोवाअजाणुअं सडहं विअड्ढं महुरभासिणं अरोसणं दे भादरं भत्तारं आसादिअ ण दुम्मणाइस्सदि मे पिअसही)

मदयन्तिका—पश्य बुद्धरक्षिते, विप्रतीपमुपालब्धाः स्मः। (पेक्ख बुद्धरक्खिदे, विप्पदीवं उवालद्धा म्ह)

बुद्धरक्षिता—विप्रतीपं न वा विप्रतीपम्। (विप्पदीवं ण वा विप्पदीवं)

मदयन्तिका—कथमिव। (कहं विअ)

बुद्धरक्षिता—यत्तावच्चरणपतितो भर्ता न बहुमानितः। अत्र लज्जादोषेणैष जनो नोपालम्भनीयः। यद्यपि प्रियसखि, अभिनववधूविरुद्धरभसोपक्रमस्खलन-वैलक्ष्यविच्छर्दितमहानुभावत्वस्य भ्रातुस्ते वाचागतं किमप्यप्रतिष्ठानम्। तेन

में रही, अभी थोडी देर से थोड़ा सोने लगी है। अतः धीरे से इस शय्या के आधे भाग में एक ओर बैठ जाओ।

मदयन्तिका—(वैसा ही करती हुई) यह कुटिल स्वभाववाली अब अफसोस क्यों कर रही है?

लवंगिका—तुम्हारे भाई नव वधू में विश्वास पैदा करनेवाले उपायों के विशेषज्ञ हैं, देखने में सुन्दर हैं, कलाशास्त्र में निपुण हैं, मृदुभाषी हैं, कभी क्रोध नहीं करने वाले हैं ? ऐसे सुयोग्य पति को पाकर मेरी प्रियसखी भला अफसोस क्यों करने लगी।

मदयन्तिका—बुद्धरक्षिते ! देखो। हमें उल्टी बातें सुनाकर दोषारोपण कर रही हो।

बुद्धरक्षिता—उल्टी बातें कर रही हूं या ये उल्टी बातें नहीं हैं।

मदयन्तिका—किस प्रकार?

बुद्धरक्षिता—पैरों पर गिरे हुए पति का जो अतीव सम्मान नहीं कर सकी तो इस प्रसंग में लज्जा दोष के कारण उसको दोष नहीं दिया जाना चाहिए।

यद्यपि हे प्रिय सखी ! नयी-नवेली वधू की इच्छा के विरुद्ध बलात् समागम करने के उपक्रम में मालती के पाद-प्रहार रूप व्यतिक्रम द्वारा असफल होकर

ज्ञायते कृतापराधा उपालम्भनीया वयमिति। (संस्कृतमाश्रित्य) किंच। 'कुसुमसधर्माणो हि योषितः सुकुमारोपक्रमाः। तास्त्वनधिगतविश्वासैः प्रसभमुपक्रम्यमाणाः संप्रयोगविद्वेषिण्यो भवन्ति।' एवं किल काममूत्रकारो मन्त्रयते। (जं दाव चलगरहिदो भत्ता ण बहुमाणिदो। एत्थ लज्जादोसेण एसो जणो ण उवालम्भणिज्जो जं वि पिअसहि, अहिणववहूविहड्डरहसोवक्कमक्खलणवेल्लवलविच्छडिदमहाणुहावत्तणस्स भट्ठुणो दे वाआमत्तं कि वि अप्पडिट्ठाणं। तेण जाणीअदि किआवराहा उवालम्भणिज्जा ह्योत्ति एवं किल कामसुत्तआरा मन्तेन्ति)

लवंगिका—गृहे गृहे पुरुषाः कुलकन्यका उद्वहन्ति। न च कोऽपि लज्जाप्रसाधनमनपराधमुग्धस्वभावं कुलकुमारीजनं प्रभवामीति वागनलेन प्रज्वलयति। एते खलु ते आमरणसंभ्रियमाणदुःसहपरगृहनिवासवैराग्यकारिणो हृदयशल्यनिक्षेपा महापरिभवाः। येषां कृते स्त्रीजन्मलाभं जुगुप्सन्ते बान्धवाः। (घरे घरे पुरिसा कुलकण्णकाओ उव्वहन्दि। ण अ को वि लज्जापसाहण अणवरद्धमुद्धसहावं कुलकुमारीजणं पहवामि त्ति वाआणलेण पज्जालेदि। एदे क्खु दे आमलणसंभरिज्जन्तदूसहपरघरणिवासवेरग्गकारिणो हिअअसल्लणिक्खेवा महापरिहवा। जाणं किदे इत्थिआजम्मलाहं जुउच्छन्दि बान्धवा)

धैर्य छोडनेवाले आप के भाई ने जो अनिवर्चनीय रूप से मर्यादा का उल्लंघन किया, उससे मालूम होता है कि हम लोगों का ही अपराध है और हमें ही दोष देना चाहिए। (संस्कृत भाषा का आश्रय लेकर) स्त्रियाँ कुसुम के समान कोमल प्रकृति वाली होती हैं अतः प्रथम समागम के आरम्भ में उनके साथ उपायों द्वारा ही व्यवहार करना चाहिए। विश्वास प्राप्त करने वाले पुरुषों द्वारा प्रथम व्यवहार में बलात् समागम का उपक्रम करने से वे समागम सुख के प्रति विद्वेष करने लग जाती हैं। ऐसा कामसूत्रकार (महर्षि वात्स्यायन) का कथन है।

लवंगिका—घर-घर में पुरुष गण अपनी कुल कन्याओं का विवाह करते हैं किन्तु कोई भी लज्जा रूप भूषण से अलंकृत, निरपराध एवं सुन्दर स्वभाववाली कुल कन्या को मैं उसका सब कुछ कर सकता हूँ—ऐसा मानकर वचनरूपी अग्नि से सन्तापित नहीं करता। यह गम्भीर तिरस्कार छाती के ऊपर कील गाड़ने के समान मृत्यु पर्यन्त स्मरण करने पर कसकता रहता है और पति के घर में निवास करने की अनिच्छा पैदा करनेवाला है, इसी के कारण स्त्री के पिता आदि बान्धवगण स्त्री (कन्या) के जन्म लाभ (कन्या की उत्पत्ति) की निन्दा करते हैं।

मदयन्तिका—बुद्धरक्षिते, अतिम्लाना प्रियसखी लवङ्गिका। अतिमहान्कोऽपि मे भ्राता वागपराधः कृतः। (बुद्धरक्खिदे, अदिदूम्मिदा पिअसही लवङ्गिआ। अतिमहान्तो को वि मे भादुणा वाअवराहो किदो)

बुद्धरक्षिता—अथ किम्। श्रुतमेवास्माभिर्न मे साम्प्रतमनया कौमारवर्धक्या प्रयोजनमि'ति सशपथं कृत्वा वासभवनान्निर्गतः। (अह इं। सुदं जेव्व अम्हेहिं ण मे सपदं इमाए कोमारचइडईए पओअणं त्ति ससपहं पइण्णं काऊणं वासभवणादो णिग्गादो)

मदयन्तिका—(कर्णौ पिधाय) अहो! अतिप्रम। अहो! प्रमादः। सखि लवङ्गिके, असमर्थास्मि ते मुख साम्प्रतं द्रष्टुम्। तथापि प्रभवामीति किंचिन्मन्त्रयिष्ये। (अम्हहे अदिक्कमो। अहो पमादो। सहि लवङ्गिए, असमत्थम्हि दे मुहं संपदं दट्ठुं। तह वि पहवामि त्ति किं वि मन्तइस्सं)

लवङ्गिका—स्वाधीनस्तेऽयं जनः। (साहीणो दे अअं जणो)

मदयन्तिका—तिष्ठतु तावन्मम भ्रातुर्दुःशीलताप्रतिष्ठानं च। युष्माभिरपीदृशोऽप्येष साम्प्रतं यथाचित्तमनुवर्तनीयो येन भर्तैव इति। यूयमस्यानभिजाताक्षराधिक्षेपोपालम्भस्य यन्मूलं तत्र जानीथ। (चिट्ठदु दाव मह भादुणो दुस्सीलदा अप्पडिट्ठाणं अ। तुम्हेहिं वि ईदिसो वि एसो संपदं अहचित्तं अणुवट्टणीओ

मदयन्तिका—बुद्धरक्षिता! हमारी प्रियसखी लवंगिका बहुत मुरझाई हुई है। क्या मेरे भाई ने कुछ कठोर बात करने का अपराध किया है।

बुद्धरक्षिता—और क्या? मैंने भी सुना है कि—कौमार्य अवस्था में ही (वेश्याओं की भांति) चरित्रहीन इस (मालती) से अब मेरा कोई प्रयोजन नहीं है—ऐसी शपथपूर्वक प्रतिज्ञा करके वह निवास-कक्ष से बाहर निकल आये हैं।

मदयन्तिका—(दोनों कानों को बंद करके) अरे! यह तो (उन्होंने) मर्यादा का उल्लंघन किया है। अरे! यह तो बड़ी असावधानी की है। सखी लवंगिका! मैं तो अब तुम्हारा मुख देखने में भी असमर्थ हो गयी हूँ। फिर भी मैं इस मामले में कुछ कर सकूंगी—ऐसा मानकर कुछ परामर्श देना चाहती हूँ।

लवंगिका—मैं तो तुम्हारे अधीन ही हूँ।

मदयन्तिका—मेरे भाई की दुःशीलता एवं अप्रतिष्ठाजनक बातों को रहने दो। (उन पर ध्यान मत दो) ऐसा (दुःशील एवं मर्यादालंघन करने वाला) होने पर भी तुम लोगों को उनकी चित्तवृत्ति का अनुसरण तो करना ही चाहिए,

जेण भत्ता एसो त्ति। तुम्हे इमस्स अणहिआअअस्सर।हिक्खेवोवालम्भस्स जं मूलं तं ण जाणह)

लवङ्गिका—कथं वयमसज्जानीमः। (कहं अम्हे असन्तं जाणोमो)

मदयन्तिका—यदिदानीं तस्मिन्महानुभावे माधवे किमपि किल मालत्या वाङ्मात्रमासीत्स एष सर्वलोकस्यातिभूमिं गतः प्रवादः। तत्खल्वेतद्विजृम्भते। तत्प्रियसखि, यथैष भर्तुरुपेक्षाभिनिवेशो निरवशेषो हृदयादुद्ध्रियते तथा कुरु। अन्यथा महान्प्रमाद इति ज्ञातं भवतु। निष्कम्पदारुणासु कुलकन्यकासु दूनयति हृदयं मनुष्याणामीदृशाद्दुरभिषङ्गादिति जानय। मा भण मदयन्तिकया कथितमिति। (जं दाणिं तस्सिं महाणुहावे माहवे किं वि किल मालदीए वाआमेत्तं आसी सो एसो सव्वलोअस्स अदिभूमिं गदो पवादो। तं क्खु एवं विअम्भदि। ता पिअसहि, जह एसो भत्तुणो उवेक्खाहिणिवेसो णिरवसेसो हिअआदो उद्धरिअदि तह करेहि। अण्णहा महन्तो पमादो त्ति जाणीदं होदु। णिक्कम्पदारुणासु कुलकण्णकासु दूनावेदि हिअअं माणुसाणं ईरिसादो दुरहिसंगादो त्ति जाणह। मा भण मदअन्तिआए कहिदं त्ति)

लवङ्गिका—अयि असंबद्धलोकप्रवादमोहिते, अपेहि। न त्वया सह मन्त्रयिष्ये। (अइ असंबद्धलोअप्पवादमोहिदे, अवेहि। ण तुए सह मन्तइस्सं)

क्योंकि यह पति हैं। इस प्रकार उनके बयोमनीय बातों द्वारा दोषारोपण करने का जो (मूल) कारण है, उसे तुम लोग नहीं जानती हो।

लवंगिका—हम लोग उस छिपे हुए कारण को जान ही कैसे सकती हैं।

मदयन्तिका—इस समय उन महानुभाव माधव में मालती का जो वाचिक प्रेम सुना जाता है, वही प्रवाद के रूप में सभी लोगों के बीच खूब फैल गया है। वही उनके मुख से इस प्रकार प्रकट हुआ है। इसलिए हे प्रियसखी! मालती के हृदय से अपने पति की उपेक्षा का क्रोध जिस प्रकार निकल कर समाप्त हो जाय वैसा करो नहीं तो बड़ा ही अनर्थ हो जायगा—इसे समझ लो। पति की अनुकम्पा अथवा सहानुभूति न प्राप्त कर निश्चेष्ट और क्रूर प्रकृति की कुल-कन्याओं में अनपेक्षित आचरण इस प्रकार के दोषपूर्ण परपुरुषानुराग के कारण मनुष्यों के हृदय को पीड़ित करता है—इसे जान लें। मदयन्तिका ने ऐसा कहा है—यह मालती को मत बतलाना।

लवंगिका—अरी असंगत लोकापवाद से मोहित होने वाली! तुम यहाँ से चली जाओ। मैं तुम्हारे साथ कोई बातचीत नहीं करना चाहती।

मदयन्तिका—सखि, प्रसीद। अथवा न यूयं स्फुट भणितास्तिष्ठथ। किंच वयं सत्यमेव माधवैकमयजीवितां मालती जानीमः। केन वा कठोरकेतकीगर्भविभ्रमावयवदौर्बल्यनिर्वतितसुन्दरत्वविशेषं माधवस्वहस्तनिर्मितबकुलावलीविरचितकण्ठावलम्बनमात्रसजीवनं मालत्या माधवस्य च प्रभातचन्द्रमण्डलापाण्डुरपरिक्षामरणीयदर्शनं न विभावितं शरीरम्। किंच तस्मिन्दिवसे कुसुमाकरोद्यानपर्यन्तरथ्यामुखसमागमे सविभ्रमोल्लसितकौतूहलोत्फुल्लपरिसरोद्वेल्लमानसविलासमसृणस्निग्धसंचरणचारतारकाविजृम्भमाणानङ्गशृङ्गाराचार्यसर्वागमोपदेशनिर्मितवैदग्ध्यमुग्धमनोहरा मया न निरूपिता एतयोर्दृष्टिसंभेदाः। किंच मम भ्रातृदानिवृत्तान्तं श्रुत्वा तत्क्षणोद्वृत्तगम्भीरोद्वेगव्यतिकरान्धकारितम्लायमानदेहशोभयोरुद्दर्तमानमूलबन्धनमिव न लक्षितं हृदयम्। किंच मयैतदपर विस्मृतम्। (सहि, पसीद। अहवा ण तुम्हे फुडं भणिदाओ चिट्ठह। किअ अम्हे सच्चं माहवेक्कमअजीविदं मालदिं जाणीमो। केण वा कठोरकेअईगब्भविब्भमावअवदोब्बल्लणिव्वट्टिदसुन्दरत्तणविसेसं माहवसहत्थणिम्माविदबउलावलीविरइदकण्ठावलम्बणमेत्तसंजीवणं मालदीए माहवस्स अ पहादचन्दमण्डलापाण्डुरपरिक्खामरमणिज्जदंसणं ण विभाविदं सरीरं। किअ तस्सि दिअसे कुसुमाअरुज्जाणपेरन्तरच्छा-

---

मदयन्तिका—सखी, प्रसन्न हो। मैं ने तुमसे सब बातें साफ-साफ नहीं बतायी हैं। रुको। हम लोग तो सचमुच मालती को एकमात्र माधवमय जीवन वाली जानती हैं। कौन व्यक्ति नहीं जानता कि, पूर्ण विकसित केतकी के पुष्प के मध्यवर्ती भाग की भांति शुक्ल वर्ण वाले मालती के हाथ-पैर आदि नितान्त दुर्बल हो गये हैं, जिससे उसके शरीर की सुन्दरता और भी बढ़ गयी है। माधव ने अपने ही हाथों से जिस मौलसिरी की माला की रचना की थी, उस माला को ही मालती अपने कण्ठ में धारण कर अपने जीवन की रक्षा कर सकी है। और माधव का शरीर भी प्रभातकालीन चन्द्रमा की भांति किंचित् पीला एवं श्वेत हो गया है। तथा अतीव दुबला होने के कारण सुन्दर दिखाई पड़ रहा है—ऐसा किसने नहीं देखा है। और भी सुनो। उस दिन कुसुमाकर उद्यान के एक कोने में सड़क के अग्रभाग में जब दोनों का सम्मिलन हुआ और उनके नेत्र एक दूसरे से मिले तो क्या मैंने नहीं देखा था कि उस क्षण नीले कमल के समान उनके युगल नेत्र विविध प्रकार के विहारों से मुक्त होकर बार बार मुंद जाते थे और फिर उत्कण्ठा के साथ उत्फुल्ल हो कर चचल बन जाते थे। बहुतेरे विलास एवं कोमल सचरण से मनोहर उनके नेत्रों की पुतलियाँ भी उनकी हृदयगत काम-भावना को प्रकट कर रही थी और वे ऐसी सुन्दर एवं मधुर प्रतीत हो रही थी मानो शृंगार रस के आचार्य कामदेव के

मुहसमाअमे सविब्भमुल्लसिदकोदूहलुप्फुल्लपरिसक्खेल्लमाणसविलासमसिण-सिणिद्धसंवरणवाहत्तारआविअम्भमाणणङ्ग सङ्गारआरिअसव्वाअमोपदेसणिम्मा-विदविअद्धमुद्धमणहारा। मए ण णिव्विदा इमाणं दिट्ठिसंभेदा। किअ मह भाडुणो दाणमुत्तन्दं सुणिअ तक्खणुव्वत्तगम्भीरुव्वेअव्वइअरप्पआरिअमिलाअन्त-देहसोहाणं उक्खण्डिअमाणमूलबन्धणं विअ ण लक्खिअं हिअअं। किं अ मए एवं अवरं विसुमरिदं)

लवङ्गिका—किमिदानीमपरम्। (किं दाणिं अवरं)

मदयन्तिका—यत्खलु मम जीवितप्रदायिनो महानुभावस्य चेतनाप्रति-लम्भप्रियनिवेदिकाया मालत्या भगवतीविदग्धवचनोपन्यासचोदितेन हृदयं जीवितं च माधवेन पारितोषिकत्वेन स्वयंग्राहे नियुक्तम्। अथ लवङ्गिके, त्वया खल्वेवं भणितं 'प्रतीष्टः खलु नः प्रियसख्या अयं प्रसाद' इति। (जं क्खु मह जीविदप्पदाइणो महाणुहावस्स चेदणापडिलम्भपिअणिवेदिआए मालदीए भअवदीविअद्धवअणोवण्णासचोदिदेण हिअअं जीविदं अ माहवेण पारि-दोसिअत्तणेण सअंगाहे णिउत्तं। अह लवङ्गिए, तुए क्खु एव्वं भणिदं 'पिडिच्छिदो क्खु णो पिअसहीए अअं पसादो' त्ति)

लवङ्गिका—सखि, कतमः पुनः स महानुभाव इति विस्मृतमिव मया। (सहि, कवमो उण सो महाणुहावो त्ति विसुमरिदं विअ मए)

सभी शास्त्रों के उपदेशों द्वारा रचे गये नैपुण्य को ही प्रकट रही हैं। और भी सुनो। हमारे भाई (नन्दन) की दानशीलता की चर्चा सुनकर मालती और माधव में तत्क्षण ही महान् विषाद का ऐसा आवेग उठ पड़ा, जिससे उनके मनोहर शरीर की कान्ति ऐसी मलिन पड़ गयी मानों अन्धकार से व्याप्त हो गयी हो और उनके हृदय का मूल बन्धन छिन्न भिन्न हो गया हो। और क्या मैं यह एक दूसरी बात भी भूल गयी हूँ।

लवंगिका—कौन सी अब दूसरी बात है (उसे भी सुना डालो।)

मदयन्तिका—जिन्होंने हमारे जीवन की रक्षा की उन महानुभाव (मकरन्द) के मूर्च्छा से होश में आने का प्रिय समाचार जब मालती ने सुनाया तब भगवती कामन्दकी के निपुण वचन द्वारा उत्प्रेरित होकर माधव ने अपना हृदय और जीवन, मालती की अपनी अभिलाषा के अनुसार, पारितोषिक के रूप में अर्पित कर दिया। और लवंगिके! (उस क्षण) तुमने (भी) यह कहा था कि हमारी प्रिय सखी ने इस अनुग्रह दान को स्वीकार कर लिया है।

लवंगिका—वे महानुभाव कौन है—यह तो मैं जैसे भूल सी गयी हूँ।

मदयन्तिका—सखि, स्मर। येन तस्मिन्दिवसे विकटदुष्टश्वापदविनिपातगोचरं गताऽशरणा सुलग्नसंनिहितेन पीवरभुजस्तम्भेन संभाविता निष्कारणबान्धवेन सकलभुवनैकसारनिजदेहोपहारसाहसं कृत्वा परिरक्षितास्मि। येन च दृढविकटमांसलोत्तानपरिणाहिवक्षःस्थललाञ्छनजर्जरितजपापीडधारिणा करुणाघनेन मत्कृतेऽपि निमज्जत्सकलनखनिकायवज्रपञ्जरप्रहारो मारितश्च स दुष्टश्वापदमहाराक्षस इति। (सहि, सुमर। जेण तस्सिं दिअसे विअडदुट्ठसावदविणिवादगोअरं गदा असरणा सुलग्गसण्णिहिदेण पीअरभुअत्थम्भेण संभाविदा णिक्कारणबन्धवेण सअलभुवणेक्कसारणिअदेहोवहारसाहसं कदुअ परिरक्खिदम्हि। जेण अ दिढविअडमंसुलुत्ताणपरिणाहिवच्छत्थललञ्छणजज्जरिदजवापीडधारिणा करुणाघणेण मम किदे वि णिमज्जन्तसअलणहणिआअवज्जपञ्जरप्पहारो मारिदो अ सो दुट्ठसावदमहारक्खसो त्ति)

लवङ्गिका—हुं, मकरन्दः। (हुं, मअरन्दो)

मदयन्तिका—(सानन्दम्) सखि, किं भणसि। (सहि, किं भणासि)

लवङ्गिका—ननु भणामि मकरन्द इति। (सस्मितं शरीरमस्याः स्पृशन्ती संस्कृतमाश्रित्य) (णं भणामि मअरन्दो त्ति)

मदयन्तिका—सखी! स्मरण करो! उस दिन मैं भयङ्कर विकट, दुष्ट हिंस्र जन्तु (सिंह) द्वारा आक्रान्त हो गयी थी। कोई भी हमारी रक्षा करनेवाला नहीं था। उस अवसर पर जिन्होंने समीप आकर और बिना किसी कारण के ही बान्धव बनकर, सम्पूर्ण संसार के एकमात्र सर्वस्व अपने मनोहर शरीर को उपहार रूप में समर्पित करने का साहस दिखाया और मेरी रक्षा की। कठोर, भयङ्कर, मांसल, बल-वीर्य सम्पन्न और सुविस्तृत वक्षःस्थल (छाती) पर बिखरे हुए गुड़हल के पुष्प की तरह बाघ का कठोर दन्ताघात, विकटाकार एवं पैने समग्र नखों का वज्रप्रहार सहन करते हुए जिन करुणाघन ने मेरे लिए अदम्य साहस के साथ उस पापी महाराक्षस को मार गिराया था (क्या तुम उन्हें नहीं जानती हो।)

लवंगिका—हूं, मकरन्द जी।

मदयन्तिका—(आनन्दपूर्वक) सखी! तुम क्या कह रही हो?

लवंगिका—अरी, मैं कह रही हूं कि वे मकरन्द जी।

यथं तथा नाम यदात्थ किं वदाम्ययं तु कस्माद्विकलः कथान्तरे।
कदम्बगोलाकृतिमाश्रितः कथं विशुद्धमुग्धः कुलकन्यकाजनः॥१॥

मदयन्तिका—(सलज्जम्) सखि, किं मामुपहससि। ननु भणामि। निर्वापयति तादृशस्यात्मनिरपेक्षव्यवसायिनः कृतान्तकवलीक्रियमाणजीवितबलात्कार-प्रत्यानयनगुरूपकारिणो जनस्य संकथामात्रस्य नामग्रहणं स्मरणं च। तथा च त्वयापि गाढगुरुनखप्रहारवेदनारम्भविह्वलितशरीरसमुल्लसत्स्वेदसलिलोद्गमो मोहमुकुलीक्रियमाणनेत्रनीलोत्पलयुगलो भूमिविगलितासियष्टिविष्टम्भधैर्य-प्रतिधारितशरीरभारः प्रत्यक्षीकृत एव मदयन्तिकामात्रविच्छर्दितमहार्घजीवितो महानुभाव इति। (स्वेदादीन्विकारान्नाटयति) (सहि, किं मं उवहससि। णं भणामि। णिव्वावेदि तारिसस्स अप्पणिरवेक्खववसाइणो किदन्तकवलिज्जन्त-जीविदबलामोडिअपच्चाणअणगुरुओवआरिणो जणस्स संकहामेत्तस्स णामग्गहणं सुमरणं अ। तह अ तुए वि गाढगुरुणहप्पहारवेअणारम्भविह्मलाविअसरीरसंगलिदसेअसलिलुग्गमो मोहमउलाअन्तणेत्तकन्दोट्टजुअलो भूमिविगलिदासिअट्ठि-विट्ठम्भधीरपडिधारिअसरीरभारो पच्चक्खीकिदो जेव्व मदअन्तिआमेत्त विच्छड्डिअमहग्घजीविदो महाणुहावो त्ति)

(मुसकराकर उसके शरीर का स्पर्श करती हुई संस्कृत भाषा में)

आप जैसा कह रही हैं, हम वैसी ही हैं (यह स्वीकार करती हूं।) किन्तु मैं क्या कहूं? निर्दोष एवं सरल स्वभाववाली यह कुलकन्या (तुम) बातचीत के बीच में सहसा क्यों विह्वल हो गयी और कदम्ब के पुष्प के समान (पुलकित) हो गयी॥१॥

मदयन्तिका—(लज्जापूर्वक) सखी! तुम मेरा उपहास क्यों कर रही हो? अरे मैं कहती हूं कि जो अपने जीवन की रक्षा की चिन्ता न करके मेरे जीवन की रक्षा करने में प्रवृत्त हो गये और यमराज जब मुझे अपना ग्रास बनाने के लिए तत्पर थे तो जिन्होंने बलपूर्वक उनसे छीन कर मेरे लिए अति गंभीर उपकार किया, बातचीत के बीच में ऐसे परोपकारी का नाम लेना एवं स्मरण करना अपने चित्त को शीतल करता है। और तुमने भी तो प्रत्यक्ष देखा था कि कठोर और विशाल बाघ के नखों के आघात से जो वेदना आरंभ हुई तो उनका शरीर विह्वल हो गया और उसमें पसीने की धारा बह निकली। फिर मूर्च्छा के आवेग में नीले कमल के समान उनके युगल नेत्र मुकुलित (बंद) हो गये और भूतल पर टिकी हुई तलवार रूपी छड़ी पर धीरे-धीरे शरीर का भार सम्हालते हुए वह किसी प्रकार खड़े रहे। इस प्रकार उस महान् पुरुष ने केवल मदयन्तिका के लिए अपने बहुमूल्य जीवन का

बुद्धरक्षिता—(शरीरमस्याः स्पृशन्ती) अस्वस्थशरीरे, किं वाचा। दर्शितं शरीरेण मकरन्दसमागमौत्सुक्यम्। (असत्थसरीरे, किं वाआ। दंसिदं सरीरेण मअरन्दसमाअमोच्छुक्कं)

मदयन्तिका—(सलज्जम्) सखि, अपेह्यपेहि। उद्भिन्नास्मि सहवासिन्या मालत्या। (सहि, अवेहि अवेहि। उब्भिण्णम्हि सहवासिणीए मालदीए)

लवङ्गिका—सखि मदयन्तिके, वयमपि ज्ञातव्यं जानीमः। तत्प्रसीद। विरम व्यपदेशात्। एहि। विस्रम्भगर्भकथाप्रबन्धरसं सुखं तिष्ठामः। (सहि मदअन्तिए, अम्हे वि जाणिदव्वं जाणीमो। ता पसीद। विरम व्ववदेसादो। एहि। विस्सम्भगब्भकहाप्पबन्धरसं सुहं चिट्ठम्ह)

बुद्धरक्षिता—सखि, शोभनं लवङ्गिकया भणितम्। (सहि, सोहणं लवङ्गिआए भणिदं)

मदयन्तिका—विधेयास्मि साम्प्रतं सखीनाम्। (विधेअम्हि संपदं सहीणं)

लवङ्गिका—यद्येवं तत्कथय कथं नु ते कालो गच्छतीति। (जइ एव्वं ता कहेहि कहं णु दे कालो गच्छदि त्ति)

मदयन्तिका—निशामय प्रियसखि, मम बुद्धरक्षितापक्षपातप्रत्ययेन प्रथममेव तस्मिञ्जनेऽविरलकौतूहलोत्कण्ठामनोहरं हृदयमासीत्। ततो विधिनियोजित-

---

परित्याग करने का निश्चय किया था। (ऐसा कहकर स्वेद और रोमाच आदि काम विकारों का नाट्य करती है।)

बुद्धरक्षिता—(उसके शरीर का स्पर्श करती हुई) हे अस्वस्थ शरीर वाली! बात करने से क्या लाभ है? तुमने अपने शरीर से मकरन्द के साथ समागम की उत्कण्ठा दिखलाई है।

मदयन्तिका—(लज्जापूर्वक) सखी! चलो भागो। हटो। मैं तो सह-वासिनी मालती के कारण रोमांचित हो गयी हूं।

लवंगिका—सखी मदयन्तिके! हम लोग भी कुछ जानने योग्य बातें जानते हैं। तो तुम अप्रसन्न न हो। छल-प्रपंच भरी बातें बंद करो। आओ। विश्वास-भरी बातचीत के सन्दर्भ का रसास्वादन करते हुए सुखपूर्वक बैठें।

बुद्धरक्षिता—सखी! लवंगिका ने ठीक ही कहा है।

मदयन्तिका—मैं अपनी दोनों सखियों के अधीन हूं।

लवंगिका—यदि ऐसा ही है तो बताओ कि तुम्हारा समय अब कैसे कटता है।

मदयन्तिका—प्रियसखी! सुनो न। उन महानुभाव के प्रति बुद्धरक्षिता के पक्षपात पूर्ण कथन में विश्वास करके मेरा प्रेम पहले ही अत्यधिक हो चुका था

चिरनिर्वृत्तदर्शना भूत्वा दुर्वारदारुणायासदुःखसंतापदह्यमानचित्तविघटमान-जीविताशा दूरविजृम्भितातुवंसर्वाङ्गप्रज्वलनमदनहुतवहोद्दामदाहदुःसहायास-दुर्मनायमानपरिजना प्रत्याशाविमोक्षमात्रसुलभमृत्युनिर्वाणप्रतिकूलबुद्धरक्षिता-वचनविवर्धितावेगव्यतिकरविसंस्थुलेमं जीवलोकपरिवर्तमनुभवामि। संकल्प-चिन्तायां स्वप्नान्तरेषु च मनोरथोन्मादमोहिता पश्यामि तं जनम्। तथा च प्रियसखि, मुहूर्तमुद्धविस्मयविसंस्थुलोद्वेल्लविस्तारिप्रान्तनालरक्तनेत्रपुण्डरी-कताण्डवोद्भटप्ररूढमैरेयमदघूर्णनशीलं निर्वर्णयति। किंच कवलितारविन्द-केसरकषायकण्ठकलहंसघोषघर्घरस्खलितगम्भीरभारतीभरितकर्णविवरं प्रिये मद-यन्तिके, इति मां व्याहरति। अथ प्रभवन्निवोत्तरीयाञ्चलावलम्बनपराभवेन ससंभ्रमोत्तरङ्गमधमायमानहृदयां समुत्त्रासयति। सहसा विसर्जितापसृतत-रक्षणकठोरकमलदण्डायमानबाहुबन्धनापवारितपयोधरोद्गमां विघटमानविह्वल-मेखलावलयसंधार्यमाणपीवरोरुप्रतिपिद्धविप्रतीपगमना प्रतिकूलवादिनीमपि सर्वादरप्रयत्ननिर्वलितमुहुर्नकोपोपरागदुःखपरपीकृतहृदया स्निग्धपुनरुक्तपर्यस्त-लोचनविभावितादोषचित्तसारामुपहस्य द्विगुणबाहुदण्डावेष्टननिश्चेष्टनियमिता प्रियसखि, प्ररूढशार्दूलकठोरकररुहप्रहारविकटपत्रावलीप्रसाधनोत्तानवक्षः-

---

और उनके प्रति अविरत कौतूहल, उत्कण्ठा एवं अभिलाषा से मेरा सुन्दर हृदय भरा हुआ था तदनन्तर भाग्यवश चिरकाल के पश्चात् उनका दर्शन प्राप्त हुआ जिससे अनिवार्य एवं भयंकर वेदना के दुःख तथा सन्ताप से हृदय जलने लगा और जीवन की आशा दूर होने लगी। अत्यन्त वृद्धि प्राप्त, आश्चर्य एवं सर्वांगों को सन्तप्त करनेवाले कामाग्नि के दारुण दाह से मैं अत्यन्त कष्ट पाने लगी, जिससे हमारी परिचारिकाएं भी अतीव दुःखी हो गयीं। इस प्रकार उन प्रियतम की प्राप्ति की आशा का परित्याग करने मात्र से ही सुलभ मृत्यु-रूप सुख की अभि-लाषिणी बन गयी थी किन्तु बुद्धरक्षिता के उक्त सुख के प्रतिकूल वचनों से (आशाजनक बातों से) मेरा उद्वेग पुनः बढ़ गया है जिससे अस्थिर चित्तवाली मुझको इस जीव लोक के परिवर्तन चक्र का अनुभव होने लगा। कल्पना एवं स्वप्न के बीच में केवल अपनी इच्छा से कामोन्माद की स्थिति आ जाती है और मैं उन महानुभाव को देखने लगती हूँ। हे प्रियसखी! उसी प्रकार से, कुछ क्षणों तक धारण किए गए आश्चर्य से विह्वलतापूर्वक इधर उधर चलनेवाले, विस्तृत, एवं एक छोर पर रक्तिम, नालों से युक्त लाल नेत्र-कमलों को अतीव चंचलतापूर्वक नचाने में श्रेष्ठ मदिरा की मत्तता को प्रकट करते हुए नाचते हुए नेत्रों से वे भी

स्थलनिष्ठुरनिवेशननिःमहां कृत्वा सावेगविधूतमस्तकाग्रविद्रवरी।निर्दिन्नकरपरिग्रहपुञ्जीकृतोत्क्षिप्तनिचलमुग्धावयवस्वच्छन्दविलसितविदग्धवदनकमलोपामगण्डमूलचिरविनिहितप्रस्फुरत्कुञ्चिताधरसमुद्गममनोहरसहर्षसरभसकम्पितमनोहरोत्कम्पितशरीरशोभामुल्लसितसाध्वसमानन्दविषमसंभ्रममनोहरसकलमन्थरभ्रमच्चेतनाकिमपि किमपि दुर्विनयसाहसानुरूपमध्यवसायो मामभ्यर्थयते। एवं नाम प्रियसखि! समस्तं सर्वमनुभूय ततो झटिति प्रतिबुद्धा शून्यारण्यसन्निभं पुनरपि मन्दभागिनी विभावयामि जीवलोकमिति। (णिसामेहि पिअसहि, मम बुद्धरविसंवादपच्चवादप्पच्चएण पढमं जेव्व तस्सि जणे अविरलकोदूहलुक्कण्ठामणोहरं हिअअं आसी। तदो णिहिणिओइअविरणिउत्तदंसणा भविअ दुव्वारदारुणाआसदुप्पसंवादवज्जन्तचित्तविहडन्तजीविदासा दूरविअम्भिआपुव्वसव्वङ्गप्पज्जलणमअणहुदवहुद्दामदाहदूसहाआस दुम्मणाअन्तपरिअणाप्पच्चासाविमोक्खसमेत्तसुलहमिसुणिच्चाणपडिऊलवुद्धरविसंदावअणविवड्ढिआवेअवइअरविसंठुला इमं जीवलोअपरिवत्तं अणुहोमि। संकप्पचिन्ताए सिविणन्तरेसु अ मणोरहुम्मादमोहिहा पेक्खामि तं जणं। तह अ पिअसहि, मुहुत्तं उद्धुअविहुअविसंठुलुव्वेल्लिरयारिपेरन्तणावरत्तणेत्तपुण्डरीअताण्डवउब्भडपल्हत्थेरेअमय-

---

मुझे देखते हैं। और भी, सुनो। उन्होंने मुझे जब 'प्रिये मदयन्तिके!' इस प्रकार कहा तो ऐसा लगा मानो कमलों का मकरन्द भक्षण करने से मनोहर कण्ठ स्वर वाले कलहंस के स्वर को भांति अस्पष्ट, गद्गद, गम्भीर, उच्च एवं अकम्पित स्वर से हमारे कानों के छिद्रों को परिपूर्ण कर देते हैं। इसके बाद तो वह स्वामी के समान होते हुए मेरे उत्तरीय (ओढ़नी) वस्त्र के गिर पड़ने पर जब उसे उठाकर सम्भाल लेते हैं तो अपने मन में तिरस्कार की भावना से कम्पन युक्त मेरे हृदय में "धम धम", इस प्रकार का शब्द होने लगता है और ऐसी अवस्था में वह मुझे अतीव चकित कर देते हैं।

यकायक मेरे पहने हुए वस्त्र को खींच कर वह छोड़ देते हैं तो मैं लज्जित होकर भागने लगती हूं, उस समय वह अपने कठोर कमल नाल की भांति आचरण करनेवाले भुजदण्डों से मुझे आलिंगन पाश में बांध लेते हैं जिससे हमारे स्तन मण्डलों की ऊंचाई आच्छादित हो जाती है। हमारी विस्तृत करधनी खुलकर नीचे सरक पड़ती है जिससे हमारी दोनों स्थूल जंघाएँ कांप उठती है और फिर तो उनका अनभिलषित मेरा गमन रुक जाता है। उस क्षण जब मैं प्रतिकूल बोलने लगती हूं तो उनके सभी प्रकार के आदर युक्त प्रयत्नों से, कुछ क्षणों तक रोष और

घुम्मन्तसोलं णिव्वण्णेदि। किं अ कवलिआरविन्दकेसरकसाअकण्टकलहंसघोसघग्घरक्खलिअगम्भीरभारदीभरिदक्कण्णविवरं पिए मदअन्तिए त्ति मं वाहरदि। अहपहावन्तो विअ उत्तरीअञ्चलावलम्बणपराहुवेण ससंभमुत्तरङ्गघमघमाअन्तहिअअं समुत्तामेदि। सहसा विसज्जिअओसरिअतक्खकठोरकमलदण्डाअ तवाहुबन्धगाववारिदपओहरमम्मं विहडन्तविह्वलमेहलावलअसंधाणिज्जन्तपीवरोरुप्पिण्डिद्धविप्पडीवगमणं पडिऊलवादिणीं वि सव्वादरपअत्तणिव्वत्तिदमुहुत्तकोवोवराअदुव्वअपरसीकिदहिअअं सिणिद्धपुणरुत्तपल्हत्थलोअणविहाविदासेसचित्तसारं उवहसिअ दुउणबाहुदण्डावेट्ठणणिच्चेट्ठणिअमिअं पिअसहि, प्फरुसदूदूलकठोरकररुहप्पहार विअडपत्तावली पसाहणुत्ताणवच्छत्थलणिट्ठुरणिवेसणेणी सअं कदुअ सावेअविहुअमत्थआवविद्धकवरीणिहिदकरपरिग्गहप्पुञ्जीकिदुण्णमिअच्छप्फलमुहावअवच्छन्दविलसिदविअड्ढवअणकमलो वामगण्डमूलचिरविणिहिदपप्फुरन्तपुञ्जिआहरसमुग्गममण हरसहअसा रससदमणहरक्कसिसदसरीरसोहं उल्लसिदसद्धसाणन्दविसमसंभममणहरसंवलणमुग्धमन्तचेअणं किं वि किं वि

दुःख से निष्ठुर मेरे हृदय के भाव दूर हो जाते हैं। उस समय वह स्नेहपूर्वक बारम्बार दृष्टिपात करते हुए हमारे मन के समस्त भावों का तात्पर्य जान लेते हैं और उपहास करके अपने द्विगुणित बाहु युगल (पाश) द्वारा घेर कर हमको बांध लेते हैं और मैं नियंत्रित हो कर निश्चेष्ट-सी बन जाती हूं। हे प्रिय सखी! उस बाघ के कठोर नख-प्रहार से समुत्पन्न भयकर पत्रावली रचना से विभूषित एवं उन्नत विशाल वक्षस्थल मे दृढ़ता से घसीटकर प्रवेश करा देते (चिपका लेते) से मुझे अशक्त बना देते हैं। इसके बाद मैं उनके चुम्बन का जब निषेध करती हू तो वेग में मेरा शिर कांप उठता है, जिससे केशपाश खुल जाता है, उस समय वह अपने एक हाथ से मेरे मुख के ऊपर से केशों को सरकाकर दूसरे हाथ से सहारा देकर केशपाश को पुंजीभूत करके पकड़ लेते हैं तब हमारे मुख के साथ हमारे नेत्र, कपोल और ओंठ ऊपर उठ जाते हैं और निश्चल हो जाते हैं और उनके ऊपर उनका मुखकमल इच्छानुसार चतुरतापूर्ण चुम्बन कार्य में रत हो जाता है। उस क्षण हमारे बाएं कपोल के मूलभाग पर वह अपने कांपते हुए एवं पुंजित अधर को बड़ी देर तक स्थापित कर देते हैं जिससे सहज भाव से कुछ वाणी भी प्रकट होती है जो अतीव मनोहर होती है। इससे शरीर की कान्ति और अधिक बढ़ जाती है। उस समय भय और आनन्द दोनो की अनुभूति होती है जिससे अत्यन्त आवेग एव जड़ता उत्पन्न होती है, जिससे हमारी चेतना थोड़ा थोड़ा भ्रान्त होने लगती है। उस क्षण वह मुझसे कहने के अयोग्य विषय की प्रार्थना करने लगते

सुखिनसकलगुणानुभवलब्धप्रसादा मं अब्भत्थेदि। एव्वं णाम णिब्भरं गमअन्ती सव्व अणुभविअ तदो झत्ति पडिबुद्धा सुण्णारण्णसरिसं पुण वि मन्दभाइणी विभावेमि जीवलोअं त्ति)

लवङ्गिका—सखि मदयन्तिके, स्फुटमाख्याहि। अपि तस्मिन्नवसरे स्नेहविभ्रमोल्लासितमुग्धबुद्धरक्षितानेत्रनिरीक्षिताभोगमयूरं परिजनाद्गोपनीयं भवति न वेति। (सहि मअअन्तिए, फुडं आअक्खेहि। अवि तस्सिं अवसरे सिणेहविब्भमुल्लसिअमुद्धबुद्धरक्खिदाणेत्तणिरिक्खिदं आभोअमऊरअं परिअणादो गोवणिज्जं होदि ण वेत्ति)

मदयन्तिका—अयि असम्बद्धपरिहासशीले, अपेहि। (अइ असंबद्धपरिहासशीले, अवेहि)

बुद्धरक्षिता—सखि मदयन्तिके, मालतीप्रियसख्येवैतादृशानि जानाति। (सहि मअअन्तिए, मालदीपिअसहि जेव्व एदं ईरिसाइं जाणादि)

मदयन्तिका—मा खल्वेवं मालतीमुपहस। (मा क्खु एव्वं मालदिं उवहस)

बुद्धरक्षिता—सखि मदयन्तिके, प्रष्टव्यमिदानीं किमपि। यदि न मे विस्रम्भभङ्गं करोषि। (सहि मअअन्तिए, पुच्छिदव्वं दाणिं किं वि। जइ ण मे विस्सासभङ्गं करेसि)

है। हे सखी! इस तरह प्रत्यक्ष में सब प्रकार के सुखों का अनुभव कर के जब मैं झट पट जाग पड़ती हूं तब मन्दभागिनी बनकर इस जीव लोक को पुन. निर्जन जगत् की भांति देखती हूं।

लवंगिका—सखी मदयन्तिका! साफ-साफ बताओ। उस स्वप्न समागम के अवसर पर बुद्धरक्षिता के स्नेह एवं विविध प्रकार के विभ्रम विलासों से निर्मित एवं विस्फारित नेत्रों से देखा गया तुम्हारा मयूर के समान आकृतिवाला आसन[1] तुम्हारी परिचारिकाओं द्वारा भी गोपनीय होता है या नहीं।

मदयन्तिका—अरी! असम्बद्ध परिहास करनेवाली! दूर हटो।

बुद्धरक्षिता—सखी मदयन्तिका! मालती की प्रिय सखी ही इस प्रकार की बातें जानती हैं।

मदयन्तिका—इस प्रकार तुम मालती का उपहास मत करो।

बुद्धरक्षिता—सखी मदयन्तिका! मैं कुछ कहना चाहूंगी यदि तुम मेरा विश्वास न तोड़ो तब।

---

१. स्वप्न के समागम मे धातु के क्षरित होने के कारण वस्त्र गीला हो जाता है, उसे छिपाने के लिए मदयन्तिका जब प्रयास करती थी तो उसे मयूराकार आसन की भांति वस्त्र छिपाने पडते थे।

मदयन्तिका—किं पुनरपि प्रणयभङ्गेन कृतापराधोऽयं जनो येनैवं मन्त्रयसे। प्रियसखि, त्वं लवङ्गिका च सांप्रतं मे हृदयम्। (किं पुणो वि पणअभङ्गेण किआवराहो अअं जणो जेण एव्वं मन्तेसि। पिअसहि, तुमं लवङ्गिआ अ संपदं मे हिअअं)

बुद्धरक्षिता—यदि ते कथमपि मकरन्दः पुनरपि दर्शनपथमवतरति तदा किं त्वया कर्तव्यम्। (जइ दे कहं वि मअरन्दो पुणो वि दंसणपहं ओदरदि तदो किं तुए कादव्वं)

मदयन्तिका—एकैकावयवनिसर्गलग्ननिश्चले चिरं लोचने निर्वापयिष्ये। (एक्केक्कावअवनिसग्गलग्गणिच्चले चिरंलोअणे णिव्वावइस्सं)

बुद्धरक्षिता—अथ स मन्मथबलात्कारितो यदि कदर्पजननी त्वां रुक्मिणीमिव पुरुषोत्तमः स्वयंग्राहसाहसेन सहधर्मचारिणीं करोति तदा कीदृशी प्रतिपत्तिः। (अह सो मम्महबलक्कारिओ जइ कंदप्पजणणिं तुमं रुक्किणिं विअ पुरुसोत्तमो सअंगाहसाहसेण सहधम्मआरिणिं करेदि तदो कीरिसी पडिवत्ती)

मदयन्तिका—(निःश्वस्य) कस्मादेतावदाश्वासितास्मि। (किं एत्तिअं आसासिदम्हि)

बुद्धरक्षिता—सखि, कथय। (सहि, कहेहि)

मदयन्तिका—क्या इस व्यक्ति ने पुनः कभी तुम्हारे विश्वास को भंग करने का अपराध किया है जो ऐसा कह रही हो। प्रिय सखी ! तुम और लवंगिका दोनों ही इस समय मेरे हृदय के समान हो।

बुद्धिरक्षिता—यदि किसी प्रकार मकरन्द पुनः तुम्हारी आखों के सामने आ जायें तो तुम को उस समय क्या करना होगा ?

मदयन्तिका—तब अपने दोनों नेत्रों को उनके एक-एक अंग में बहुत समय तक स्वभावतः संलग्न एवं निष्पन्द रख कर उन्हें शीतल करूंगी।

बुद्धिरक्षिता—पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण ने जिस प्रकार कामार्त्त होकर कामजननी रुक्मिणी को साहसपूर्वक स्वय ग्रहण करके अपनी सहधर्मिणी बनाया था उसी प्रकार यदि वह पुरुषश्रेष्ठ मकरन्द कामाविष्ट होकर कामोद्दीपन करने वाली तुम्हें बलपूर्वक स्वयं ग्रहण करके अपनी दुल्हिन बना लें तब तुम क्या करोगी ?

मदयन्तिका—(लंबी साँस खीचकर) किसलिए तुम इस प्रकार का आश्वासन मुझे देती हो।

बुद्धिरक्षिता—सखी ! कहो न ?

लवङ्गिका—सखि, कथितमेव हृदयावेगसूचकैर्दीर्घनिःश्वासैः। (सहि, कहिदं जेव्व हिअआवेअसूअएहिं दीहणीसासेहिं)

मदयन्तिका—सखि, कालेनात्म जीवितमेव पणीकृत्य मृत्युमुखकवलनादाकृष्टस्य तस्यैव परायत्तस्य कृत्यकिङ्करस्यात्मनः शरीरस्य। (सहि, कहं इमस्स देस जेव्व अत्ताण पणीकदुअ मिच्चुकवलणादो आअड्ढिअस्स तस्स जेव्व परदीअस्स किच्चकिंकरस्स अत्तणो सरीरस्स)

लवंगिका—सदृशं खलु महानुभावतायाः। (सरिसं क्खु महाणुभावदाए)

बुद्धरक्षिता—स्मरिष्यस्येतद्वचनम्। (सुमरेसि एदं वअणं)

मदयन्तिका—कथं द्वितीययामविच्छेदपटहस्ताड्यते। तद्यावन्नन्दनं निर्भर्त्स्य पादपतनेन वाभ्यर्थ्य मालत्या उपर्यनुकूलयिष्यामि। (इत्युत्थातुमिच्छति) (कहं दुदिअजामविच्छेदपडहो ताडीअदि। ता जाव णन्दणं णिब्भच्छिअ पादपडणेण वा अब्भत्थिअ मालदीए उवरि अणुऊलइस्सं)

(मकरन्दो मुखमुद्घाट्य तां हस्ते गृह्णाति)

मदयन्तिका—सखि मालति, प्रतिबुद्धासि। (विलोक्य सहर्षं ससाध्वसं च) अहो, इदमन्यदेव वर्तते। (सहि मालदि, पडिबुद्धासि। अम्महे, एदं अण्णं जेव्व वट्टदि)

लवंगिका—सखी! चित्त के उद्वेग की सूचना देनेवाले निःश्वास तो बतला ही चुके।

मदयन्तिका—सखी! उन्होंने ही अपने जीवन की बाजी लगाकर मृत्यु के मुख में ग्रास बनने से खींचकर इस शरीर को बचाया था, अतः उनके अधीनस्थ कार्य के किंकर अपने इस शरीर की मैं कौन होती हूं?

लवंगिका—यह तुम्हारी जैसी कृतज्ञ एवं उदारहृदया के स्वभाव के अनुरूप ही है।

बुद्धिरक्षिता—इस वचन को याद रखोगी न?

मदयन्तिका—अरे! रात्रि के द्वितीय प्रहर की सूचना देनेवाला नगाड़ा बजाया जा रहा है। अतः मैं (यहाँ से चलकर) नन्दन की भर्त्सना करके अथवा उसके चरणों पर गिरकर प्रार्थना करके मालती के ऊपर अनुकूल बनाऊंगी।

(ऐसा कहकर उठना चाहती है।)

(मकरन्द मुख खोलकर उसे अपने हाथ में पकड़ लेता है।)

मदयन्तिका—सखी मालती! तुम जग गयी हो?

(देखकर हर्ष एवं भय के साथ) अरे! यह तो कुछ दूसरी ही बात है?

मकरन्दः—

रम्भोरु ! संहर भयं, क्षमते विकार-
मुत्कम्पिनः स्तनतटस्य न मध्यभागः ।
इत्थं त्वयैव कथितप्रणयप्रसादः
संकल्पनिर्वृतिषु संस्तुत एष दासः ॥२॥

बुद्धरक्षिता—(मदयन्तिकामुखमुन्नमय्य संस्कृतमाश्रित्य)

प्रेयान्मनोरथसहस्रवृतः स एष
सुप्तप्रमत्तजनमेतदमात्यवेश्म ।
प्रौढं तमः कुरु कृतज्ञतयैव भद्र-
मुत्क्षिप्तमूकमणिनूपुरमेहि यामः ॥३॥

मदयन्तिका—सखि बुद्धरक्षिते, क्व पुनरिदानीमस्माभिर्गन्तव्यम्। (सहि बुद्धरक्खिदे, कहिं पुणो दाणिं अम्हेहिं गन्दव्वं)

बुद्धरक्षिता—यत्रैव मालती गता। (जहिं जेव्व मालदी गआ)

मकरन्द—हे कदली के स्तम्भ के समान जंघोंवाली ! भय छोड़ो। तुम्हारी (पतली) कमर काँपते हुए (विशाल) स्तन-मण्डलों का कम्पन सहन नहीं कर सकता। अभी अभी तुमने जिसके प्रति अपने प्रेम-रूप अनुग्रह का इस प्रकार वर्णन किया है, मन ही मन कल्पनाजनित सुखों का सुपरिचित यह तुम्हारा दास (उपस्थित) है ॥२॥

बुद्धिरक्षिता—(मदयन्तिका का मुख ऊपर उठा कर संस्कृत भाषा में)।

तुमने सहस्रों अभिलाषाओं द्वारा जिन्हें वरण किया था, यह वही तुम्हारे प्रियतम मकरन्द जी हैं जो अमात्य के भवन में, जहाँ कई लोग सोये हुए हैं और कई लोग विवाहोत्सव में प्रमत्त होकर पड़े हुए हैं, जहाँ गाढ़ अन्धकार छाया हुआ है, वहाँ तुम अपनी कृतज्ञता का स्मरण करके अपना मंगल करो। अपने मणिमय नूपुरों को ऊपर उठाकर विना शब्द का कर लो और आओ, हम लोग चल रहे हैं ॥३॥

मदयन्तिका—सखी बुद्धरक्षिता ! इस समय हम लोगों को कहाँ चलना चाहिए।

बुद्धिरक्षिता—जहाँ पर मालती गयी है, वहीं पर।

अष्टमोऽङ्कः

(ततः प्रविशत्यवलोकिता)

अवलोकिता—वन्दिता मया नन्दनावसथप्रतिनिवृत्ता भगवती। तद्यावन्मालतीमाधवसकाशं गच्छामि। (परिक्रम्य) एतौ तौ परिनिर्वर्तितग्रीष्मदिवसावसानमज्जनौ दीर्घिकातीरशिलातलमलङ्कुरुतः। तदुपसर्पामि। (इति निष्क्रान्ता) (वन्दिदा मए णन्दणावसथपडिणिउत्ता भअवदी। ता जाव मालदीमाहवसआसं गच्छम्हि। एदे दे परिणिव्वुत्तिदगिह्मदिअहावसाणमज्जणा दीहिआतीरसिलातलं अलंकरन्ति। ता उपसप्पामि।

प्रवेशकः।

(ततः प्रविशतो मालतीमाधवौ उपविष्टावलोकिता च)

माधवः—(सानन्दम्) वर्धते हि मन्मथप्रौढसुहृदो निशीथस्य यौवनश्रीः। तथा हि—

आठवाँ अंक

(तदनन्तर अवलोकिता प्रवेश करती है।)

अवलोकिता—नन्दन के निवास स्थान से वापस लौटी हुई भगवती कामन्दकी को मैंने नमस्कार किया है। अब मालती और माधव के समीप जा रही हूँ। (चलने का नाट्य करके) ये दोनो (इस ग्रीष्म ऋतु की सन्ध्यावेला में स्नान कर बावली के तट पर अवस्थित शिला को अलंकृत कर रहे हैं। अतः अब इनके पास जाती हूँ। (ऐसा कहकर निकल जाती है।)

प्रवेशक समाप्त

(तदनन्तर मालती, माधव और बैठी हुई अवलोकिता का प्रवेश)

माधव—(आनन्द के साथ) कामदेव के प्रमुख सुहृद् अर्धरात्रि की यौवन-शोभा बढ़ रही है। क्योंकि—

दलयति परिशुष्यत्प्रौढतालीविपाण्डु-
स्तिमिरनिकरमुद्यन्नैन्दवः प्राक्प्रकाशः।
वियति पवनवेगादुन्मुखः केतकीनां
प्रचलित इव सान्द्रो मन्दमन्दं परागः॥१॥

(स्वगतम्) तत्कथं वामशीलां मालतीमुपावर्तये। भवत्वेवं तावत्। (प्रकाशम्) प्रिये मालति, प्रत्यग्रसायतनस्नानसविशेषशीतला भवती निदाघमतापशान्त्यै किंचिद्विज्ञापयामि। तत्किमित्यन्यथैव मां संभावयसि।

निश्च्योतन्ते सुतनु! कबरीबिन्दवो यावदेते
यावन्मध्यः स्तनमुकुलयोरार्द्रभावं जहाति।
यावत्सान्द्रप्रतनुपुलकोद्भेदवत्यङ्गयष्टि-
स्तावद्गाढं वितर सकृदप्यङ्कपालीं प्रसीद॥२॥

सूखते हुए परिपक्व ताड़ी के पत्ते के समान पीले-श्वेत रंगवाला पूर्व दिशामें उगते हुए चन्द्रमा का प्रकाश अन्धकार के पुंजों का विनाश कर रहा है। एवं वायु के वेग से आकाश में उन्मुख, मन्द-मन्द सचरण करता हुआ एवं सघन केतकी के पुष्पों के मकरन्द के समान यह चन्द्रमा का प्रकाश शोभा दे रहा है॥१॥

(अपने आप) तो प्रतिकूल स्वभाववाली मालती को किस प्रकार प्रसन्न करूं?

खैर, ऐसा हो। (प्रकट रूप में) प्रिय मालती! अभी अभी सायंकालिक स्नान से तुम अतीव शीतल हो चुकी हो, अतः ग्रीष्म के सन्ताप को शान्त करने के लिए मैं कुछ और उपाय बताना चाहूंगा। फिर क्यों तुम मुझ को अन्य रूप में समझती हो?

हे सुन्दरी! जब तक तुम्हारे केशपाश में ये संपूर्ण जल की बूंदें गिरती हैं, जब तक तुम्हारे स्तन युगलों का मध्यभाग अपनी आर्द्रता नहीं त्यागता, जब तक तुम्हारी देह-लता प्रगाढ़ एवं सूक्ष्म पुलकावली से युक्त है, तब तक तुम प्रसन्न होकर प्रगाढ़ आलिंगन केवल एक बार ही मुझे दे दो॥२॥

अयि मालति निरनुक्रोशे,

जीवयन्निव ससाध्वसस्वेदबिन्दुरधिकण्ठमर्प्यताम्।
याहुरिन्दुमयूखचुम्बितस्यन्दिचन्द्रमणिहारविभ्रमः॥३॥

अथवा दूरे तावदेतत्। कथमालापमात्रविभागस्याप्यभाजनमयं जनो भवत्याः।

दग्धं चिराय मलयानिलचन्द्रपादै-
र्निर्वापितं तु परिरभ्य वपुर्न नाम।
आमत्तकोकिलरुतव्यथिता तु हृद्या-
मद्य श्रुतिः पिबतु किंनरकण्ठि! वाचम्॥४॥

अवलोकिता—अयि अनिर्वहणशीले, यदिदानीं मुहूर्तमात्रान्तरितमाधवा दुर्मनायमाना मम पुरतो भणसि। 'चिरयत आर्यपुत्र। अपि नाम कियच्चिरेण प्रेक्षिष्ये, येन पुनर्विवर्धितात्मेपसाध्वसा विस्मृतनिमेषविघ्नमवलोकयन्त्येवं भणिष्यामि। द्विगुणितावेष्टनपरिरम्भेण सभाजयिष्य' इति। स एवास्य परिणामः? (अइ अणिव्वहणसीले, जं दाणिं मुहुत्तमेत्तन्तरिदमाहवा दुम्मणअन्ती मह पुरदो भणासि। 'चिराअदि अज्जउत्तो। अवि णाम किअच्चिरेण पेक्खिस्सं, जेण पुणो

हे निर्दय मालती! जिसमें भय के कारण शीघ्र ही पसीने की बूंदें छहर आयी हैं और जो चन्द्रमा की किरणों के स्पर्श से स्रवित होनेवाली चन्द्रकान्त मणि की माला की तरह सौन्दर्ययुक्त है, और जो मुझे जीवन-दान-सा करती है, अपनी उस बाहु को मेरे कण्ठ में समर्पित कर दो॥३॥

अथवा यह बात अभी दूर रहने दो। यह जन क्यों तुम्हारे संग वार्तालाप का भी पात्र नहीं (बन सका) है।

मलय वायु और चन्द्रमा की किरणों से चिरकाल तक दग्ध मेरे इस शरीर को आलिंगन दे कर तुमने शीतल नहीं बनाया तो कोई बात नहीं किन्तु हे किन्नर-कंठी! मदमत्त कोकिलों के शब्दों से पीड़ित मेरे कान आज तुम्हारी मनोहर वाणी-रूपी अमृत का पान करें॥४॥

अवलोकिता—हे मालती! तुम्हारा स्वभाव ऐसा है कि तुम किसी भी कार्य का निर्वाह नहीं कर सकती हो। जो अभी कुछ ही क्षणों तक माधव से वियुक्त होने पर तुम दुःखी होकर हमारे सामने कहती थी कि—आर्यपुत्र विलंब कर रहे हैं, कितनी देर बाद मैं उन्हें देख सकूंगी, जिससे सम्पूर्ण भय त्याग कर एवं क्षण मात्र के भी विलंब को भूलकर यह सब बातें (उनसे) कहूंगी, एवं द्विगुणित वेग से

विवड्ढिआसेससज्झसा दिसुमं अणिमेसदिग्घं ओलोअन्ती एव्वं भणिस्सं। दुउणिआवेट्ठणपरिरम्भणेण संभाविस्सं' त्ति। स ज्जेव्व अअं परिणामो ?)

(मालती सासूयमिव तां पश्यति)

माधवः—(स्वगतम्) अहो! भगवत्या प्रथमान्तेवासिन्या सर्वतोमुखं वैदग्ध्यमक्षय्यसुभाषितरत्नमचारसंस्करणम्। (प्रकाशम्) प्रिये, सत्यमवलोकिता वदति।

(मालती मूर्धानं चालयति)

माधवः—शापितासि मम लवङ्गिकावलोकितयोश्च जीवितेन यदि मे न कथयसि।

मालती—णाहं किमपि जानामि। (इत्यर्धोक्ते लज्जां नाटयति) (णाहं किं वि जाणामि)

माधवः—अहो! अनर्वामितार्थरम्यवचमश्चारुता। (सहसा निरूप्य) अवलोकिते, किमेतत्।

बाष्पाम्भसा मृगदृशो विमलः कपोलः
प्रक्षाल्यते सपदि, राजत एष यस्मिन्।

अपनी युगल बाहों द्वारा किए गए आलिंगन से उनको सम्मानित करूंगी।' ऐसा होने पर भी उन्हीं माधव के साथ अब यह परिणाम हो रहा है।

(मालती किंचित् क्रोध के साथ उसे घूरती है।)

माधव—(अपने आप) भगवती कामन्दकी की प्रधान शिष्या की सभी विषयों में रुचि रहनेवाली चतुरता एवं अक्षय सुभाषित रत्नों के ज्ञान का यह संस्कार है।

(प्रकट रूप में) प्रिये! अवलोकिता सच्ची बात कह रही है।

(मालती अपना सिर हिलाती है।)

माधव—मैं तुम्हें लवंगिका और अवलोकिता के जीवन की शपथ दिला रहा हूँ यदि तुम मुझ से न बोलोगी।

मालती—मैं कुछ भी नहीं जानती। ऐसा अर्धवाक्य कहते ही लज्जा का नाट्य करती है।

माधव—अहो! इसके सम्पूर्ण तात्पर्य को न प्रकट करने वाली वाणी में कितनी रमणीयता है। (एकाएक देखकर) अवलोकिते! यह क्या है?

मृगनयनी मालती का वह निर्मल कपोल आंसुओं के जल से तत्क्षण प्रक्षालित हो रहा है, जिसमें गण्डूष द्वारा कान्ति रूप अमृत को पान करने की अभिलाषा

गण्डूषपेयमिव कान्त्यमृतं पिपासु-
रिन्दुर्निवेशितमयूखमृणालदण्डः ॥५॥

अवलोकिता—सखि, किमिदानीमुच्चलितबाष्पोत्पीडं रुद्यते? (सहि, कि दाणि उच्चलिअबाहुप्पीडं रोदिअदि?)

मालती—सखि, कियच्चिरं लवङ्गिकाया असंनिधानदुःखमनुभविष्यामि। प्रवृत्तिलाभोऽपि तस्या दुर्लभः। (सहि, केच्चिरं लवङ्गिआए असण्णिहाणदुक्खं अनुहविस्सं। पउत्तिलाहो वि से दुल्लहो)

माधवः—अवलोकिते, किं नामैतत्।

अवलोकिता—तवैव वचनोपन्यासेनैषा लवङ्गिकां स्मृत्वा तस्याः प्रवृत्तिलाभनिमित्तमुत्ताम्यति। (तुह जेव्व वअणोवण्णासेण एसा लवङ्गिअं सुमरिअ ताए पउत्तिलाहणिमित्तं उत्तम्मिअदि)

माधवः—नन्विदानीमेव हि मया कलहंसः प्रेषितः। गच्छ त्वं प्रच्छन्नमुपगम्य नन्दनावसथप्रवृत्तिमुपलभस्वेति। (साशङ्कम्) अवलोकिते, अपि नाम बुद्धरक्षिताप्रयत्नः फलोदर्क एव मदयन्तिकां प्रति स्यात्।

कर मानो चन्द्रमा अपने किरण-रूप मृणालदण्ड की स्थापना कर सुशोभित हो रहा है ॥५॥

अवलोकिता—सखी! तुम इस समय क्यों आँसुओं की यह धारा बहाती हुई रो रही हो?

मालती—सखी! मैं कितनी देर तक लवंगिका को अपने समीप में न देखकर दुःख का अनुभव करूँगी? उसकी प्रवृत्तियों का समाचार भी मुझे दुर्लभ हो रहा है।

माधव—अवलोकिते! यह क्या बात है?

अवलोकिता—तुम्हारी ही बातों के प्रसंग में लवंगिका का नाम आया था, जिसके कारण उसका स्मरण कर यह उसका समाचार पाने को खिन्न हो रही है।

माधव—मैंने अभी अभी कलहंस को यह कहकर भेजा है कि तुम जाओ और गुप्त रूप से छिपकर नन्दन के भवन का समाचार ले आओ। (आशंका के साथ) अवलोकिते! क्या मदयन्तिका के लिए किया गया बुद्धरक्षिता का प्रयत्न सफल हो सकेगा?

अवलोकिता—महाभाग, प्रथममेव शार्दूलनखरालंकृतस्य मकरन्दस्य मोहविच्छेदं निवेदयन्त्या भगवत्या नियुक्तेन भवता मालत्या समं जीवितेन हृदयं प्रसादीकृतम्। कोऽपि सांप्रतं मदयन्तिकालाभो वर्धयिष्यति। तस्य किमिदानीं पारितोषिकं भविष्यति। (महाभाअ, पढमं जेव्व सद्दूलणहरालंकिदस्स मअरन्दस्स मोहविच्छेअं णिवेदअन्ती भअवदीए णिउत्तेण भवदा मालदीए समं जीविदेण हिअअं पसादीकिदं। को वि संपदं मदअन्तिआलहो वड्ढावेदि। तस्स किं दाणिं पारितोसिअं हुविस्सदि)

माधवः—अनुयोक्तव्यमेवानुयुक्तोऽस्मि। (हृदयमवलोक्य) इयमस्ति मालतीप्रथमदर्शनाभिषङ्गसाक्षिणी कामकाननालंकारस्य लक्ष्मीवतः केसरतरोः प्रसवमाला।

प्रेम्णा मद्ग्रथितेति या प्रियसखीहस्तापनीतेति वा
विस्तारिस्तनकुम्भकुड्मलभरोत्सङ्गेन संभाविता।
प्राप्तेऽप्यथ पाणिपीडनविधौ मां प्रत्यपेताशया
या मय्येव लवङ्गिकेत्यवगते सर्वस्वदायः कृता॥६॥

अवलोकिता—महानुभाव! पहले ही बाघ के पंजों से अलंकृत मकरन्द जी की मूर्च्छा के दूर होने के समाचार को सूचित करनेवाली मालती को आपने भगवती (कामन्दकी) की आज्ञा से अपने जीवन के साथ अपने हृदय को भी उपहार के रूप में अर्पित कर दिया था। अब इस समय जब मदयन्तिका का लाभ भी आप को सवधित करेगा तो उसका पारितोषिक क्या होगा?

माधव—तुमने पूछने योग्य बात ही पूछी है। (हृदय की ओर देखकर) यह है मालती के प्रथम दर्शन से उत्पन्न अतीव अनुराग की साक्षिणी, कामोद्यान की अलंकार स्वरूप परम सुन्दर मौलसिरी के वृक्ष से गिरे हुए पुष्पों की माला।

मैंने इस माला को गूँथा है—इस कारण अथवा मेरी प्रियसखी लवंगिका के हाथ से यह लायी गयी है—इस कारण प्रियतमा मालती ने जिसे अपने सुविस्तृत एवं कलश के समान स्तन-कुड्मल के भार से युक्त क्रोड-स्थल में धारण कर सम्मानित किया था और उसके बाद विवाह का समय उपस्थित होने पर मेरी प्राप्ति में निराश सी हो कर—मुझको—यह लवंगिका है—ऐसा जान कर अपने सर्वस्व की भांति समझ कर दान कर दिया था॥६॥

अवलोकिता—सखि मालति, अन्यस्या गच्छतीव बकुलमाला। एषेदानीं परस्य हस्तं गमिष्यति। (सहि मालदि, अण्णहा गच्छदि व्व इअं बउलमाला। एसा दाणिं परस्स हत्थं गमिस्सदि)

मालती—प्रियं प्रियसख्युपदिशति। अवलोकिते, उभयमपि शुभं त्वमेवोपदिश। (पियं पिअसही उवदिसदि। अवलोइदे, उभअं वि सुहं तुमं एव्व उवदिस)

अवलोकिता—पदशब्द इव। (पदसद्दो विअ)

माधवः—(नेपथ्याभिमुखमवलोक्य) अये, कलहंस आगतः!

मालती—दिष्ट्या वर्धसे मदयन्तिकालाभेन। (दिट्ठिआ वड्ढसि मदअन्तिआलाहेण)

माधवः—(सहर्षं परिष्वज्य) प्रियं नः। (इति बकुलमालां कण्ठे ददाति)

अवलोकिता—निर्व्यूढो भगवत्याः संभावनाभारो बुद्धरक्षितया। (णिव्वूढो भअवदीए संभावणाभारो बुद्धरक्खिदाए)

मालती—(सहर्षम्) अहो! अस्माभिरपि प्रियसखी लवङ्गिका दृश्यते। (इत्युत्तिष्ठति) (अम्महे! अम्हेहिं वि पिअसही लवङ्गिआ दीसइ)

(ततः प्रविशति संभ्रान्तः कलहंसो बुद्धरक्षिता लवङ्गिका मदयन्तिका च)

अवलोकिता—सखी मालती! यह मौलसिरी की माला तुम्हें अतीव प्रिय है, अब यह दूसरे के हाथों में चली जायगी।

मालती—हमारी प्यारी सखी प्यारी बातों का उपदेश करती है। अवलोकिते! तुम ही दोनों बातों का उपदेश करो।

अवलोकिता—यह पैर की चाप जैसी सुनाई पड़ रही है।

माधव—(नेपथ्य की ओर देख कर) अहो! कलहंस आ गया है।

मालती—सौभाग्य से मदयन्तिका के लाभ के लिए आपको बधाई है।

माधव—(हर्षपूर्वक आलिंगन कर) यह सवाद हमें प्रिय है।

(अपने कण्ठ से मौलसिरी की माला उतार कर मालती के कण्ठ में डालता है।)

अवलोकिता—बुद्धरक्षिता ने भगवती कामन्दकी के दौत्यकर्म का अच्छा निर्वाह किया है।

मालती—(हर्षपूर्वक) अहो! हम भी अपनी प्रियसखी लवंगिका को देखेंगी। (ऐसा कह कर उठती है।)

(तदनन्तर सत्रस्त कलहस, बुद्धरक्षिता, लवंगिका और मदयन्तिका—ये सभी प्रवेश करते हैं।)

सर्वाः—परित्रायतां महाभाग। अर्धमार्गे खलु नगररक्षिपुरुषाभियोगो मकरन्दस्य जातः। ततस्तत्कालमिलितेन कलहंसकेन समं वयमनुप्रेषिताः। (परित्ताअदु महाभाओ। अद्धमग्गे क्खु णअररक्खिपुरिसाभिओओ मअरन्दस्स जादो। तदो तक्कालमिलिदेण कलहंसएण समं अम्हे अणुप्पेसिदाओ)

कलहंसः—यथेतोमुखागतैरस्माभिः कलकलः श्रुतः, तथा तर्कयाम्यन्यदपि पारक्यं बलमुपागतमिति। (जह इदोमुहागदेहिं अम्हेहिं कलअलो सुदो, तह तक्केमि अण्णं वि पारक्कअं बलं उवागदं त्ति)

मालत्यवलोकिते—हा धिक्! सममेव हर्षोद्वेगसंभेद उपनतः। (हद्धि! समं जेव्व हरिसुव्वेअसंभेदो उवणदो।)

माधवः—सखि मदयन्तिके, स्वागतम्। अनुगृहीतमस्मद्गृहं भवत्या। ननु स्वस्था भवन्तु भवत्यः। एकाकिनोऽपि बहुभिरभियोग इति यत्किंचिदेतद्वयस्यस्य।

हरेरतुलविक्रमप्रणयलालसः साहसे
स एव भवति क्वणत्कररुहप्रचण्डः सखा।

सभी स्त्रियाँ—महानुभाव! रक्षा करें। आधे मार्ग में नगर की रक्षा करने वाले राजपुरुषों ने मकरन्द को घेर लिया है। उसी समय हम लोगों को कलहंस मिल गया तो उसी के साथ हम लोगों को उन्होंने यहाँ भेजा है।

कलहंस—हम इस ओर चले आ रहे थे कि कोलाहल सुनाई पड़ा—इससे मैं अनुमान करता हूँ कि और दूसरी सेना भी वहाँ आ गयी है।

मालती और अवलोकिता—हाय! धिक्कार है। एक ही साथ हर्ष और उद्वेग का अवसर आ गया।

माधव—सखी मदयन्तिका! तुम्हारा स्वागत है। आपने हमारे निवास-स्थान को अनुगृहीत किया है। आप लोग स्वस्थ हों (घबराए नहीं।) हमारा मित्र अकेला हो कर भी जो बहुतेरे लोगों के साथ संघर्ष कर रहा है तो यह मेरे मित्र के लिए मामूली सी बात है।

सिंह के साहसपूर्ण कार्य में, अतुलनीय पराक्रम को प्रकट करने की अभिलाषा एवं प्रीति से युक्त, शब्द करने वाले नखों से विकराल, फटते हुए गण्डस्थल के छिद्रों से गिरते हुए मदजल से सिक्त मुख वाले गजराज के मस्तक में विद्यमान कठोर

स्फुटत्करटकोटरस्खलितदानसिक्ताननद्विपेश्वरशिरःस्थिरास्थिदलनैकवीरः करः ॥७॥

तदहमपि विक्रान्तिपूतं विलसत प्रियसुहृदः प्रत्यनन्तरीभवामि। (विकटं परिक्रम्य कलहंसकेन सह निष्क्रान्तः)

अवलोकितादयः—अपि नामाप्रतिहतौ प्रतिनिवर्तिष्येते महानुभावौ। (अवि णाम अप्पडिहदा पडिणिअट्टिस्सन्दि महाणुहावा)

मालती—सख्यौ बुद्धरक्षितावलोकिते, त्वरितं गत्वा भगवत्या इमं वृत्तान्तं निवेदयतम्। त्वमपि सखि लवङ्गिके, त्वरितं विज्ञापयार्यपुत्रम्। यदि तावद्युष्माकं वयमनुकम्पनीयास्ततोऽप्रमत्तः परिक्रामतेति। (सहिओ बुद्धरक्खिदावलोइदाओ, तुरिअं गदुअ भअवदीए उत्तन्तं णिवेदेहो। तुमं वि सहि लवङ्गिए, तुरिअं विण्णावेहि अज्जउत्तं। जइ दाव तुम्हाणं अम्हे अणुकम्पणीआओ तदो अप्पमत्तं परिक्कमेदुत्ति)

(मालतीमदयन्तिकावर्जं सर्वास्तथेति निष्क्रान्ताः)

मालती—हा धिक्! न ज्ञायते कथमियन्तं वेलातिक्रम्यताम्। भवतु। प्रियसख्या लवङ्गिकायाः प्रतिनिवृत्तिमार्गमवलोकयन्ती स्थास्यामि (परिक्रामति।

हड्डियों को विदीर्ण करने में सब प्रकार से समर्थ अद्वितीय वीरता के लिए प्रसिद्ध उसका हाथ ही सहायक बनता है॥७॥

अत मैं भी पराक्रम से पवित्र होने के कारण सुशोभित अपने प्यारे मित्र के समीप जा रहा हूँ।

(भयकर रूप से पाद विक्षेप करते हुए कलहस के साथ जाता है।)

अवलोकिता आदि—ये दोनों महानुभाव बिना आहत हुए ही वापस लौट आएँ।

मालती—सखी बुद्धरक्षिता एव अवलोकिता! तुम दोनों तुरन्त ही जा कर भगवती कामन्दकी को यह वृत्तान्त बतलाओ। सखी लवगिका! तुम भी शीघ्र ही जा कर आर्यपुत्र से निवेदन करो कि—आपकी यदि हम लोगों पर करुणा है तो बड़ी सावधानी के साथ जाइएगा।

(मालती और मदयन्तिका को वहीं छोड कर और सभी वैसा करने के लिए चली जाती है।)

मालती—हाय धिक्कार है! मैं नहीं जानती कि किस प्रकार इतना समय व्यतीत करूँ? खैर, अपनी प्रिय सखी लवगिका के वापस लौटने का मार्ग देखती

साशङ्कम्) स्फुरितं मे वामनवामनयनेन (उपविशति) (हद्धि ! ण जाणीअदि कहं इयदी वेला अतिक्कमेम। होदु। पिअसहीए लवङ्गिआए पडिणिउत्तिमग्गं आलोअन्ती चिट्ठिस्सम्। फुरिदं मे वामं अवामणअणेन।

(ततः प्रविशति कपालकुण्डला)

कपालकुण्डला—आः पापे, तिष्ठ।

मालती—(सत्रासम्) हा आर्यपुत्र! (इति वाक्स्तम्भं नाटयति) (हा अज्जउत्त!)

कपालकुण्डला—(सक्रोधहासम्) नन्वाक्रन्द, आक्रन्द।

त्वद्वल्लभः क्व नु तपस्विजनस्य हन्ता
कन्याविटः पतिरसौ परिरक्षतु त्वाम्।
श्येनावपातचकितानवर्तिकेव
किं नेक्षसे? ननु मया कवलीकृतासि॥८॥

यावच्छ्रीपर्वतमुपनीय प्रतिपर्वं तिलश एनां निकृत्य दुःखमारिणीं करोमि। (इति मालतीमादाय निष्क्रान्ता)

हुई रहूँगी। (इधर उधर घूमती है। आशंकापूर्वक) मेरी दाहिनी आंख बड़ी बुरी तरह फड़क रही है। (बैठती है।)

(तदनन्तर कपालकुण्डला प्रवेश करती है।)

कपालकुण्डला—अरे पापिन! ठहर।

मालती—(भययुक्त) हा आर्यपुत्र! (ऐसा कह कर वाणी रुक जाने का अभिनय करती है।)

कपालकुण्डला—(क्रोध के साथ हँसती हुई) अरी! बुला, बुला।

तपस्वी (अघोरघण्ट) का हत्यारा तेरा प्रियतम कहां है? कुमारी कन्या को भ्रष्ट करने वाला वह तेरा पति आ कर तेरी रक्षा करे। क्या तुम देख नहीं रही हो कि बाज पक्षी के आक्रमण से भयभीत मुख वाली मादा बटेर की तरह अब मैं तुझे अपना ग्रास बनाती हूँ॥८॥

श्री पर्वत पर ले जा कर इसके जोड़ जोड़ को तिल की तरह काट कर इसके प्राणों को बड़ी पीड़ा से हरण करूँगी।

(ऐसा कह कर मालती को ले कर निकलती है।)

मदयन्तिका—अहमपि मालतीमेवानुवर्तिष्ये। (परिक्रम्य) सखि मालति! (अहं पि मालदीं जेव्व अणुवट्टिस्सं। सहि मालदि!)

लवङ्गिका—(प्रविश्य) सखि मदयन्तिके, लवङ्गिका खल्वहम्। (सहि मदअन्तिए, लवङ्गिआ क्खु अहं)

मदयन्तिका—अयि, संभावितस्त्वया महानुभावः? (अइ, संभाविदो तुए महाणुहाओ?)

लवङ्गिका—नहि नहि। स खलूद्यानवाटनिर्गमादेव कलकलं श्रुत्वा साक्षेपविद्धविकटनिजोरुदण्डनिष्ठुरं प्रधाव्य परानीकं प्रविष्टः। ततः प्रतिनिवृत्तास्मि मन्दभागिनी। शृणोमि च गृहे गृहे गुणानुरागनिर्भरस्य पौरलोकस्य हा माधव! महाभाग हा मकरन्द! साहसिकेति परिदेवनानि। महाराज. किल मन्त्रिदुहितृविप्रलम्भवृत्तान्तं श्रुत्वा सञ्जातमत्सरावेगस्तत्क्षणविसर्जितानेकप्रौढपदातिनिवहश्चन्द्रातपधौतसौधशिखरस्थितः प्रेक्षत इति मन्त्रयते। (णहि णहि। सो क्खु उज्जाणवाडणिग्गमादो जेव्व कलअलं सुणिअ साक्खेववाविद्धविअडणिओरुदण्डणिट्ठुरं पधाविअ पराणीअं पविट्ठो। तदो पडिणिउत्तम्हि मन्दभाइणी। सुणोमि अ घरे घरे गुणाणुराअणिब्भरस्स पोरलोअस्स हा माहव महाभाअ हा मअरन्द साहसिअ त्ति परिदेवणाओ। महाराओ किल मन्तिधीआणं विप्पलम्भवुत्तन्तं सुणिअ संजादमच्छरावेओ तक्खणविसज्जिदाणेअप्पोढपदाइणिवहो चन्दादवधोदसोहसिहरट्ठिदो पेक्खदि त्ति मन्तिअदि)

मदयन्तिका—मैं भी मालती के मार्ग का अनुसरण करूँगी (चलने का नाट्य कर) सखी मालती!

लवंगिका—(प्रवेश करके) सखी मदयन्तिका! मैं तो लवंगिका हूँ।

मदयन्तिका—क्या तुमने महानुभाव माधव को प्राप्त कर लिया था।

लवंगिका—नहीं, नहीं, वह तो उद्यान की चहारदीवारी से निकलकर ही कोलाहल सुनकर क्रोधयुक्त वचन बोलते हुए अपने जघनस्थलों को ताडित करते हुए बड़ी कठोरता के साथ तुरन्त ही शत्रुओं की सेना मे घुस पड़े। अतः मैं मन्दभागिनी वहीं से वापस चली आयी। माधव और मकरन्द के उपकारक गुणों पर रीझे हुए नागरिक वर्गों द्वारा घर घर में—हाय माधव हाय महानुभाव साहसिक मकरन्द—ऐसा होनेवाला रुदन सुनती रही हूँ। और उधर महाराज दोनों मन्त्रियों की कन्याओं द्वारा इस प्रकार की प्रतारणा का वृत्तान्त सुनकर द्वेष और उद्वेग से भर गए हैं। उसी क्षण उन्होंने अपनी बलवान् पैदल सेना को भेजकर स्वयं चन्द्रमा के प्रकाश में सुशोभित अट्टालिका पर बैठकर उनका युद्ध देख रहे हैं। यह बात भी नागरिक लोग बतला रहे हैं।

मदयन्तिका—हा, हतास्मि मन्दभागिनी। (हा, हदम्हि मन्दभाइणी)

लवङ्गिका—सखि, मालती पुनः क्व। (सहि, मालदी उण कहिं)

मदयन्तिका—सखि, सा खलु प्रथममेव ते मार्गमवलोकयितुं प्रसृता। पश्चादहं तां न पश्यामि। सा नामोद्यानगहनं प्रविष्टा भवेत्। (सहि, सा क्खु पढमं जेव्व दे मग्गं ओलोइदुं पसरिदा। पच्चादो अहं तं ण पेक्खामि। सा णाम उज्जाणगहणं पविट्ठा हुवे)

लवङ्गिका—सखि, त्वरितमन्विष्याव। अतिकातरा मे प्रियसख्युपवनस्थिता-स्मिन्नवसरे न धारयत्यात्मानम्। (सहि, तुरिअं अण्णेसम्ह। अदिकातरा मे पिअसही उववणट्ठिदा इमस्सिं अवसरे न धारेदि अत्ताणं)

लवङ्गिकामदयन्तिके—(त्वरितं परिक्रामन्त्यौ) सखि मालति, ननु भणामि सखि मालतीति। (इतस्ततः परिक्रामतः) (सहि मालदि, णं भणामि सहि मालदि त्ति)

कलहंसः—(हृष्टः प्रविश्य) दिष्ट्या कुशलेनास्मि निर्गतः सघट्टमार्गात्। हिमाणहे! पश्यामीव निर्मलनिरन्तरोद्वृत्ततरवारिधाराप्रतिफलितचन्द्रकिरणो-ज्ज्वलपिञ्जरितभीषणदर्शनं मदलीलाकलितकामपालविकटभुजदण्डापविद्ध-हलहेलाविस्तारितोध्र्वक्षुभितकालिन्दतनयालोलतरङ्गनिभ विशृङ्खलोत्पतितनिर्दया-नन्दमकरन्दक्षोभविकलप्रतिरोधप्रतिनिवर्तनोद्धतसमस्तगगनाङ्गणावकाशविकस-

---

मदयन्तिका—अरे मैं मन्दभागिनी मारी गयी।

लवंगिका—सखी! फिर मालती कहाँ है?

मदयन्तिका—सखी! वह पहले ही तुम्हारा मार्ग देखने के लिए यहाँ से चली गयी है? उसके बाद से मैं उन्हें यहाँ नहीं देख रही हूँ। वह कहीं उद्यान के कुंजों में प्रविष्ट हो गयी होगी।

लवंगिका—सखी! हम दोनों उन्हें तुरन्त ही खोजें, क्योंकि अतीव कातर मेरी प्यारी सखी इस उद्यान में रहकर इस विपदा के अवसर पर अपने को सभाल नहीं सकेगी।

लवंगिका और मदयन्तिका—(शीघ्र जाती हुई) सखी मालती! अरे मैं बुला रही हूँ, सखी मालती! (इधर उधर घूमने का नाट्य करती है।)

कलहंस—(प्रसन्नमुद्रा में प्रवेश करके) सौभाग्य से उस संघर्षपूर्ण मार्ग से बचकर सकुशल निकल आया हूँ। कैसा आश्चर्य है। मैं जैसे इस समय भी उस परकीय सैन्य समूह को देख रहा हूँ, जो निरन्तर चलती हुई तलवारों की निर्मल धारा में प्रतिबिम्बित चन्द्रमा की किरणों से देदीप्त और अनेक रंगों से रंगे हुए की

त्कोलाहलं पारप्लवमूहमिदानीमपि पश्यामीव। स्मरामि च भीषणभुजवज्र-र्चितपञ्जरपर्यस्तसमरविमुखसुभटहस्तावलुप्तविविधायुधोपस्थानपरिपूर्णम् - विकटापसारव्यतिरिक्तमार्गसंचारनिर्वर्तितविषमसाहसम् आर्य माधवम्। अहो! गुणानुरागो नरेन्द्रस्य, यदिदानीं सौधशिखरावतीर्णप्रतिहारविनयोपन्यासप्रश-मितविरोधः सौम्यैकरमणीयमाधवमकरन्दयुगलमवलोक्य वारंवारं प्रसारितस्निग्धलोचनः कलहंसकादभिजनं श्रुत्वा निर्वर्तितमहार्घगुरुबहुमानः स्फुरन्मरन्दैश्वर्यविलक्ष्यमपि मालतीगुणो भूरिवसुनन्दनो मधुरोपन्यासैः 'किमिदानीं युवयोरभियतनाभोगभूषणाभ्यां महानुभावाभ्यां नवयौवनगुणाभिरामाभ्यां जामातृभ्यां परितोषं' इति प्रतिबोध्य गतोऽभ्यन्तरं राजा। एतदपि माधवमकरन्दाभ्यामनुगच्छन् इतरहमप्येनं भगवत्यै वृत्तान्तं निवेदयामि। (इति निष्क्रान्तः) (दिट्ठिआ कुसलेण म्हि णिग्गदो संघट्टप्पमादो। हिमाणहे! पेक्खामि विअ णिम्मलणिरन्तरप्पुत्तरवारिधारापडिफलिदचन्दकिरणुज्जु-लन्तविब्भरिअमीतगर्हसगं मअलीलाकलिदकामवालविअडभुअदण्डाबविद्ध-हलहेलाविस्पारिदुद्धवलुभिदकलिन्दतणआसोत्तस्संणिहं विसलुप्पडिदणिह-आणन्दमअरन्दवल्लोभविअलपडिरोधपडिणिउत्तणुट्ठअसमत्थगअणक्कणाअआसवि-

---

तरह भयकर दिखाई पड रहा है। मदिरा के लीला-प्रभाव से उन्मत्त बलराम की विशाल भुजाओं द्वारा प्रयुक्त हल नामक हथियार से अनायास ही ऊपर को उफनने वाली यमुना के जल-प्रवाह की तरह है और स्वच्छन्दतापूर्वक इधर उधर कूदते हुए करुणा तथा आनन्द से रहित निष्ठुर मकरन्द जी के युद्धार्थ पैंतरा भाँजने से प्रतिरोध (सामना) और पलायन करने मे विह्वल होने के कारण सम्पूर्ण गगन-मडल को अतीव कोलाहल से भर रहा है,

और भी मैं बड़े विस्मय के साथ अपने स्वामी माधव का स्मरण कर रहा हू जो भयकर वज्र के समान अपनी भुजाओं (मुक्का) के प्रहार से शत्रु सैनिको के शरीर के अस्थिपञ्जरो को चूर्ण कर रहे थे, जिससे युद्ध से पराङ्मुख होकर भागते हुए उन युद्ध निपुण सैनिक योद्धाओ के हाथो से छीने गये अनेक प्रकार के हथियारो से शत्रु की सेना को मार मारकर बिछा दिया और वह भयकर रूप से पलायन करने लगी, जिससे मार्ग सूना होने लगा और हमारे स्वामी उसमे पैंतरा भाँजते हुए उस युद्धभूमि मे अपना भयानक साहस दिखाने लगे।

महाराज का गुणानुराग आश्चर्यजनक है, जो कि उन्होने ऊपर अटारी से उतरकर द्वारपाल द्वारा विनयपूर्वक बताये जाने पर अपनी सेना के साथ माधव और मकरन्द के विरोध को शान्त करा दिया। और शान्ति तथा प्रेमपूर्वक लाये

असन्दकोलाहलं पारक्कसमूहं दाणि वि पेक्खामि विअ। सुमरामि अ भीसणभुअवज्जखचितपञ्जरपज्जत्थसमरविमुहसुभटहत्थावलुत्तविविहाउहोवरुद्धअसेसरिपुसेण्णविअडावसारवद्दरिक्कमग्गसंचारणिव्वत्तिदविसमसाहसं णाहं माहवम्। अहो गुणाणुराओ णरिन्दस्स, जं दाणि सोधसिहरावदिण्णपडिहारविणओवण्णासपसमिदविरोहो सोम्मेक्करसोवणीदमाहवअरन्दमुहवन्दे ओलोइअ वारंवारं पसारिदसिणिद्धलोअणो कलहंसआदो अहिजणं सुणिअ णिव्वत्तिअमहग्घगुरुबहुमाणो फुरन्तमच्छरेस्साविल्लक्खमसीमलिणिदमुहे भूरिवसुणन्दणे महुरोक्खणासेंहि किं दाणि तुम्हाणं भुवणाभोअभूसणेंहि महाणुहावेंहि णअजोव्वणगुणाभिरामेंहि जामाउएंहि परितोसे त्ति पडिबोधिअ गओ अब्भन्दरं राआ। इमे वि माहवमअरन्दा आअच्छन्दि इति अहं वि एदं भअवदीए वुत्तन्तं णिवेदेमि)

(ततः प्रविशतो माधवमकरन्दौ)

माधव.—अहो, प्रेयसः सर्वपुरुषातिशायि निर्व्याजमूर्जितं तेजः। तथा हि—

दोर्निष्पेषविशीर्णसंवयवदलत्कङ्कालगुल्मध्वनतः
प्राग्वीराननुपात्य तत्प्रहरणान्याच्छिद्य विभ्रमतः।

गये उनके चन्द्रमा के समान मुख को देखकर बारबार स्नेहपूर्ण नेत्रों को फैलाकर मुख कलहंस के द्वारा उनका वंश-परिचय सुनकर उनका अतीव गौरव के साथ प्रचुर सम्मान किया। उस समय भूरिवसु और नन्दन के मुख विद्वेष, असहिष्णुता एवं किंकर्तव्यविमूढता के कारण स्याही से पुते हुए की भांति मलिन हो गये थे। तब उन्हें महाराज ने इस प्रकार की मधुर बातों से आश्वस्त करके अपने भवन के भीतर प्रवेश किया कि—'संसार के अलंकार स्वरूप, नवयौवन एवं (वीरता प्रभृति) सद्गुणों तथा महानुभाविता से अलंकृत इन दोनों जामाता से क्या आप दोनों को परितोष है।' हमारे दोनों प्रभु माधव और मकरन्द जी भी अब वहाँ से वापस लौट रहे है, अतः मैं भी चलकर भगवती कामन्दकी को यह वृत्तान्त बताता हूँ।

(ऐसा कहकर निकलता है।)

(तदनन्तर माधव और मकरन्द प्रवेश करते है।)

माधव—हमारे प्रियतम मित्र मकरन्द का साहस एवं पराक्रम समस्त लोक की अपेक्षा अधिक है और स्वाभाविक है। क्योंकि—

पहले शत्रु-पक्ष के वीरों को एक-एक करके धरती पर पटक दिया और फिर अपनी भुजाओं से दबाकर उनके अस्थि-बन्धनों को शिथिल कर दिया जिससे

उद्वेलद्बहलरुण्डखण्डनिकराकीर्णस्य संख्योदधे-
र्द्वेधास्तम्भितपत्तिरङ्गितविकटः पन्थाः पुरस्तादभूत् ॥९॥

वयस्य, ननु अनुशयस्थानमेतत् । पश्य—

अद्यैवेन्दुमयूखखण्डनिचितं पीतं निशीथोत्सवे
यैर्लीलापरिरम्भदायिदयितागण्डूषशेषं मधु ।
संप्रत्येव भवद्भुजार्गलगुरुव्यापारभग्नास्थिभि-
र्गात्रैस्ते कथयन्त्यसारभिदुरान्प्रायेण संसारिणः ॥१०॥

स्मर्तव्यं तु नरपतेरस्य सौजन्यम्। यदपराद्धयोरप्यनपराद्धयोरिव नौ कृतोपसदनं चेष्टितवान् । तदेहि, मालतीसमक्षमधुना मदयन्तिकाहरणवृत्तान्तं विस्तरतः कथ्यमानमनुभवाम । (पुरोऽवलोक्य) कथं शून्या इवामी प्रदेशाः ?

उनकी हड्डियां पसलियां बाहर निकल आयीं। इस प्रकार उनको छिन्न-भिन्नकर उनके हथियारों को छीन कर जब अपने पराक्रम को प्रकट किया तब उस युद्ध रूप समुद्र में तैरते हुए घने रुण्ड-समूह शब्द करते हुए चारों ओर व्याप्त हो गये और पैदल सैनिकों की पंक्तियां दो भागों में बटकर भय और विस्मय में डूब गयी और उसके सामने भयकर मार्ग प्रकट हो गया ॥९॥

मित्र ! यह तो पश्चात्ताप करने का स्थान है। देखो न—

आज ही आधी रात के मदनोत्सव में जिन योद्धाओं ने चन्द्रमा की किरणों से व्याप्त, लीला एवं विलासपूर्वक आलिंगन प्रदान करने वाली अपनी-अपनी प्रियतमा के गण्डूष (मुखपूरण, कुल्ला) में शेष मदिरा का पान किया था, वे भी (बेचारे) अभी अभी आपकी अर्गला के समान विकट भुजाओं के गंभीर प्रहार से टूटी-फूटी हड्डियों से पीडित अपने शरीरों द्वारा संसारी जनों को प्रायः संसार की असारता एवं विनश्वरता की सूचना दे रहे हैं ॥१०॥

इन महाराज की सुजनता तो स्मरण करने योग्य है। जो अपराध करनेवाले हम लोगों के ऊपर निरपराध लोगों की भांति अपने समीप लाकर बिठाया और हमसे सभाषण आदि की चेष्टा की। अतः अब चलो, और अब मालती के सामने मदयन्तिका के हरण का वृत्तान्त विस्तारपूर्वक कहते हुए उसे सुनने का सुख अनुभव करें। (आगे की ओर देखकर) अरे ! क्यों यह स्थान सूना सूना-सा (दिखाई पड रहा है।)

मकरन्दः—नूनं शङ्के आवयोः समरसंकटोद्वेगेन व्याकुलत्वादितस्ततो भ्रमन्त्यस्ता अत्रैवारमानं विनोदयन्ति।

माधवः—

कथयति त्वयि सस्मितमालतीचलितलोलकटाक्षपराहतम्।
वदनपङ्कजमुल्लसितत्रपं स्तिमितदृष्टि सखी नमयिष्यति ॥११॥

अयमसावुद्यानवाटः।

(प्रवेशं नाटयतः)

लवङ्गिकामदयन्तिके—सखि मालति, (सहसा विलोक्य सहर्षम्) दिष्ट्या पुनरपि च तौ महानुभावौ दृश्येते। (सहि मालदि, दिट्ठिआ पुणो वि अ ते महाणुहावा दिस्सन्दि)

माधवमकरन्दौ—भवत्यौ, क्व सा मालती?

उभे—कुतो मालती? पदशब्देनावां विप्रलब्धे मन्दभागिन्यौ। (कुदो मालदी। पदसद्देन अम्हे विप्पलद्धाओ मन्दभाइणीओ)

माधवः—भवत्यौ, कथं कथमपि सहस्रधेव ध्वसते मे हृदयम्। तत स्फुटमभिधीयताम्।

मकरन्द—मैं मन मे ऐसा सोचता हू कि हम दोनो के युद्ध-सकट मे फस जाने के उद्वेग से व्याकुल होकर वे इधर-उधर घूम फिरकर यही पर कही अपने मन को बहला रही है।

माधव—तुम्हारे द्वारा युद्ध का वृत्तान्त जब बताया जाने लगेगा तब मालती थोड़ा-थोड़ा हँसती हुई अपनी सखी मदयन्तिका के मुख-कमल के ऊपर चचल कटाक्ष पात करने लगेगी और उस समय मदयन्तिका लज्जा से सकुचित एव निश्चल नेत्रों से सुशोभित उसके मुख कमल को अवनत करने लगेगी ॥११॥
यह तो वही उद्यान का प्राचीर है।

(प्रवेश का नाट्य करते हुए)

लवंगिका और मदयन्तिका—सखी मालती! (सहसा देखकर सहर्ष) सौभाग्य से वे दोनो महानुभाव फिर दिखाई पड रहे है।

माधव और मकरन्द—आप लोग बताए, मालती कहां है?

दोनो—मालती कहाँ कहां है? हम दोनो मन्दभागिनी हैं, हम तो आप दोनों के चरणो की आवाज से प्रतारित हुई हैं।

माधव—भद्रे! अनिर्वचनीय रूप से सहस्रो प्रकार से मेरा यह हृदय वि[illegible] हो रहा है। अतः साफ-साफ बताइए।

मम हि कुवलयाक्ष्याः प्रत्यनिष्टैकबुद्धे-
रविरतमनुबद्धोत्कम्प एवान्तरात्मा।
स्फुरति च खलु चक्षुर्वाममेतच्च कष्टं
वचनमपि भवत्योः सर्वथा हा! हतोऽस्मि ॥१२॥

मदयन्तिका—तया खलित्वतो विनिर्गते महानुभावे बुद्धरक्षितामवलोकिता च भगवतीसकाशं विसृज्य 'अप्रमादनिमित्तं विज्ञापयार्यपुत्रम्' इति लवङ्गिकानुप्रेषिता। तत उत्ताम्यमाना चैतस्या मार्गमवलोकयितुमग्रतः प्रसृता मालती। पश्चादहम्। ततो न पश्यामि। ततोऽस्माभिर्मार्गिताम्य विटपान्तराणि यावद्युवां दृष्टाविति। (तह खखु इदो विणिग्गदे महाणुहावे बुद्धरक्खिदं अवलोइदं भअवदीसआसं विसज्जिअ अप्पमादणिमित्तं विण्णवेहि अज्जउत्तं त्ति लवङ्गिआ अणुप्पेसिदा। तदो उत्तम्ममाणा अ एदाए मग्गं ओलोइदुं अग्गदो पसरिदा मालदी। पच्चादो अहं। तदो पेक्खामि। तदो अम्हेहिं मग्गिदा एत्थ विडवन्दराइं जाव तुम्हे दिट्ठत्ति)

माधवः—हा प्रिये मालति!

किमपि किमपि शङ्के मङ्गलेभ्यो यदन्य-
द्विरमतु परिहासश्चण्डि! पर्युत्सुकोऽस्मि।

क्योंकि कमलनयना मालती के अनिष्ट की आशंका करनेवाला मेरा यह हृदय (अन्तःकरण) लगातार कांप रहा है और मेरी बाईं आंख भी फड़क रही है। आप दोनों का यह वचन भी कि मालती यहां कहां है—अतीव दुःखदायी है। अब तो सब प्रकार से मैं मारा गया हूं। हाय! ॥१२॥

मदयन्तिका—उस समय आप लोग जब वहां से उस तरफ निकल गये तब मालती ने बुद्धरक्षिता और अवलोकिता को भगवती कामन्दकी के समीप भेजकर, लवंगिका को भी—सावधानी के साथ रहने के लिए आर्यपुत्र को जाकर बताओ—यह कहकर आपके समीप भेज दिया। तदनन्तर उत्कंठित होती हुई मालती उस (लवंगिका का) मार्ग देखती हुई आगे की ओर बढ़ चली और मैं उसके पीछे पीछे चल पड़ी। उसके बाद से ही मैं उसे नहीं देख रही हूं। तब से हम इन वृक्षों की शाखाओं और कुंजों में सर्वत्र मालती को ढूंढ रही हैं कि इसी बीच आप दोनों दिखायी पड़ गए हैं।

माधव—हाय प्रिये मालती!

हे चण्डि! मैं ऐसे अमंगल की आशंका कर रहा हूं जो कहने योग्य नहीं भी है। तुम अपना परिहास दूर करो क्योंकि मैं उत्कण्ठित हूं। यदि तुम हमारी परीक्षा

फलयसि ? फलितोऽहं वल्लभे ! देहि वाचं
भ्रमति हृदयमन्तर्विह्वलं निर्दयासि ॥१३॥

उभे—हा प्रियसखि, कुत्र गतासि? (हा पिअसहि, कहिं गआसि?)

मकरन्दः—वयस्य, किमित्यविज्ञाय वैक्लव्यमवलम्ब्यते।

माधवः—सखे, त्वमपि किं न जानासि मत्स्नेहदुःखितायास्तस्याः कातर्यचेष्टितानि?

मकरन्दः—अस्त्येतत्। किन्तु भगवतीपादमूलगमनमप्याशङ्क्यते। तदेहि। तत्र तावद्गच्छावः।

उभे—एतदपि संभाव्यते। (एदं वि संभावीअदि)

माधवः—एवमस्तु नाम। (इति परिक्रामति)

मकरन्दः—(स्वगतम्)

याता भवेद्भगवतीभवनं सखी सा
जीवन्त्ययैष्यति न वेत्यभिशङ्कितोऽस्मि।

लेना चाहती हो तो (यह भी उचित नहीं है, क्योंकि) पहले ही हमारी परीक्षा ले चुकी हो। हे प्रिये! मेरी बातों का उत्तर दो। मेरा व्याकुल चित्त भीतर ही भीतर बहुत अधीर हो रहा है। तुम बड़ी निर्मम हो॥१३॥

दोनों (सखियां लवंगिका और मदयन्तिका)—हाय! प्रिय सखी! तुम कहाँ गयीं?

मकरन्द—मित्र! कुछ विशेष रूप से बिना जाने हुए ही क्यों विह्वल हो रहे थे?

माधव—सखे! क्या तुम भी मेरे स्नेह से दुःखी मालती की कातरतापूर्ण चेष्टाओं को नहीं जानते हो?

मकरन्द—यह बात ठीक है। किन्तु भगवती कामन्दकी के चरणों के समीप जाने की भी आशंका की जा सकती है। तो आओ, वहीं हम दोनों चलें।

दोनों—(लवंगिका और मदयन्तिका)—यह भी संभव है।

माधव—ऐसा ही करो। (ऐसा कहकर चलने का नाट्य करता है)।

मकरन्द—(अपने आप) (संभव है) हमारी वह सखी (मालती) भगवती कामन्दकी के निवासस्थान को गयी होगी? (यदि ऐसा नहीं है तो) वह जीती जागती आयगी या नहीं—इस विषय में मैं आशंकित हूँ। बान्धवजन, मित्र एवं

प्रायेण बान्धवसुहृत्प्रियसंगमादि
सौदामिनीस्फुरणचञ्चलमेव सौख्यम् ॥१४॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवेऽष्टमोऽङ्कः।

अभीष्टजन इन सब के समागम आदि का सुख प्रायः बिजली की चमक के समान (क्षणभंगुर) होता है॥१४॥

(तदनन्तर सब लोग निकलते हैं।)

महाकवि श्रीभवभूति-रचित मालतीमाधव नाटक में
मालती-अपहरण नामक आठवां अंक समाप्त।

१२

नवमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति सौदामिनी)

सौदामिनी—एषास्मि सौदामिनी। भगवतः श्रीपर्वतादुपेत्य पद्मावतीं तत्र मालतीविरहिणो माधवस्य मन्मुनप्रदेशदर्शनामहिष्णो मन्स्थाय परित्यज्य सह सुहृद्वर्गेण वृहद्द्रोणीशैलकान्तारप्रदेशमुपश्रुत्याधुना तदन्तिकं प्रयामि। भोः! तथाहमुत्पतिता यथा सकल एव गिरिनगरग्रामसरिदरण्यव्यतिकरश्चक्षुषा परिच्छिद्यते। (पश्चादवलोक्य) साधु साधु।

पद्मावती विमलवारिविशालसिन्धु-
पारासरित्परिकरच्छलतो बिभर्ति।
उत्तुङ्गसौधसुरमन्दिरगोपुराट्ट-
संघट्टपाटितविमुक्तमिवान्तरिक्षम् ॥१॥

अपि च—

सैषा विभाति लवणा वलितोर्मिपङ्क्ति-
रम्यागमे जनपदप्रमवाय यस्याः।

नवाँ अंक

(तदनन्तर सौदामिनी प्रवेश करती है।)

सौदामिनी—यह मैं सौदामिनी हूँ। ऐश्वर्य एवं महिमा से भरे पूरे श्रीपर्वत से उड़कर आयी हुई हूँ और पद्मावती राजधानी में पहुँची हूँ। मालती के विरह में दुखी माधव अपने पूर्वपरिचित भवन को देखने में असमर्थ होकर उसे त्याग कर अपने मकरन्द आदि मित्रों के साथ अब बड़ी-बड़ी नदी, पर्वत एवं दुर्गम मार्गों से परिपूर्ण स्थानों पर परिभ्रमण कर रहा है। तो मैं उसके समीप जा रही हूँ। अरे! मैं इस प्रकार से उड़ी हूं जिससे पर्वत, नगर, ग्राम, नदी, एवं जंगल समूह सबको अपने नेत्रों से साफ-साफ देख रही हूं। (पीछे की ओर देखकर) सुन्दर, सुन्दर—

यह पद्मावती नगरी निर्मलजलवाली सिन्धु और पारा नामक दो नदियों को चारों ओर से लपेट कर धारण करने के बहाने से, अतीव ऊंचे राजभवनों, देवमन्दिरों गोपुरों एवं अट्टालिकाओं के घर्षण से पहले विदीर्ण और पीछे छोड़े गए आकाश-मण्डल को जैसे धारण कर रही हो॥१॥

और भी, किनारों से ऊपर आनेवाली तरंगमालाओं से सुशोभित यह वही लवणा नामक नदी है, जिसके तट पर सुखपूर्वक सेवनीय वनपंक्ति, वर्षा के समय

गोगर्भिणीप्रियनवोलपमालभारि-
सेव्योपकण्ठविपिनावलयो विभान्ति ॥२॥

(अन्यतो विलोक्य) स एष भगवत्याः सिन्धोर्दारितरसातलस्तटप्रपातः।

यत्रत्य एष तुमुलध्वनिरम्बुगर्भ-
गम्भीरनूतनघनस्तनितप्रचण्डः ।
पर्यन्तभूधरनिकुञ्जविजृम्भणेन
हेरम्बकण्ठरसितप्रतिमानमेति ॥३॥

एताश्चन्दनाश्वकर्णसरलपाटलाप्रायवनगहना परिणतमालूरसुरभयोऽरण्यगिरिभूमयः स्मारयन्ति सघनकदम्बजम्बूवनावबद्धान्धकारगुरुगिरिनिकुञ्जगुञ्जद्गम्भीरगद्गदोद्गारघोरघोषणगोदावरीमुखरितविशालमेखलाभुवो दक्षिणारण्यभूधरान् । अयं च मधुमतीसिन्धुसंभेदपावनो भगवान्भवानीपतिरपौरुषेयप्रतिष्ठः सुवर्णबिन्दुरित्याख्यायते। (प्रणम्य)

देशवासियों के हर्ष के लिए, गर्भवती गौओं आदि के लिए प्रियवर एवं नूतन तृण-समूहों को धारण कर सुशोभित हो रही है॥२॥

(दूसरी ओर देखकर) यह वही महिमामयी सिन्धु नामक नदी का पाताल को विदारित करनेवाला तट-प्रपात (झरना) है।

जल से भरे हुए गंभीर शब्द करनेवाले नूतन मेघों की गर्जना के समान तीव्र जिस तट-प्रपात में समुत्पन्न यह, तुमुलध्वनि तटवर्ती प्रान्तों में अवस्थित पर्वतों के निकुंजों में (प्रतिध्वनित करने के कारण) वृद्धि प्राप्त कर गणेश जी की गल-गर्जना की समानता प्राप्त कर रही है॥३॥

इस वन एवं पर्वतयुक्त स्थान में प्रायः चन्दन, अश्वकर्ण (सर्ज) सरल, पाटल आदि के वृक्ष मौजूद हैं। जिनसे यह दुर्गम हो गया है। पके हुए बेल के फल इसे सुगन्धियुक्त बना रहे हैं। ये दक्षिण देश के उन वनों एवं पर्वतों का स्मरण करा रहे है, जो नूतन कदम्ब एवं जामुन के सघन वनों से उत्पन्न गाढ़े अन्धकार से पूर्ण निकुंजों में शब्द करनेवाली एवं गंभीर गुफाओं से उठते (प्रतिध्वनित) हुए गोदावरी नदी के शब्दों से युक्त विस्तृत पर्वत के नितम्ब (घाटी) प्रदेशों में अवस्थित हैं। मधुमती नदी एवं सिन्धुनदी के सगमस्थान को पवित्र करनेवाले, स्वतः सिद्ध स्थिति वाले भगवान महादेव सुवर्णबिन्दु के नाम से सुप्रसिद्ध हैं। (प्रणाम करके)

हे देव! आपकी जय हो, हे जगत् के सृष्टिकर्त्ता। हे महान् महिमामय! हे सब को वरदान देनेवाले! हे शास्त्रों के आधार! हे मनोहर चन्द्रमा को

जय देव भुवनभावन जय भगवन्नखिलवरद निगमनिधे।
जय रुचिरचन्द्रशेखर जय मदनान्तक जयादिगुरो॥४॥

(गमनमभिनीय)

अयमभिनवमेघश्यामलोत्तुङ्गसानु-
र्मदमुखरमयूरीमुक्तसंसक्तकेकः ।
शकुनिशबलनीडानोकहस्निग्धवर्ष्मा
वितरति बृहदश्मा पर्वतः प्रीतिमक्ष्णोः॥५॥
दधति कुहरभाजामत्र भल्लूकयूना-
मनुरसितगुरूणि स्त्यानमम्बूकृतानि।
शिशिरकटुकषायः स्त्यायते सल्लकीना-
मिभदलितविकीर्णग्रन्थिनिष्यन्दगन्धः ॥६॥

(ऊर्ध्वमवलोक्य) अये, कथं मध्याह्नः। तथा हि संप्रति—

शिखर पर धारण करनेवाले! हे कामरिपु! आपकी जय हो। हे आदि गुरो! आप की जय हो॥४॥

(आकाश में उडने का अभिनय करते हुए)

जिसकी घाटी में अवस्थित समतल प्रदेश नूतन मेघों से श्यामल वर्ण के हैं, मदमाती मोरनियों के निरन्तर होने वाले केका शब्दों से गुंजायमान है, पक्षियों के रंग-बिरंगे विचित्र घोंसलो वाले वृक्षों से चिकने शरीरवाला है, और जिसमें बड़े-बड़े पाषाणखण्ड बिखरे हुए हैं, ऐसा यह पर्वत हमारे दोनों नेत्रों में प्रीति को वितरण कर रहा है॥५॥

इस पर्वत की गुफाओं के भीतर अवस्थित तरुण भालुओं के थूकने का शब्द, प्रतिध्वनित होकर अतीव विस्तार को प्राप्त हो रहा है एवं इस पर्वत में रहनेवाले हाथियों के समूह द्वारा मल्लकी (कुटुन्) लताओं की गाठें सर्वत्र तोडफोड कर इधर-उधर बिखेर दी गयी हैं, जिनसे शीतल कड़वी एवं मन को मोहनेवाली रस-सुगन्धि चारों ओर फैल रही है॥६॥

(ऊपर की ओर देखकर) अरे! क्या दोपहर हो गया? क्योंकि इस समय तो —

कास्मर्याः कृतमालमुद्गतदलं कोयष्टिकष्टीकते
तीरान्तनिविष्टचञ्चुडितमुखा धावन्त्यपः पूर्णिकाः।
दात्यूहैस्तिनिशस्य कोटरवति स्कन्धे निलीय स्थितं
वीरुन्नीडकपोतकूजितमनुक्रन्दन्त्यधः कुक्कुभाः॥७॥

तद्भवतु। माधवमकरन्दावन्विष्य यथाप्रस्तुतं साधयामि। (इति निष्क्रान्तः)

शुद्धविष्कम्भः

(ततः प्रविशति माधवो मकरन्दश्च)

मकरन्दः—(सकरुणं निःश्वस्य)

न यत्र प्रत्याशामनुपतति नो वा रहयति
प्रतिक्षिप्तं चेतः प्रविशति च मोहान्धतमसम्।

टिटिहरी गम्भारी के वृक्ष से उड़कर नूतन पत्तों से सुशोभित (सघन छायादार) कृतमाल वृक्ष के ऊपर अथवा सघन छायादार वृक्षों की पंक्तियों वाले प्रदेश में चली जा रही है। किनारे के प्रदेश में विद्यमान गाडर नामक घास के अग्र भागों में खाने के लिए मुंह लगाने वाली पनई नामक चिड़िया जल के समीप भागी जा रही है। कालकण्ठक नामक पक्षी तिनिश वृक्ष के कोटरयुक्त स्कन्ध (तने) में छिपकर बैठा है। गावों में रहनेवाले गौरैया नामक पक्षी के समान आकार-प्रकार वाले कुक्कुम नाम के पक्षी नीचे, फैलनेवाली लताओं में बैठे हुए घोंसलों में रहनेवाले कबूतरों की आवाज की नकल कर रहे हैं॥७॥

खैर, यह सब तो होता ही रहेगा। माधव और मकरन्द को ढूढकर प्रस्तावित विषय को सम्पन्न करूंगा।

(ऐसा कहकर निकलता है)।

(शुद्ध विष्कम्भक समाप्त)

(तदनन्तर माधव और मकरन्द प्रवेश करते है।)

मकरन्द—(करुणा के साथ गहरी सांस लेकर)

हम लोगों का चित्त जिस विपत्ति में मालती को प्राप्त करने की आशा नहीं करता और न उस आशा को त्यागना ही है, केवल अज्ञान रूप अन्धकार में प्रवेश

अकिञ्चित्कुर्वाणाः पशव इव तस्यां वयमहो
विधातुर्वामत्वाद्विपदि परिवर्तामह इमे ॥८॥

माधवः—हा प्रिये, मालति, क्वासि । कथमविज्ञाततत्त्वमद्भुततमं दशान्तरं पर्यवसितासि । निरनुक्रोशे, प्रसीद । सम्भावय माम् ।

प्रियमाधवे ! किमसि मय्यवत्सला
ननु सोऽहमेव यमनन्दयत्पुरा ।
स्वयमागृहीतकमनीयकङ्कण-
स्तव मूर्तिमानिव महोत्सवः करः ॥९॥

वयस्य मकरन्द, दुर्लभः खलु जगति तावतः स्नेहस्य सम्भवः ।

सरसकुसुमप्रायैरङ्गैरनङ्गमहाज्वर-
श्चिरमविरतोन्माथी सोढः प्रतिक्षणदारुणः ।
तृणमिव ततः प्राणत्यागे मनो विधृतं तया
किमपरमतो निर्व्यूढं यत्करार्पणसाहसम् ॥१०॥

करना है। हाय ! हम लोग भाग्य की प्रतिकूलता से पशुओं की भाँति कुछ भी नहीं कर पा रहे हैं, और विपत्ति भोग रहे हैं। यह आश्चर्य की बात है ॥८॥

माधव—हाय प्रिये मालती ! कहाँ हो तुम ? जिसका कुछ पता नहीं लग पा रहा है, ऐसी आश्चर्य भरी परिस्थिति मे तुम झटपट कैसे बदल गयी हो ? अरी निर्दये ! प्रसन्न हो। मुझे संभालो।

हे माधव से प्रेम करनेवाली ! तुम मेरे ऊपर इस प्रकार प्रणय विहीन कैसे हो गयी हो ! अरी ! मैं तो वही हू, जिसे पहले मनोहर कंकणधारी मूर्तिमान् महोत्सव के समान तुम्हारे हाथ ने स्वयं आनन्दित किया था ॥९॥

मित्र मकरन्द ! इस संसार में अब उस प्रकार के महान् स्नेह की संभावना नहीं रह गयी है।

उस (प्रियतमा मालती) ने आर्द्र पुष्पों के समान अपने दुबले-पतले अंगों से निरन्तर दुःखदायी एवं प्रतिक्षण भयंकर काम-सन्ताप रूप महान् ज्वर को चिरकाल तक सहन किया। तदनन्तर तिनके के समान अपने प्राणों को त्यागने के लिए मन को स्थिर किया। और इसके बाद उसने (मेरे समीप) पाणिग्रहण करने का जो निश्चय किया, इससे भिन्न (उसके अनुराग के उत्कर्ष के लिए) और क्या बताऊँ ? ॥१०॥

अपि च—

मयि विगलितप्रत्याशत्वाद्विवाहविधेः पुरा
विकलकरणैर्मर्मच्छेदव्यथाविधुरैरिव ।
स्मरसि रुदितैः स्नेहाकूतं तयाप्यतनोदसा-
वहमपि यथाभूवं पीडातरङ्गितमानसः ॥११॥

(सावेगम्) अहो नु खलु भोः !

दलति हृदयं गाढोद्वेगं, द्विधा तु न भिद्यते
वहति विकलः कायो मोहं, न मुञ्चति चेतनाम् ।
ज्वलयति तनूमन्तर्दाहः, करोति न भस्मसा-
त्प्रहरति विधिर्मर्मच्छेदी, न कृन्तति जीवितम् ॥१२॥

मकरन्दः—निरवग्रहो दहति दैवमिव दारुणो विवस्वान् । इयं च ते शरीरावस्था । तदस्य पद्मसरसः परिसरे मुहूर्तमास्यताम् । अत्र हि—

उन्नालबालकमलाकरमाकरन्द-
निष्यन्दसंवलितमांसलगन्धबन्धुः ।

और भी, हे मित्र ! नन्दन के साथ विवाह विधि के पूर्व मुझे प्राप्त करने की आशा न रह जाने पर, मर्मच्छेदी पीडा से विह्वल-सी होकर उसकी इन्द्रियाँ विकल हो गयी। तब मालती ने रुदन के द्वारा (मेरे प्रति) अपने मन की प्रगाढ अनुराग-भावना को प्रकट किया, जिससे मैं भी पीडा से चपल चित्तवाला हो गया था—क्या इस घटना को तुम स्मरण करते हो ॥११॥

(आवेगपूर्वक) आश्चर्य की बात है। अरे !

प्रचण्ड व्याकुलता से युक्त यह मेरा हृदय विदीर्ण हो रहा है। किन्तु दो टुकड़ों में विभक्त नहीं हो रहा है। शोक से विह्वल शरीर अज्ञान (मूर्च्छा) को धारण कर रहा है, किन्तु चेतना को नहीं त्याग रहा है। मन का सन्ताप शरीर को जला रहा है, किन्तु एक बार भस्म नहीं कर दे रहा है, इसी प्रकार मर्मच्छेदन करने वाला विधाता अथवा भाग्य प्रहार तो कर रहा है, किन्तु जीवन को नष्ट नहीं कर रहा है ॥१२॥

मकरन्द—दुर्निवार भाग्य की तरह भयकर सूर्य भी जला रहा है। और यह तुम्हारे शरीर की अवस्था है। तो इस पद्मसरोवर के तट पर कुछ क्षणों के लिए बैठ जाओ। क्योंकि यहाँ पर—

त्वां प्राणयिष्यति पुरः परिवर्तमान-
कल्लोलशीकरतुषारजडः समीरः ॥१३॥

(परिक्रम्योपविशतः)

मकरन्दः—(स्वगतम्) भवतु । एवं तावदाक्षिपामि। (प्रकाशम्) वयस्य माधव!

एतस्मिन्मदकलमल्लिकाक्षपक्ष-
व्याधूतस्फुरदुरुदण्डपुण्डरीकाः ।
बाष्पाम्भःपरिपतनोद्गमान्तराले
दृश्यन्तामविरहितश्रियो विभागाः ॥१४॥

(माधवः सोद्वेगमुत्तिष्ठति)

मकरन्दः—कथं निष्प्रतिपत्तिशून्यमुत्थायान्यतः प्रवृत्तः । (निःश्वस्योत्थाय) सखे, प्रसीद । पश्य—

वानीरप्रसवैर्निकुञ्जसरितामासक्तवासं पयः
पर्यन्तेषु च यूथिकासुमनसामुज्जृम्भितं जालकैः।

ऊपर उठे हुए मृणालों वाले नूतन कमलों के मकरन्दों के क्षरण से मिश्रित, सुपुष्ट सुगन्ध के बन्धुस्वरूप एवं सम्मुख में चलने वाली विशाल तरंगों के तुषार तुल्य शीतल शीकरों से शीतल वायु तुम्हारी थकावट को दूर कर सन्तोष देगा ॥१३॥

(कुछ दूर चलने का नाट्य करते हुए दोनों बैठते हैं।)

मकरन्द—(अपने आप) खैर, मैं इनके चित्त को दूसरे विषयों में लगाता हूँ। (प्रकट रूप में) मित्र माधव! आंखों में से अश्रुजल के गिरने और पुनः निकलने के मध्य समय में इस सरोवर में मद से मधुर ध्वनि करने वाले मल्लिकाक्ष नामक विशेष हंसों के पंखों से काँपते हुए और सुशोभित बड़े बड़े मृणालों वाले श्वेत कमलों से समन्वित अतएव शोभा-सम्पन्न (इन) प्रदेशों को देखो ॥१४॥

(माधव उद्वेग के साथ उठता है।)

मकरन्द—हमारी बातों को बिना कुछ सुने-समझे ही यह उठ कर क्यों दूसरी ओर जाने को प्रवृत्त हो रहे हैं (गहरी साँस ले कर, उठ कर) मित्र! प्रसन्न हो। देखो—

निकुंजों के समीप नदी का जल बेंत के पुष्पों की सुगन्ध से युक्त है, नदी के किनारों पर जूही के पुष्पों की नई नई कलियाँ विकसित हो रही हैं। यहाँ पर

उन्मीलत्कुटजप्रहासिषु गिरेरालम्ब्य सानूनितः
प्राग्भागेषु शिखण्डिताण्डवविधौ मेघैर्वितानाय्यते ॥१५॥

अपि च—

जृम्भाजर्जरडिम्बडम्बरघनश्रीमत्कदम्बद्रुमाः
शैलाभोगभुवो भवन्ति ककुभः कादम्बिनीश्यामलाः।
उद्यत्कन्दलकान्तकेतकभृतः कच्छाः सरित्स्रोतसा-
मासर्गन्धिशिलीन्ध्रलोध्रकुसुमस्मेरा वनानां ततिः ॥१६॥

माधवः—सखे, पश्यामि। किंतु दुरालोकरमणीया सम्प्रत्यरण्यगिरिस्थलभूमयः। तत्किमेतत्। (सास्रम्) अथवा किमन्यत्।

उत्फुल्लार्जुनसर्जवासितवहत्पौरस्त्यझञ्झामरु-
त्प्रेङ्खोलत्स्खलितेन्द्रनीलशकलस्निग्धाम्बुदश्रेणयः।
धारासिक्तवसुंधरासुरभयः प्राप्तास्त एवाधुना
घर्माम्भोविगमागमव्यतिकरश्रीवाहिनो वासराः ॥१७॥

विकसित गिरिमल्लिका के पुष्पों से सुशोभित पर्वत के शिखरों पर समतल प्रदेशों का आश्रय ले कर मेघ-वृन्द मयूरों के नृत्यों में वितानों की तरह आचरण कर रहे है ॥१५॥

और भी, पर्वतों के निकटवर्ती विस्तृत भूभाग पर बहुधा कदम्ब के वृक्ष हैं, उनके पुष्पों की गोली गोली कलियाँ विकसित हो गयी है, उनकी पखुडियाँ परस्पर मिल-सी गयी हैं, इस प्रकार उन भूभागों की इन कदम्ब वृक्षो के द्वारा अतीव शोभा हो रही है। मेघ-मालाओ से दिशाएँ श्यामल वर्ण की हो गयी है। नदी-प्रवाह के निकटवर्ती जलप्राय प्रदेशों मे बहुतेरे केतकी के वृक्ष हैं, जिनके मूल भागो मे नूतन अकुर उत्पन्न हो गये है जो बहुत ही सुन्दर लग रहे है एव वनो की पक्ति सुगन्धयुक्त कन्दली और लोध्र के पुष्पों से मन्द-मन्द मुस्कराती हुई-सी दिखाई पड रही है ॥१६॥

माधव—मित्र ! मैं देख रहा हूँ किन्तु यह वनभूमि मनोहारिणी होते हुए भी इस समय हमारे लिए बड़ी कठिनाई से देखने योग्य बन गयी है। अत. यह सब क्या है? (आँसू बहाते हुए) अथवा और क्या होगा ?

इस समय खिले हुए अर्जुन एव साल वृक्षों के पुष्पो से सुगन्धित बहते हुए पूर्व दिशा के प्रचण्ड वायु द्वारा अपने स्थानों से चलते हुए, इन्द्र नील मणि (नीलम) के टुकडों के समान स्निग्ध मेघमालाओ से भरे हुए, वृष्टि की जलधारा से सिंचित धरती की सुगन्ध से आमोदित, ग्रीष्म ऋतु के अवसान एव वर्षा ऋतु के आगमन के सम्मिश्रण से अतीव शोभा धारण करने वाले वे दिन आ गये है ॥१७॥

हा प्रिये मालति।

तरुणतमालनीलबहुलोन्नमदम्बुधराः
शिशिरसमीरणावधुतनूतनवारिकणाः।
कथमवलोकयेयमधुना हरिहेतिमती-
मदकलनीलकण्ठकलहैर्मुखराः ककुभः॥१८॥

(निःश्वस्य शोकार्तिं नाटयति)

मकरन्दः—कोऽप्यतिदारुणो दशाविपाको वयस्यस्य सम्प्रति वर्तते। (सास्रम्) मया पुनरज्ञानेन वज्रमयेन किल विनोदः प्रारब्धः। (निःश्वस्य) एवं च पर्यवसित-प्रायैव नो माधवप्रत्याशा। (सभयं विलोक्य) कथं प्रमुग्ध एव। हा सखि, मालति, किमपरम्। निरनुक्रोशासि।

अपहस्तितबान्धवे! त्वया विहितं साहसमस्य तृष्णया।
तदिहानपराधिनि प्रिये सखि कोऽयं करुणोज्झितः क्रमः॥१९॥

हाय प्रिये मालती! नूतन तमाल वृक्षों के समान नीले वर्णवाले बहुतेरे उचाई पर छाये हुए मेघों से युक्त, शीतल वायु द्वारा विकम्पित अथवा लाए गए नूतन जलकणों से युक्त, इन्द्र धनुष से सुशोभित, मतवाले अव्यक्त मधुर ध्वनि करने वाले मयूरों के कोलाहल से गूंजती हुई इन दिशाओं को इस समय मैं किस प्रकार देख सकूंगा॥१८॥

(गहरी सांस लेकर शोक की विह्वलता प्रकट करने का अभिनय करता है।)

मकरन्द—वर्तमान समय में हमारे मित्र पर कोई अनिर्वचनीय एवं अतीव भयंकर अवस्था का परिवर्तन उपस्थित हो गया है। (आंसू बहाते हुए) मैं सचमुच ज्ञानविहीन एवं वज्र के समान निर्मम हूँ। जो उनसे विनोद की बातें आरम्भ कर दी थी। (गहरी सांस ले कर) इस प्रकार माधव के जीवित रहने की आशा प्रायः लुप्त सी होने जा रही है (भयपूर्वक माधव को देख कर) अरे! क्या मूर्च्छित हो गये हैं? हाय सखी मालती! और क्या कहूँ? तुम निर्मम बन गयी हो।

माधव के साथ प्रेम करने में अपने बन्धु-बान्धवों की परवाह न करने वाली! तुमने माधव की प्राप्ति के लोभ से बड़ा साहसपूर्ण काम किया है। अतएव हे सखी! अब अपने बिना किसी अपराध वाले (उस) प्रियतम के प्रति तुम्हारा यह निर्दयतापूर्ण कौन-सा व्यवहार चल रहा है॥१९॥

यह तो अब भी होश-हवास में नहीं आ रहे हैं! हाय! मैं तो लुट गया।

कथमद्यापि नोच्छ्वसिमि ! हन्त, मुषितोऽस्मि ।

मातर्मातर्दलति हृदयं, ध्वंसते देहबन्धः,
शून्यं मन्ये जगदविकलज्वालमन्तर्ज्वलामि।
सीदन्नन्धे तमसि विधुरो मज्जतीवान्तरात्मा,
विष्वङ्मोहः स्थगयति, कथं मन्दभाग्यः करोमि ॥२०॥

कष्टं भोः, कष्टम्।

बन्धुताहृदयकौमुदीमहो मालतीनयनमुग्धचन्द्रमाः।
सोऽयमद्य मकरन्दनन्दनो जीवलोकतिलकः प्रलीयते ॥२१॥

हा वयस्य माधव,

गात्रेषु चन्दनरसो दृशि शारदेन्दु-
रानन्द एव हृदये मम यस्त्वमासीः।
तं त्वां निकामकमनीयमकाण्ड एव
कालेन जीवितमिवोद्धरता हृतोऽस्मि ॥२२॥

(स्पृशन्)

हे मा, हे मा ! मेरा हृदय फट रहा है। शरीर के अंगो के जोड़ शिथिल हो रहे है। इस ससार को सूना देख रहा हूँ, शरीर के भीतरी ताप से अविच्छिन्न रूप से जल रहा हूँ। अवसाद युक्त एव प्रिय विरहित अन्तरात्मा प्रगाढ अन्धकार मे जैसे डूबा जा रहा है। मूर्च्छा चारो ओर से मुझे घेरती आ रही है। मैं मन्दभाग्य ऐसी कठिन स्थिति मे अब कैसे और क्या करूँ ॥२०॥

अरे ! कष्ट है कष्ट है।

अपने बन्धु-बान्धवो के चित्त मे कौमुदी-महोत्सव मालती के नेत्रो के लिए मनोहर चन्द्रमा, मकरन्द के आनन्ददाता, एव इस मनुष्य लोक के तिलक के समान वह माधव आज विनष्ट हो रहे है ॥२१॥

हाय मित्र माधव ! जो तुम मेरे शरीर के अग-प्रत्यग मे चन्दन रस, नेत्रो में शरत्काल के चन्द्रमा, और हृदय मे आनन्द के स्वरूप थे। मेरे अपने जीवन के समान अतिशय सुन्दर जो तुम थे, वैसे तुमको अनवसर मे ही उन्मूलित करने वाले काल द्वारा मैं हतप्राय कर दिया गया हूँ ॥२२॥

अकरुण ! वितर स्मितोज्ज्वलां दृशमतिदारुण ! देहि मे गिरम् ।
सहचरमनुरक्तचेतसं प्रियमकरन्द ! कथं न मन्यसे ॥२३॥

(माधवः संज्ञां लभते)

मकरन्दः—(सोच्छ्वासम्) अयमचिरधौतराजपट्टरुचिरमांसलच्छविर्नव-जलधरस्तोयशीकरासारेण मजीवयति मे प्रियवयस्यम् । दिष्ट्या समुच्छ्वसितस्तावत् ।

माधवः—नरकिमिवात्र जिगिने प्रियावार्ताहर करोमि ?

फलभरपरिणामश्यामजम्बूनिकुञ्ज-
स्खलनतनुतरङ्गामुत्तरेण स्रवन्तीम् ।
उपचितघनमालप्रौढतापिच्छनीलः
श्रयति शिखरमद्रेर्नूतनस्तोयवाहः ॥२४॥

(सरभसमुत्थायोन्मुखः कृताञ्जलिः)

कच्चित्सौम्य ! प्रियसहचरी विद्युदालिङ्गति त्वा-
माविर्भूतप्रणयसुमुखाश्चातका वा भजन्ते ?

(माधव का स्पर्श करते हुए) हे निर्दय ! अपनी मन्द मुस्कराहट से उज्ज्वल दृष्टि का वितरण करो। हे अतिशय कठोर ! मन्द हास्य से उज्ज्वल वाणी का वितरण करो। हे मकरन्द को प्यार करने वाले, मैं तुम्हारा अनुरक्त चित्त-सहचर रहा हूँ—तुम मुझे वैसा क्यों नहीं मान रहे हो ॥२३॥

(माधव होश मे आता है।)

मकरन्द—(दीर्घ साम खींचते हुए) यह तत्क्षण स्वच्छ की गयी नीलम मणि के समान अतीव मनोहर एवं सुपुष्ट कान्ति वाला नूतन मेघ, अपने जल-बिन्दुओं की अनवरत धारा से मेरे प्यारे मित्र को सजीवित कर रहा है। सौभाग्य मे वह होश मे आ गये हैं।

माधव—इस वन मे मैं किसे अपनी प्रियतमा के निकट संदेश ले जाने वाला बनाऊँ। फलो के पकने से श्यामल वर्णवाले जामुन के वृक्षो के निकुजों मे से निकलती हुई छोटी-छोटी तरगों से युक्त नदी की उत्तर दिशा मे समीप ही सघन श्रेणी वद्ध, परिपक्व तमाल वृक्ष के समान काले रंग वाला नूतन मेघ पर्वत की चोटी का सहारा ले रहा है ॥२४॥

पौरस्त्यो वा सुखयति मरुत्साधु संवाहनाभि-
र्विध्वग्बिभ्रत्सुरपतिधनुर्लक्ष्म लक्ष्मीवदेतत् ॥२५॥

(आकर्ण्य) अये, अयं प्रतिरवभरितकन्दरानन्दितोत्कण्ठनीलकण्ठकलकेकानुबन्धिना मन्द्रहुङ्कृतेन मामनुमन्यते यावदभ्यर्थये। भगवन् जीमूत,

दैवात्पश्येर्जगति विचरन्मत्प्रियां मालतीं चे-
दाश्वास्यादौ तदनु कथयेर्माधवीयामवस्थाम्।
आशातन्तुर्न च कथयतात्यन्तमुच्छेदनीयः,
प्राणत्राणं कथमपि करोत्यायताक्ष्याः स एकः ॥२६॥

(सहर्षम्) अये, प्रचलित । तदन्यत सभावयामि। (इति परिक्रामति)

मकरन्दः—(सोद्वेगम्) कथमिदानीमुन्मादोपराग एव माधवेन्दुमास्कन्दति। हा तात, हा अम्ब, हा भगवति, परित्रायस्व माम्। पश्य माधवस्यावस्थाम्।

माधवः—धिक्प्रमादः।

(हर्ष के साथ सोत्कण्ठापूर्वक उठकर ऊपर की ओर मुख किए हुए हाथ जोड़कर) हे शान्तिमूर्ति मेघ! तुम्हारी प्रिय सहचरी विद्युत तुम्हें आलिंगन तो करती है न? अनुराग के प्रकट होने से प्रसन्न चातक गण तुम्हारी सेवा तो करते हैं न? पूर्व दिशा में बसने वाला वायु सवाहन (अंग मर्दन) आदि क्रियाओं के द्वारा तुम्हें अच्छी तरह सुख तो देता है न? एवं सभी ओर से शोभा से सम्पन्न इस धनुष रूप चिह्न को धारण तो करते हो न? ॥२५॥

(सुन कर) प्रतिध्वनि से परिपूर्ण गुफाओं के भीतर मयूरगण ऊपर कण्ठ उठाए हुए आनन्दपूर्वक मधुर एवं अस्पष्ट केका ध्वनि कर रहे हैं। जिसका अनुकरण करते हुए यह मेघ गंभीर हुंकार द्वारा मेरी बातों को स्वीकार कर रहा है। अतः मैं इसी से दूत-कर्म के लिए प्रार्थना करता हूँ। भगवन् मेघ!

जगत् में इच्छानुसार विचरण करते हुए यदि दैवयोग से हमारी प्रियतमा मालती को देखोगे तो पहले उसको आश्वासन दे कर उसके बाद माधव की इस दशा को बतलाना। किन्तु बातें करते हुए तुम उसके आशा-तन्तु का एकदम से उच्छेद मत कर देना, क्योंकि उस विशाल नेत्रोंवाली मालती के प्राणों की रक्षा केवल यह आशा-तन्तु ही कर रहा है ॥२६॥

(हर्ष पूर्वक) अरे! मेघ तो चल पड़ा। अतएव अब दूसरी जगह उसकी प्रार्थना करता हूँ। (ऐसा कहकर चलने का नाट्य करता है।)

मकरन्द—(उद्वेग के साथ) अरे! इस समय तो उन्माद रूप ग्रहण माधव रूप चन्द्रमा को अभिभूत कर रहा है। हाय तात! हाय माता! हाय भगवती! मेरी रक्षा करो। माधव की यह (दयनीय) अवस्था देखो।

माधव—मेरी असावधानी को धिक्कार है।

नवेषु लोध्रप्रसवेषु कान्ति-
र्दृशः कुरङ्गेषु, गतं गजेषु।
लतासु नम्रत्वमिति प्रमथ्य
व्यक्तं विभक्ता विपिने प्रिया मे ॥२७॥

हा प्रिये मालति !

मकरन्दः—

सुहृदि गुणनिवासे प्रेयसि प्राणनाथे
कथमिव सहपांसुक्रीडनप्रौढसख्ये।
प्रियजनविरहाधिव्याधिखेदं दधाने
हतहृदय ! विदीर्य त्वं द्विधा न प्रयासि ॥२८॥

माधवः—सुलभानुकारः खलु जगति वेधसो निर्माणसन्निवेशः। भवत्वेव तावत्। (उच्चैः) अयमहं भोः (प्रणिपत्य) भूधरारण्यवासिन सत्त्वान्विज्ञापयामि। मुहूर्तमवधानदानेन मामनुगृह्णन्तु भवन्त ।

भवद्भिः सर्वाङ्गप्रकृतिरमणीया कुलवधू-
रिहस्थैर्दृष्टा वा विदितमथवास्याः किमभवत्।

नूतन लोध्र के पुष्पों में मालती की कान्ति, हरिणों में दृष्टि, हाथियों में गति, एवं लताओं में नमनशीलता—इस प्रकार से इस वन में मेरी प्रियतमा मालती को निष्पीडित कर के स्पष्ट रूप में विभक्त कर डाला गया है ॥२७॥

हाय प्रिये मालती !

मकरन्द—धूल में खेलने से ले कर जिसके साथ आज तक प्रौढ मैत्री रही, जो सभी गुणों का आधार है, सब से अधिक प्यारा है, मेरे प्राणों का भी नियन्ता है, वही मेरा प्यारा मित्र अपने प्रियजन के विरह में मनोवेदना रूप व्याधि की यातना भोग रहा है। हे निराश हृदय ! इस अवस्था में तू दो टुकड़ों में विभक्त हो कर क्यों नहीं जाता है ? ॥२८॥

माधव—इस संसार में विधाता की सृष्टि के मध्य एक का अनुकरण दूसरे के लिए सुलभ है। खैर, ऐसा हो। (ऊंचे स्वर में) अरे ! यह मैं हूं (प्रणाम करते हुए) पर्वत और जंगल में रहने वाले प्राणियों को विदित करता हूं। आप लोग कुछ समय तक एकाग्र चित्त हो कर मुझे अनुगृहीत करें।

वयोऽवस्थां तस्याः शृणुत, सुहृदो यत्र मदनः
प्रगल्भव्यापारश्चरति हृदि मुग्धश्च वपुषि ॥२९॥

कष्ट भोः!

केकाभिर्नीलकण्ठस्तिरयति वचनं ताण्डवादुच्छिखण्डः,
कान्तामन्तःप्रमोदादभिसरति मदभ्रान्ततारश्चकोरः।
गोलाङ्गूलः कपोलं छुरयति रजसा कौसुमेन प्रियायाः,
कं याचे ! यत्र तत्र ध्रुवमनवसरग्रस्त एवार्थिभावः ॥३०॥

अथ च—

दन्तच्छदारुणिमरञ्जितदन्तमाल-
मुग्रस्य चुम्बति वलीवदनः प्रियायाः।
काम्पिल्यकप्रसवपाटलगण्डपालि-
पाकारुणस्फुटितदाडिमकान्ति वक्त्रम् ॥३१॥

यहाँ रहने वाले आप लोगों ने शरीर के सम्पूर्ण अंग-प्रत्यंग में स्वभाव से ही परम सुन्दरी किसी कुलवधू (मालती) को देखा है क्या? अथवा उसका क्या हुआ—इसकी कोई जानकारी आप लोगों को है? हे मित्रो! आप लोग उसके वयस् की अवस्था सुनें, जिस वयस् में कामदेव प्रबल उद्यम कर के हृदय में और अधिक मनोहर हो कर देह में विचरण करता है (वही उसका वयस् है) ॥२९॥

कष्ट की बात है! मयूर गण नाचने के लिए अपने पंखों को ऊपर उठा कर अपने केकारव में हमारी बातों को तिरोहित कर रहा है। मदन-मद से जिसकी आंखों के दोनों तारे घूम रहे हैं ऐसा चकोर अन्तःकरण में आनन्दित हो कर अपनी प्रिया का अभिसरण (अगवानी) कर रहा है। काला मुख वानर पुष्पों के पराग से अपनी प्रिया (वानरी) का कपोल रँग रहा है। अतः ऐसी दशा में मैं किससे प्रार्थना करूँ, क्योंकि मेरी याचकता यहाँ वहाँ सर्वत्र बिना अवसर की सी प्रतीत हो रही है ॥३०॥

यह भी, चुचके हुए मुख वाला वानर ओठ की लालिमा से अनुरंजित दांतों की पंक्तियों से युक्त, रोचनी पुष्प अथवा गुंजा फल के समान श्वेत रक्त कपोल-प्रान्तों से सम्बद्ध एवं खूब पक जाने के कारण लाल रंग और स्फुटित (फटे हुए) अनार के फल की भांति मनोहर कान्तियुक्त अपनी प्रिया (वानरी) के मुख का चुम्बन कर रहा है ॥३१॥

अयं च रोहिणानोकहस्कन्धविश्रान्तकण्ठः करी। तथामत्राप्यनवसरः।

कण्डूकुड्मलितेक्षणां सहचरीं दन्तस्य कोट्या लिख-
न्पर्यायव्यतिकीर्णकर्णपवनैराह्लादिभिर्वीजयन्।
जग्धार्द्धं नवसल्लकीकिसलयैरस्याः स्थितिं कल्पय-
न्नन्यो वन्यमतङ्गजः परिचयप्रागल्भ्यमभ्यस्यति॥३२॥

(अन्यतो विलोक्य)

अयं तु—

नान्तर्वर्धयति ध्वनत्सु जलदेष्वामन्द्रमुद्गर्जितं
नासन्नात्सरसः करोति कवलानावर्जितैः शैवलैः।
दानज्यानिविषादमूकमधुपव्यासङ्गदीनाननो
नूनं प्राणसमावियोगविधुरः स्तम्बेरमस्ताम्यति॥३३॥

अलमनेनाप्यायासितेन। (सानन्दम्) एष सानन्दसहचरीसमाकर्ण्यमानम-धुरगम्भीरकण्ठगर्जितध्वनिरपरोऽपि मत्तमातङ्गवर्गपालकः प्रत्यग्रविकसित-

और यह हाथी वट वृक्ष के प्रकाण्ड (तने) में अपने गले को टिका रहा है। इसके समीप भी जा कर कुछ कहने का अवसर नहीं है।

एक दूसरा जंगली हाथी, दांत के अग्रभाग द्वारा खुजलाने से मुंदे हुए नेत्रोंवाली अपनी सहचरी (हथिनी) को खुजलाते हुए, आह्लाद का अनुभव कराने वाली क्रम से अपने दोनों कानों की हवा से अपनी प्रिया को पंखा झलते हुए, आधी खायी हुई नूतन कुंदरु की लताओं के पल्लवों से हथिनी को जिमाते हुए परिचय की प्रौढता का अभ्यास कर रहा है॥३२॥

(दूसरी ओर देख कर)

यह तो, मद-जल के अभाव के कारण उत्पन्न विषाद से शब्द न करने वाले भ्रमरों की विशिष्ट आसक्ति से मलिन एवं अप्रसन्न वदन वाला हाथी मेघों के गर्जन करने के समय (पहले की भांति) उच्च स्वर में गर्जन नहीं करता है। एवं निकटवर्ती सरोवर से लाये गये शैवालों का भक्षण नहीं करता है। अतः निश्चय ही अपनी प्राण तुल्य प्रियतमा हस्तिनी के विरह से दुःखी हो कर यह सन्ताप का अनुभव कर रहा है॥३३॥

अतः इसको भी तंग करने की आवश्यकता नहीं है। (आनन्द के साथ) जिसके मधुर एवं गंभीर कण्ठ की गर्जना आनन्द से युक्त उसकी सहचरी ने सुन ली है, ऐसा यह दूसरा मतवाले हाथियों के समूह का रक्षक, नूतन और खिले हुए कदम्ब के पुष्पों के समान मनोहर और शीतल सुगन्ध से व्याप्त तथा स्थूल कपोल-प्रान्तों में

कदम्बसंवादिसुरभिशीतलामोदबहुलसंवलितमांसलकपोलनिष्यन्दकर्दमिततीरं समुद्धृतकमलिनीखण्डप्रकीर्णकेसरमृणालकन्दाङ्कुरनिकरमनवरतप्रवृत्तकमनीयकर्णतालताण्डवप्रचलकर्णजर्जरिततरलतरङ्गवितततनीहारविनस्तकुररसारस सरोऽवगाह्य क्रीडति। भवतु। एनमाभाषे। महाभाग नागपते, श्लाघ्ययौवनः खल्वसि। कान्तानुवृत्तिचातुर्यमप्यस्ति भवतः। (सापवादम्)

लीलोत्खातमृणालकाण्डकवलच्छेदेषु संपादिताः
पुष्यत्पुष्करवासितस्य पयसो गण्डूषसंक्रान्तयः।
सेकः शीकरिणा करेण विहितः कामं विरामे पुन-
र्न स्नेहादनरालनालनलिनीपत्रातपत्रं धृतम् ॥३४॥

कथमवधीरणानीरसं व्रजति। हन्त, मूढ एवास्मि, योऽस्मिन्वनचरेऽपि वयस्यमकरन्दोचितं व्याहरामि। हा प्रियवयस्य मकरन्द,

धिगुच्छ्वसितवैशसं मम यदित्थमेकाकिनो
धिगेव रमणीयवस्त्वनुभवाद्वृथाभाविनः।

उत्पन्न मदजल से पङ्कयुक्त तट वाले, निकाले गये कमलिनी-समूहों से बिखरे हुए केसर, मृणालदण्ड, कन्द एवं अङ्कुर समूहों से युक्त, अनवरत चलने वाले दोनों कर्णों के सुन्दर ताण्डव (नृत्य) में चञ्चल होने वाले कानों से चूर्णीकृत (विदीर्ण) एवं चञ्चल तरंगों से विस्तृत जलशीकरों से विक्षेप करते हुए कुरर और सारस पक्षियों से युक्त सरोवर में प्रविष्ट हो कर क्रीडामिरत है। तो चल कर इससे बातें करें। महाभाग नागराज! तुम्हारा यौवन प्रशंसनीय है। अपनी प्रियतमा का अनुसरण करने की निपुणता भी आप में है। (निन्दा के स्वर में)

लीलापूर्वक अनायास उखाड़े गये मृणाल-खण्डों को उठा कर हथिनी ने अपने मुख में रख लिया है, उसके ऊपर यह हाथी अपने मुख में भरे हुए, खिले सुपुष्ट कमलों के मकरन्द से सुवासित जल की बूँदें गिरा रहा है। (यही नहीं) जल की बूँदें गिराने वाली अपनी शुण्डा से इसने हथिनी के शरीर को भी यथेष्ट सिंचित कर दिया है। किन्तु उस सिंचन के अनन्तर इसने स्नेहवश सरल-सीधे दण्ड वाले कमलपत्र-रूप छत्र को धूप के निवारणार्थ धारण नहीं किया ॥३४॥

अरे यह हाथी क्यों अवज्ञापूर्वक स्नेहविहीन भाव से चला जा रहा है। हाय! मैं मूर्ख ही हूँ जो इस जंगली पशु के साथ अपने मित्र मकरन्द के साथ बोलने योग्य बातें कर रहा हूँ। हाय मेरे प्रिय मित्र मकरन्द!

एकाकी मेरा इस प्रकार का जो जीवन धारण करना है उसे धिक्कार है।

त्वया सह न यस्तया च दिवसः, स विध्वंसतां
प्रमोदमृगतृष्णिकां धिगपरत्र कामानुषे ॥३५॥

मकरन्दः—अये, उन्मादमोहान्तरितोऽपि मां प्रति कुतश्चिद्व्यञ्जकात्प्रबुद्ध एवास्य सहजस्नेहसंस्कारः। तत्सन्निहितमेव मां मन्यते? (पुरतः स्थित्वा) एष पार्श्वचर एव ते स मकरन्दो मन्दभाग्यः।

माधवः—हा प्रियवयस्य, सभावय। परिष्वजस्व माम्। प्रियां मालतीं प्रति तु निराश एव संवृत्तोऽस्मि।

मकरन्दः—एषोऽहं सभावयामि जीवितेश्वरम्। (विलोक्य सकरुणम्) कष्टम्। कथमविर्भूतमत्परिष्वङ्गोत्कण्ठ एव निश्चेतनः संवृत्तः। तत्कृतमिदानीं जीविताशाग्रहेण। सर्वथा नास्ति मे प्रियवयस्य इति युक्तः परिच्छेदः। हा वयस्य!

निष्फल सुन्दर वस्तु को देखना भी धिक्कार है। मित्र! तुम्हारे और उस (मालती) के साथ जो मेरे दिन नहीं बीत रहे हैं, वे दिन नष्ट हो जाय। तुम दोनों प्रियजनों से भिन्न इस कुत्सित जीवन बिताने वाले मनुष्य में आनन्द एवं हर्ष रूप जो मृगतृष्णा है उसे भी धिक्कार है॥३५॥

मकरन्द—अरे हमारे प्रति माधव का सहज स्नेह सस्कार है। उन्माद से उत्पन्न मूर्छा (अज्ञान) में तिरोहित होने पर भी किसी उद्बोधक हेतु से वह पुनः मेरे प्रति जाग्रत हो गया है जो यह मुझे अब अपने समीप में ही स्थित मान रहे हैं। (उनके सामने खड़े हो कर) यह मन्दभाग्य मकरन्द तुम्हारे बगल में ही बराबर रहा है।

माधव—हाय प्यारे मित्र! मुझे सम्मानित करो। मुझे आलिंगन-पाश में बाँध लो। प्रियतमा मालती के सम्बन्ध में तो अब मैं निराश ही हो चुका हूँ।

मकरन्द—यह मैं अपने प्राणों के स्वामी को सम्मानित कर रहा हूँ। (देख कर करुणा के साथ) कितने कष्ट की बात है कि किसी प्रकार आलिंगन की उत्कण्ठा उत्पन्न होने के अनन्तर ही यह मूर्च्छित हो गये हैं। अतः अब इनके जीवन की आशा के प्रति आसक्ति रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। अब तो—मेरे प्रिय मित्र नहीं है—इस प्रकार का निश्चय करना ही सब प्रकार से युक्तियुक्त है। हाय मित्र!

मत्स्नेहसंज्वरयता हृदयेन नित्य-
माबद्धवेपथु विनापि निमित्तयोगात्।
त्वय्यापदो गणयता भयमन्वभावि
तत्सर्वमेकपद एव मम प्रणष्टम्॥३६॥

अथवा वरं त एवातिक्रान्ता मुहूर्ता, येषु तथाविधमपि भवन्तं चेतयमानमनुभूतवानस्मि। इदानीं तु मम—

भारः कायो जीवितं वज्रकीलं काष्टाः शून्या निष्फलानीन्द्रियाणि।
कष्टः कालो मां प्रति त्वत्प्रयाणे शान्तालोकः सर्वतो जीवलोकः॥३७॥]

(विचिन्त्य) तत्किं नु माधवास्तमयसाक्षिणा भवितव्यमित्यतो जीवामि। तदस्माद् गिरिशिखरात्पाटलावत्यां निपत्य माधवस्य मरणाग्रेसरो भवामि। (सकरुणं परिवृत्त्यावलोक्य च) कष्टम्।

तदेतदसितोत्पलद्युति शरीरमस्मिन्नभू-
न्ममापि दृढपीडनैरपि न तृप्तिरालिङ्गनैः।

प्रेम द्वारा उत्पन्न सन्ताप से युक्त मेरे हृदय ने बिना किसी कारण के ही निरन्तर तुम्हारे विषय में आपदाओं की संभावना कर काँपते हुए जिस भय का अनुभव किया था, मेरा वह सब भय अब एक बार ही विनष्ट हो गया है॥३६॥

अथवा वे बीते हुए मुहूर्त भी मेरे लिए कुछ अच्छे थे, क्योंकि उनमें वैसा शोकाकुल होने पर भी मैंने तुम्हें चेतनायुक्त जाना था। इस समय तो मेरे लिए इस मनुष्य लोक से तुम्हारा प्रयाण होने पर शरीर भार स्वरूप, जीवन वज्रमय कील के समान, दिशाएँ सूनी, इन्द्रियाँ निष्फल, समय दुःखदायी और यह मनुष्य-लोक सर्वत्र प्रकाश-विहीन प्रतीत हो रहा है॥३७॥

(विचार कर) तब फिर मैं माधव की मृत्यु का साक्षी बनने के लिए क्यों अपना जीवन धारण करूँ। अतः इस पर्वत के शिखर पर से पाटलावती नदी में कूद कर माधव की मृत्यु का अग्रगामी बनूँगा। (शोक के साथ चलने का नाट्य कर और देख कर) कष्ट की बात है।

नीले कमल के समान कान्तिमय यह वही (मेरे मित्र माधव का) शरीर है जिसमें अत्यन्त प्रगाढ़ आलिंगन लेने पर भी मेरी कभी तृप्ति नहीं होती थी और

यदुल्लसितविभ्रमा बत निपीतवत्यः पुरा
नवप्रणयविभ्रमाकुलितमालतीदृष्टयः ॥३८॥

हन्त भो! एकस्या तनावेतावतो गुणमहाहारस्य सन्निवेशः कथमिवाभूत्। सखे माधव!

आपूर्णश्च कलाभिरिन्दुरमलो यातश्च राहोर्मुखं
संजातश्च घनाघनो जलधरः, शीर्णश्च वायोर्जवात्।
निर्वृत्तश्च फलैर्प्रहिर्द्रुमवरो दग्धश्च दावाग्निना
त्वं चूडामणितां गतश्च जगतः, प्राप्तश्च मृत्योर्वशम् ॥३९॥

तत्परिष्वजे तावदेवं गतमपि प्रियवयस्यम्। अर्थितश्चानेन संप्रत्ययमेवार्थः। (परिष्वज्य) हा वयस्य, विमलकलानिधे गुणगुरो, हा मालतीस्वयग्राहजीवितेश्वर, हा कामन्दकीमकरन्दानन्दजनक माधव, अयमत्र ते जन्मन्यपश्चिम पश्चिमावस्थाप्रार्थितो मकरन्दबाहुपरिष्वङ्गः। सखे, संप्रति मुहूर्तमपि मकरन्दो जीवतीति मैव मस्थाः। कुतः—

जिसे पूर्ण काल मे मालती के नेत्रो ने, नूतन प्रेम एव विलास मे व्याकुल हो कर बड़े विस्मय और आदर के साथ देखा था ॥३८॥

अरे! यह बड़े आश्चर्य की बात है कि एक ही शरीर मे इतने सारे सद्गुणो के समूह की किस प्रकार अवस्थिति हुई? मित्र माधव!

निर्मल चन्द्रमा ज्यो ही सोलह कलाओ मे पूर्ण हुआ राहु के मुख मे चला गया, मेघ जो वृष्टि कर रहा था तत्काल ही वायु के वेग से खण्ड-खण्ड हो गया। उत्कृष्ट वृक्ष जो फलो से लदा हुआ था, दावाग्नि से जल गया है, उसी प्रकार तुम जो इस जगत् के चूड़ामणि के समान हो रहे थे मृत्यु के अधीन हो गये हो ॥३९॥

अतएव इस अवस्था मे प्राप्त होते हुए भी अपने प्रिय मित्र का आलिंगन करता हूँ। इन्होने अभी इसी के लिए प्रार्थना भी की थी। (आलिंगन कर) हाय मित्र! निर्मल कलाओ के आधार! दया-दाक्षिण्य आदि सद्गुणो के आचार्य! हाय! मालती द्वारा स्वय गृहीत किए गये मेरे जीवन-धन के स्वामी! हाय! कामन्दकी और मकरन्द के आनन्ददाता माधव! अपनी अन्तिम अवस्था मे जिसके लिए प्रार्थना की थी और तुम्हारे इस जन्म का जो पहला और दुर्लभ मकरन्द की भुजाओ का आलिंगन है वह यहाँ (मैं दे रहा हूँ) है। मित्र! यह मत मान लेना कि अब मकरन्द एक क्षण के लिए भी (तुम्हारे जाने के पश्चात्) जीवित रहता है। क्योकि—

आ जन्मनः सह निवासितया मयैव
मातुः पयोधरपयोऽपि समं निपीय।
त्वं पुण्डरीकमुख बन्धुतया निरस्त-
मेको निवापसलिलं पिबसीत्ययुक्तम्॥४०॥

(सकरुणं विमुच्य। परिक्रम्य) इयमधस्तात्पाटलावती। भगवत्यापगे,

प्रियस्य सुहृदो यत्र मम तत्रैव संभवः।
भूयादमुष्य भूयोऽपि भूयासमनुसंचरः॥४१॥

(इति पतितुमिच्छति)

सौदामिनी—(प्रविश्य सहसा वारयित्वा) वत्स, कृत साहसेन।

मकरन्दः—(विलोक्य) अम्ब, कासि? किमर्थं त्वयाहं प्रतिषिद्धः?

सौदामिनी—आयुष्मान्, किं त्वं मकरन्दः?

मकरन्दः—मुञ्च। स एवास्मि मन्दभाग्यः।

सौदामिनी—वत्स, योगिन्यस्मि। मालतीप्रत्यभिज्ञानं च धारयामि।

हे श्वेत कमल के समान मनोहर मुखवाले! जन्म के समय से ले कर एक ही स्थल पर निवास करने के कारण मेरे ही साथ माता के स्तन्य का भी पान करने वाले तुम बन्धु-बान्धवों द्वारा दिए गए तर्पण जल को (अकेले ही) पीओगे—यह अनुचित बात होगी॥४०॥

(करुणा के साथ माधव को वहीं छोड़ कर चलने का नाट्य कर) यह नीचे पाटलावती नदी है। भगवती जल धारा! मेरे मित्र माधव का जन्म जहाँ हुआ है, मेरा भी जन्म वहीं पर हो और मैं इस जन्म में भी उनका अनुगामी बनूँ॥४१॥

(ऐसा कहकर नीचे कूदना चाहता है।)

सौदामिनी—(प्रवेश कर के एकाएक निवारण करती हुई) वत्स! ऐसा साहस मत करो।

मकरन्द—(देख कर) माता! तुम कौन हो। तुम किस लिए मुझे रोक रही हो।

सौदामिनी—चिरञ्जीवी! क्या तुम मकरन्द हो?

मकरन्द—मुझे छोड़ो। मैं वही मन्दभाग्य (मकरन्द) हूँ।

सौदामिनी—वत्स! मैं योगिनी हूँ और मालती द्वारा दिया गया यह एक चिह्न भी मेरे पास है।

(बकुलमालां दर्शयति)

मकरन्दः—(सोच्छ्वासं सकरुणम्) अपि जीवति मालती ?

सौदामिनी—अथ किम्। वत्स, किमत्याहितं माधवस्य ? यदनिष्टव्यवसितोऽसीत्याकम्पितास्मि।

मकरन्दः—आर्ये, तमहं प्रमुग्धमेव वैराग्यात्परित्यज्यागतः। तदेहि। तूर्णं संभावयावः।

(त्वरितं परिक्रामतः)

मकरन्दः—(विलोक्य) दिष्ट्या प्रत्यापन्नचेतनो वयस्यः।

सौदामिनी—संवदत्युभयोर्मालतीनिवेदितं शरीराकारः।

माधवः—(आश्वस्य) अये, प्रतिबोधितवानस्मि केनापि। (विचिन्त्य) नूनमस्याय नवजलधरप्रभञ्जनस्यानवेक्षितारमदवस्थो व्यापारः। भगवन् पौरस्त्य वायो!

भ्रमय जलदानम्भोगर्भान्प्रमोदय चातका-
न्कलय शिखिनः केकोत्कण्ठान्कठोरय केतकान्।

(ऐसा कह कर वह मौलसिरी की माला दिखलाती है।)

मकरन्द—(गहरी सास खीच कर, करुणा के साथ) क्या मालती जीवित है ?

सौदामिनी—और क्या ? वत्स, क्या माधव का कुछ अनिष्ट हो गया ? तुम ऐसे अनिष्ट कर्म के लिए प्रवृत्त हुए हो—यह देख कर मैं काँप उठी हूँ।

मकरन्द—आर्ये ! मैं उन्हें मूर्च्छित दशा मे छोड कर चित्त मे विरक्ति हो जाने से यहाँ आ गया हूँ। अत आइए। हम दोनों शीघ्र ही चल कर उन्हे स्वस्थ बनाएं।

(शीघ्रता से चलते हैं।)

मकरन्द—(देख कर) सौभाग्य से हमारे मित्र होश मे आ गये है।

सौदामिनी—तुम दोनो की शारीरिक आकृतियाँ मालती के कहने के अनुसार ही मिलती हैं।

माधव—(चेतना प्राप्त करते हुए) अरे ! मुझे किसने चेतना प्राप्त करायी है। (सोच कर) निश्चय ही मेरी (दयनीय) अवस्था को न जानने वाले नूतन मेघ वाही वायु का ही यह कार्य है। भगवान् ! पूर्व के वायु देवता !

आप जल भरे बादलों को भ्रमण कराइए, केका ध्वनि करने के लिए उत्कण्ठित मयूरों को नचाइए, और केतकी के वृक्षों को सम्पुष्ट कीजिए किन्तु हे निर्दय।

विरहिणि जने मूर्च्छां लब्ध्वा विनोदयति व्यथा-
मकरुण ! पुनः संज्ञाव्याधिं विधाय किमीहसे ? ॥४२॥

मकरन्दः—सुविहितमनेन निखिलजगज्जीवनेन मातरिश्वना। अपि च—

एते केतकसूनसौरभजुषः पौरप्रगल्भाङ्गना-
व्यालोलालकवल्लरीविलुठनव्याजोपभुक्ताननाः।
किञ्चोन्मिद्रकदम्बकुड्मलपुटीधूलीलुठत्षट्पद-
व्यूहव्याहृतिहारिणो विरहिणः कर्षन्ति वर्षानिलाः ॥४३॥

माधवः—देव वायो, तथापि भवन्तमेव प्रार्थये।

विकसत्कदम्बनिकुरम्बपांसुना सह जीवितं घटय मे प्रिया यतः।
अथवा तदङ्गपरिवासशीतलं मयि किञ्चिदर्पय भवांस्तु मे गतिः ॥४४॥

(कृताञ्जलिः प्रणमति)

सौदामिनी—सुसमाहितमन्त्रभिज्ञानार्पणस्यावसरः। (अञ्जलौ बकुलमालामर्पयति)

बेहोशी प्राप्त कर अपने चित्त को बहलाने वाले विरही जन को पुनः चैतन्य-रूप रोग दे कर आप क्या करना चाहते हैं ॥४२॥

मकरन्द—समस्त प्राणियों के प्राणरक्षक वायु देवता ने यह सुन्दर काम किया। और भी, यह केतकी के पुष्पों की सुगन्ध की सेवा करने वाले, नागरिकों की प्रौढ़-प्रगल्भ सुन्दरियों के अतीव चचल केश-पाश (अलक) रूप लताओं को चलाने के बहाने उनके मुख का चुम्बन करने वाले, और विकसित कदम्ब के मुकुलों के कोशों के मकरन्द में भ्रमण करते हुए भ्रमरों की पंक्तियों की गूंज से मन को मोह लेने वाले ये वर्षा ऋतु की वायु के झोंके विरही जनों को कष्ट दे रहे हैं ॥४३॥

माधव—वायु देवता ! आपके ऐसा होते हुए भी मैं ऐसी प्रार्थना करूंगा। हमारी प्रियतमा मालती जिस किसी स्थान पर हो, विकसित कदम्ब के पुष्पों के मकरन्द के साथ हमारे जीवन को वहीं पहुँचा दीजिए। अथवा उस (मालती) के अंगों के साथ निरन्तर रहने से शीतल कोई भी वस्तु मुझे प्रदान कीजिए, क्योंकि आप ही मेरे आश्रय है ॥४४॥

(अंजलि बाँधकर प्रणाम करता है।)

सौदामिनी—मालती द्वारा दिया गया वह चिह्न (मौलसिरी की माला) देने का यह अच्छा अवसर आ गया है। (माधव की अंजलि में उक्त माला देती है।)

माधवः--(साकूतं सहर्षं सविस्मयं च)कथमियमस्मद्विरचिता प्रियास्तनोत्तंसहृदुर्ललितमूर्तिरनङ्गमन्दिराङ्गणबकुलपादपकुसुममाला। (सम्यङ्निरूप्य) कः सन्देहः। तथा हि स एवायमस्याः--

मुग्धेन्दुसुन्दरतदीयमुखावलोकहेलाविश्रृङ्खलकुतूहलनिह्नवाय।
दुर्न्यस्तपुष्परचितोऽपि लवङ्गिकायास्तोषं ततान विषमग्रथितो विभागः।

(सहर्षोन्मादमुत्थाय) चण्डि मालति, इयं विलोक्यसे। (सकोपमिव) अयि मदवस्थानभिज्ञे!

प्रयान्तीव प्राणाः, सुतनु ! हृदयं ध्वंसत इव,
ज्वलन्तीवाङ्गानि, प्रसरति समन्तादिव तमः।
त्वराप्रस्तावोऽयं न खलु परिहासस्य विषय-
स्तदक्ष्णोरानन्दं वितर, मयि मा भूरकरुणा॥४६॥

माधव—(पहचानते हुए हर्ष और आश्चर्य के साथ) यह मेरे ही द्वारा बनायी गयी और प्रियतमा के स्तन मण्डलों के ऊपर रहने से अतिप्रिय स्वरूप वाली अनङ्ग देवता के मन्दिर के आगन में उत्पन्न मौलसिरी के पुष्पों की माला किस प्रकार यहाँ आ गयी? (अच्छी तरह देख कर) इसमे क्या सन्देह है? क्योंकि यह वही उस (मालती) की ही माला है—

सुन्दर चन्द्रमा के समान मनोहर मालती के मुखमण्डल के दर्शन से हमारे शरीर मे कम्पन स्वेदादि के जो विकार उत्पन्न हुए थे, उन्हे छिपाने के लिए, विपरीत मुख वाले पुष्पों से रचित होने पर एव एक समान रूप मे न गूथे जाने पर भी—इस माला के उसी भाग ने लवंगिका का आनन्द वर्धन किया था॥५४॥

(हर्ष एव उन्माद के साथ उठ कर) हे चण्डी मालती! यह तुम्हें देख रहा हूँ। (क्रोध युक्त के समान) तुम मेरी अवस्था से अनभिज्ञ रहने वाली हो।

हे सुन्दरी! तुम्हारे वियोग मे ये मेरे प्राण जैसे जा रहे हैं, हृदय जैसे विदीर्ण हो रहा है, अग-प्रत्यंग जैसे जल-से रहे है, और मूर्च्छा या अज्ञान जैसे सब ओर से व्याप्त हो रहा है। यह शीघ्रता करने का अवसर है, परिहास का विषय नही है। अतः (तुम शीघ्र आ कर) मेरे नेत्रो को आनन्द प्रदान करो और मुझ पर निर्दय मत बनो॥४६॥

(सर्वतो दृष्ट्वा सनिर्वेदम्) कुतोऽत्र मालती। (बकुलमालां प्रति) अये प्रियाप्रणयिनि! परमोपकारिण्यसि।

निष्प्रत्यूहाः प्रियसखि! यदा दुःसहा संबभूवु-
र्मोहोद्दामव्यथसनगुरवो मन्मथोन्मादवेगाः।
तस्मिन्काले कुवलयदृशस्त्वत्समाश्लेष एव
प्राणत्राण प्रगुणमभवन्मत्परिष्वङ्गकल्पः ॥४७॥

(सकरुणं निःश्वस्य)

आनन्दनानि मदनज्वरदीपनानि
गाढानुरागरसवन्ति तदा तदा च।
स्नेहाकराणि मम मुग्धदृशश्च कण्ठे
कष्टं स्मरामि तव तानि गतागतानि ॥४८॥

(हृदये निधाय मूर्च्छति)

मकरन्दः—(उपसृत्य) सखे, समाश्वसिहि।

(सब ओर देख कर विरक्त भाव से? कहाँ यहाँ पर मालती है। (मौलसिरी की मालाको लक्ष्य कर) हे प्रिया के प्रणयिनि! तुम परम उपकार करने वाली हो।

हे प्रियसखी! मौलसिरी की माला! निर्बाध रूप से एवं समस्त शरीर में सन्तापोत्पत्ति रूप विरह के द्वारा गम्भीर काम वेदना का वेग जिस समय नील कमल के समान नेत्रों वाली मालती के लिए असहनीय हो गया था, उस समय हमारे आलिंगन के समान तुम्हारा आलिंगन ही मालती के प्राणों की रक्षा में उत्कृष्ट गुणों से युक्त एवं अनुकूलताकारी हुआ था ॥४७॥

(करुणा पूर्वक गहरी साँस निकालते हुए)

हे मौलसिरी की माला! मैं तुम्हारे उस अवस्था में बारी-बारी से मेरे और सुन्दरी मालती के कण्ठों में आने-जाने के उन क्रमों को कष्ट पूर्वक स्मरण करता हूँ, जो आनन्ददायी, काम ज्वर को उद्दीप्त करने वाले, प्रगाढ़ प्रेम-रस से समन्वित एवं स्नेह के आकर थे ॥४८॥

(हृदय में माला को रख कर मूर्च्छित होना है।)

मकरन्द—(समीप पहुँच कर) मित्र! धैर्य धारण करें।

माधवः—(समाश्वस्य) मकरन्द, किं न पश्यसि, कुतोऽपि सहसैव मालती-स्नेहस्वहस्तस्य लाभः। तत्कथ मन्यसे किमेतदिति।

मकरन्दः—इयमार्या योगीश्वर्यस्य मालत्यभिज्ञानस्योपनेत्री?

माधवः—(सकरुणं कृताञ्जलिः) आर्ये, प्रसीद। कथय,जीवति मे प्रिया सा?

सौदामिनी—वत्स, समाश्वसिहि। जीवति सा कल्याणी।

माधवमकरन्दौ—(समुच्छ्वस्य) आर्ये, यद्येवं कथय क एष वृत्तान्त इति।

सौदामिनी—अस्ति पुरा करालायतने घोरघण्टः कृपाणपाणिर्व्यापादितः।

माधवः—(सावेगम्) आर्ये, विरम। ज्ञातो वृत्तान्तः।

मकरन्दः—सखे, क इव?

माधवः—किमन्यत्। सकामा कपालकुण्डला।

मकरन्दः—आर्ये, अप्येवम्?

सौदामिनी—एवं यथा निवेदितं वत्सेन।

मकरन्दः—भोः, कष्टम्।

माधव—(आश्वस्त हो कर) मकरन्द! क्या तुम नहीं देख रहे हो कि कहीं से एकाएक मालती के स्नेह की सूचना देने वाला यह चिह्न मिल गया है। अतः इस सबध में तुम क्या सोच रहे हो? यह क्या मामला है?

मकरन्द—यह आर्या योगेश्वरी मालती के उस चिह्न को यहाँ लाने वाली हैं।

माधव—(करुणापूर्वक हाथ जोड़ कर) आर्ये! प्रसन्न हों। बताएँ, क्या मेरी प्रियतमा वह मालती जीवित है?

सौदामिनी—वत्स! धैर्य धारण करो। वह कल्याणी जीवित है।

माधव और मकरन्द दोनों—(गहरी साँस बाहर करते हुए) आर्ये! यदि ऐसा है तो बताइए यह घटना कैसे हुई?

सौदामिनी—पहले कराला देवी के मन्दिर में तलवार हाथ में लिए हुए अघोरघण्ट मारा गया था।

माधव—(घबराहट के साथ) आर्ये! बस करें। वृत्तान्त मालूम हो गया।

मकरन्द—मित्र! यह कैसा वृत्तान्त है?

माधव—दूसरा क्या? कपाल-कुण्डला की अभिलाषा पूरी हुई।

मकरन्द—आर्ये! क्या ऐसा ही हुआ है?

सौदामिनी—वत्स, माधव ने जैसा कहा है, वैसा ही हुआ है।

मकरन्द—अरे! कष्ट की बात है!

कुमुदाकरेण शरदिन्दुचन्द्रिका यदि रामणीयकगुणाय संगता।
सुकृतं तदस्तु, कतमस्त्वयं विधिर्यदकालमेघपिततिर्व्यपूयुजत् ॥४९॥

माधवः—हा प्रिये मालति, कष्टमनिर्वाभरणमापन्नासि।

कथमपि तदाभयस्त्वं कमलमुखि ! कपालकुण्डलाग्रस्ता।
उत्पातधूमरेखाक्रान्तेव कला शशधरस्य ॥५०॥

भगवति कपालकुण्डले !

निर्माणमेव हि तदा तव लालनीयं,
मा पूतनात्वमुपगाः, शिवतातिरेव।
नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा
मूर्ध्नि स्थितिर्न मुसलैर्यत कुट्टनानि ॥५१॥

सौदामिनी—वत्स, अलमायेगेन।

अकरिष्यदसौ पापमतिदुष्करणेव सा।
नाभविष्यमहं तत्र यदि तत्परिपन्थिनी ॥५२॥

शरद् ऋतु के चन्द्रमा की ज्योत्स्ना (चाँदनी) यदि सौन्दर्य-लाभ के निमित्त कुमुद समूहों से मिलती है तब तो यह ठीक ही है, किन्तु यह कौन-सा विधान है जो कि असमय में ही मेघों की पंक्तियाँ आ कर उन दोनों को विमुक्त कर दें ॥४९॥

माधव—हाय प्रिय मालती ! बड़े दुःख की बात है कि तुम अतीव गर्हित रूप में विपत्ति-ग्रस्त हुई हो।

हे कमल के समान मनोहर मुख वाली ! उस अवसर पर कपाल कुण्डला द्वारा ग्रस्त हो कर उत्पात की सूचना देने वाली धूमकेतु की रेखा द्वारा आक्रान्त चन्द्र-कला की भाँति किस प्रकार की हुई होगी ॥५०॥

भगवती कपाल कुण्डले ! उस समय तो मालती रूप विधाता की रचना की ही तुम्हें रक्षा करनी चाहिए थी, उसके प्रति पूतना राक्षसी के समान क्रूरता नहीं करनी चाहिए थी। तुम उसका कल्याण साधन करो। क्योंकि सुगन्धित पुष्पों को शिर में धारण करने की बात तो स्वभावतः प्रसिद्ध है, किन्तु मूसलों से उनके कूटने की बात प्रसिद्ध नहीं है ॥५१॥

सौदामिनी—वत्स ! अधिक शोक मत करो।

यदि वहाँ उसका विरोध करने के लिए मैं न उपस्थित होती तो अतीव क्रूर स्वभाव वाली वह कपाल कुण्डला (मालती के वध का) पाप कर ही देती ॥५२॥

उभौ—(प्रणम्य) अतिप्रसन्नमार्यापादैः। तत्कथय का पुनस्त्वमस्माकमेवंविधो बन्धुः।

सौदामिनी—ज्ञास्यथ खल्वेतत्। (उत्थाय) इयमिदानीमहं।

गुरुचर्यातपस्तन्त्रमन्त्रयोगाभियोगजाम्।
इमामाकर्षिणीं सिद्धिमातनोमि शिवाय वः ॥५३॥

(समाधवा निष्क्रान्ता)

मकरन्द—आश्चर्यम्।

व्यतिकर इव भीमस्तामसोवैद्युतश्च
क्षणमुपहतचक्षुर्वृत्तिरुद्धूय शान्तः।
(विलोक्य। सभयम्)
कथमिह न वयस्यस्तत्किमेतत्किमन्यत्।
(विचिन्त्य)
प्रभवति हि महिम्ना स्वेन योगीश्वरीयम् ॥५४॥

दोनों—(प्रणाम कर के) आर्या के चरणों ने हम पर अतीव अनुग्रह किया। अतः आप बताए कि इस प्रकार अकारण हमारा उपकार करने वाली बन्धुजनों के समान आप कौन हैं?

सौदामिनी—इसे तुम दोनों जान जाओगे। (उठ कर) यह मैं अभी, तुम लोगों के कल्याण के लिए गुरु-सेवा, तपस्या, तंत्र अर्थात् प्राणायाम, मंत्र एवं योगाभ्यास के द्वारा उत्पन्न इस आकर्षणी सिद्धि को प्रकट कर रही हूँ ॥५३॥

(माधव को साथ में ले कर निकलती है।)

मकरन्द—आश्चर्य की बात है।

अन्धकार एवं बिजली के मिलने की भांति यह कौन सा ऐसा भयंकर तेज है जो अभी कुछ क्षणों तक चमक कर, नेत्रों को उनके व्यापार से हटा कर फिर समाप्त हो गया।

(देख कर, भयपूर्वक)

अरे! यहाँ तो मेरे मित्र माधव नहीं (दिखाई पड रहे) है, तो यह क्या है? (सोच कर) यह और क्या हो सकता है, इस योगेश्वरी ने अपनी महिमा एवं प्रभाव को प्रकट किया है ॥५४॥

(सवितर्कम्) किमयमनर्थ इति सम्प्रति मूढोऽस्मि । अपि च—

अरतोकविस्मयमविस्मृतपूर्ववृत्तमुद्धूतनूतनभयज्वरजर्जरं नः।
एकक्षणत्रुटितसंघटितप्रमोहमानन्दशोकशबलत्वमुपैति चेतः ॥५५॥

तदत्र कान्तारावसाने सहास्मद्वर्गेण प्रविष्टा भगवतीमनुसृत्य वृत्तान्तमेन कथयामि।

(इति निष्कान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे नवमोऽङ्कः।

(वितर्क के साथ) यह क्या अनर्थ घटित हो गया? अब तो मैं विवेक-शून्य हो रहा हूँ। और भी,

हमारा चित्त अनोख आश्चर्य में व्याप्त हो गया है, पहले की घटनाओं को भूल-सा रहा है। एक नूतन भय एवं सन्ताप के उत्पन्न होने से जर्जरित हो रहा है और एक ही समय में मोह नष्ट भी हो रहा है, उत्पन्न भी हो रहा है। इस प्रकार यह आनन्द और शोक की मिश्रित भावनाओं का अनुभव कर रहा है॥५५॥

तो अब इस वन के अन्तिम छोर पर हमारे बन्धुवर्गों के साथ प्रविष्ट भगवती कामन्दकी के समीप जाकर उनसे यह वृत्तान्त बताऊँगा।

(सभी लोग बाहर जाते हैं।)

महाकवि भवभूतिरचित मालतीमाधव नाटक में मालतीदर्शन नामक नवाँ अंक समाप्त।

दशमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति कामन्दकी मदयन्तिका लवङ्गिका च)

कामन्दकी—(सकरुणं सास्रम्) हा वत्से मालति, मदङ्कालङ्कारिणि, क्वासि। देहि मे प्रतिवचनम्।

आ जन्मनः प्रतिमुहूर्तविशेषरम्या-
ण्याचेष्टितानि तव संप्रति तानि तानि।
चाटूनि चारुमधुराणि च संस्मृतानि
देहं दहन्ति हृदयं च विदारयन्ति॥१॥

अपि च। पुत्रि!

अनियतरुदितस्मितं विराज-
त्कतिपयकोमलदन्तकुड्मलाग्रम्।
वदनकमलकं शिशोः स्मरामि
स्खलदसमञ्जसमुग्धजल्पितं ते॥२॥

दसवाँ अंक

(तदनन्तर कामन्दकी, मदयन्तिका और लवङ्गिका प्रवेश करती हैं।)

कामन्दकी—(शोक के साथ और आँखों में आँसू भर कर) हाय बेटी मालती! मेरी गोद को अलंकृत करने वाली! तुम कहाँ हो। मुझे उत्तर तो दो।

जन्म काल से ले कर अब तक के प्रतिक्षण के वे अतीव मनोहर एवं बारम्बार पहले की अनुभूत तुम्हारी क्रीडा आदि चेष्टाएँ तथा मन को मोहने वाली और मधुर तुम्हारी प्यारी प्यारी बातें—स्मरण होने पर इस समय मेरे शरीर को जला रही है और हृदय को विदीर्ण कर रही है॥१॥

बिना किसी कारण के ही हँसने और रोने वाले, कलियों के अग्रभाग की भाँति कुछ ही कोमल (दूध को) दतुलियों से सुशोभित, अधूरे अस्पष्ट अक्षरों से युक्त असबद्ध और मनोमोहिनी वाणी से युक्त तुम्हारे शैशवकाल के कमल तुल्य मुख को मैं स्मरण कर रही हूँ॥२॥

इतरे—(सास्रम्) हा प्रियसखि, मुखपूर्णचन्द्रसुन्दरि, क्व गतासि। धन्ये शरीरस्य दैवदुर्विलसितपरिणाम एकाकिन्या उपगतः। हा महाभाग माधव, उदितमात्रनिरस्तोत्सवस्ते जीवलोकः संवृत्तः। (हा पिअसहि, मुहपुण्णचन्दसुन्दरि, कहिं गदासि। को दे सरीरस्स देव्वदुव्विलसिदपरिणामो एआइणीए उवगदो। महाभाअ माहव, उदिअत्थमिदमहूसवो दे जीअलोओ संवुत्तो)

कामन्दकी—(सविषादम्) हा वत्सौ!

> अभिनवरागरसोऽयं भवतोः कृतकौतुकः परिष्वङ्गः।
> लवलीलवङ्गयोरिव नियतिमहावात्ययाभिहतः ॥३॥

लवङ्गिका—(सोद्वेगम्) हा हा, वज्रमयहृदय, सर्वथा नृशंसमसि। (इति हृदयमाहत्य पतति) (हद्धी, वज्जमअहिअअ, सव्वहा णिसंसोसि)

मदयन्तिका—सखि लवङ्गिके, ननु भणामि क्षणमात्रमपि तावत्समाश्वसिहि। (सहि लवङ्गिए, ण भणामि खणमेत्तं वि दाव समस्सस)

लवङ्गिका—मदयन्तिके, किं करोमि। दृढवज्रलेपनिबद्धनिश्चलमिव जीवितं मां न परित्यजति। (मदअन्तिए, किं करेमि। दिढवज्जलेवपडिबद्धणिच्चलं विअ जीविदं मं ण परिच्चअदि)

अन्य दोनों—(मदयन्तिका और लवंगिका) (आँखों में आँसू भर कर) हाय प्रिय सखी! निर्मल मुख रूप चन्द्रमा से मनोहर! तुम कहाँ चली गयी हो? अकेली तुम्हारे शरीर पर दैव के किस दुर्व्यवहार का परिणाम घटित हुआ है? हाय महानुभाव माधव! इस जीव-लोक में तुम्हारा महोत्सव उदय होते ही अस्त हो गया।

कामन्दकी—(विशेष खेद के साथ) हाय बेटी मालती और वत्स माधव! सुगन्धि युक्त लवली लता और लवंग के वृक्ष के समान तुम दोनों का नूतन अनुराग रूप गुण से युक्त, देखने वालों में कुतूहल उत्पन्न करने वाला यह सम्मिलन दुर्भाग्य की झंझा (तूफान) से विनष्ट हो गया है॥३॥

लवंगिका—(उद्वेग के साथ) हे हत्यारा वज्रमय हृदय! तुम सब प्रकार से क्रूर-कठिन हो। (ऐसा कह कर छाती पीटती हुई गिर पड़ती है।)

मदयन्तिका—सखी लवंगिके! अरे। मैं तुमको कह रही हूँ कि कुछ क्षणों के लिए तो धैर्य धारण करो।

लवंगिका—मदयन्तिके! मैं क्या करूँ? सुदृढ वज्रलेप से निर्मित होने के कारण अतीव निश्चल-सा यह जीवन मुझे त्याग नहीं रहा है।

कामन्दकी—वत्से मालति, जन्मनः प्रभृति वल्लभतरा ते लवङ्गिका। तत्कि-मुज्जिहानजीविता नानुकम्पसे। इयं हि—

उज्ज्वलालोकया स्निग्धा त्वया त्यक्ता न राजते।
मलीमसमुखो वर्तिः प्रदीपशिखया यथा ॥४॥

कथं त्वं कल्याणि, कामन्दकी त्यजसि। नन्वकरुणे, मदीयचीवराञ्चलोष्मणैव ते प्रगुणितान्यङ्गानि।

स्तन्यत्यागात्प्रभृति सुमुखी दन्तपाञ्चालिकेव
क्रीडायोगं, तदनु विनयं प्रापिता वर्धिता च।
लोकश्रेष्ठे गुणवति वरे स्थापिता, त्वं मयैव
स्नेहो मातुर्मयि समधिकस्तेन युक्तस्तवापि ॥५॥

(सवैक्लव्यम्) हा चन्द्रमुखि, सम्प्रति निराशास्मि संवृत्ता।

अकारणस्मेरमनोहराननः
शिखाललाटार्पितगौरसर्षपः।

कामन्दकी—बेटी मालती! लवंगिका जन्म-काल से ही तुम्हारा अतिशय प्रेमपात्र रही है। अतः तुम्हारे वियोग से इसके प्राण कण्ठगत हो रहे हैं। तुम इस पर क्यों नहीं दया कर रही हो। क्योंकि यह तो

जिस प्रकार उज्ज्वल आलोक सम्पन्न प्रदीप की शिखा से परित्यक्त हो कर मलिनता (अंधकार) से युक्त तैलयुक्त वर्तिका (बत्ती) शोभा नहीं पाती उसी प्रकार उज्ज्वल दर्शनों वाली तुमसे परित्यक्त हो कर स्नेह युक्त तुम्हारी यह सखी लवंगिका भी मलिन मुख हो कर शोभा नहीं पा रही है॥४॥

हे कल्याणी! तुम कामन्दकी को किस प्रकार त्याग रही हो। हे निर्दये! मेरे चीवर के आंचल की गर्मी से ही तेरे अंगों की वृद्धि हुई है।

हे सुमुखी! मैंने ही हाथी के दांत से बनी पुत्तली की तरह सुन्दर मुखवाली तुम्हारा माता का दूध त्यागने से ले कर खिलाया-पिलाया है। उसके अनन्तर शास्त्र-शिल्प कला आदि की सुन्दर शिक्षा दी है और तुम्हें आगे बढ़ाया है। इसी प्रकार लोक में सुन्दर श्रेष्ठ एवं गुणी वर के हाथों में तुम्हें प्रतिष्ठापित किया है। इन कारणों से मुझमें माता से बढ़ कर जो तुम्हारा स्नेह था वह उचित ही था॥५॥

(विह्वलता के साथ) हाय चन्द्रमुखी! अब तो मैं निराश हो चुकी हूँ। बिना कारण के ही मन्द हास्य से युक्त जिसका मुख अतीव मनोहर हो उठता है,

सवाङ्गशायी परिवृत्तभाग्यया
मया न दृष्टस्तनयः स्तनन्धयः ॥६॥

लवङ्गिका—भगवति, प्रसीद। निःसहास्मि जीवितोद्वहने। साहमस्माद्गिरिप्रपातादात्मानमवपूय निर्वृत्ता भविष्यामि। तथा मे भगवत्याशिषः करोतु, येन जन्मान्तरेऽपि सार्वत्रियसखी प्रेक्षिष्ये। (भअवदि, पसीद। णिस्सहम्मि जीविदुव्वहणे। साहं इमादो गिरिप्पवादादो अत्ताणं अवघुणिअ णिव्वुत्ता भविस्सं। तह मे भअवदी आसिसं करेदु, जेण जम्मन्तरे वि साव पिअसहिं पेक्खिस्सं)

कामन्दकी—ननु लवङ्गिके, कामन्दक्यपि नानः पर वत्सावियोगेन जीविष्यति। समस्त्वायमुत्कण्ठावेग आवयो। किच—

संगमः कर्मणां भेदाद्यदि न स्यान्न नाम सः।
प्राणानां तु परित्यागे संतापोपशमः फलम् ॥७॥

लवङ्गिका—यथा यूयमाज्ञापयथ। (जह तुम्हे आणवेरय) (इत्युत्तिष्ठति)

कामन्दकी—(सदयं वीक्ष्य) वत्से मदयन्तिके!

जिसकी शिखा और ललाट-स्थल पर श्वेत सरसों बाँधी जाती है, इस प्रकार से सुन्दर, माता का स्तन पान करने वाला तथा गोद मे सोने वाला तुम्हारा एक पुत्र मैं अपने अभाग्य के कारण नही देख पाऊँगी ॥६॥

लवंगिका—भगवती! प्रसन्न हो। मैं जब (अधिक समय तक अपना) जीवन धारण करने मे असमर्थ हो रही हूँ तब ऐसी स्थिति मे मैं इस पर्वत के शिखर पर से अपने को नीचे गिरा कर इस कष्ट से छुटकारा पाना चाहती हूँ। भगवती मुझे ऐसा आशीर्वाद दे जिससे दूसरे जन्म मे भी मैं अपनी प्रिय सखी को देख सकूँ।

कामन्दकी—अरी लवंगिके! बेटी मालती के वियोग मे यह कामन्दकी भी अब इसके बाद जीवित नही रह सकेगी। हम दोनो की उत्कण्ठा का यह आवेग एक समान ही है। और भी,

अपने अदृष्ट कर्मों के फल से मालती के साथ यदि हम लोगो का समागम नही होगा तो न हो। किन्तु प्राणो का परित्याग करने पर (मालती की मृत्यु से उत्पन्न) सन्ताप की निवृत्ति तो हो ही जायगी ॥७॥

लवंगिका—आप जैसी आज्ञा देगी (वैसा ही करूँगी।) (ऐसा कह कर उठती है।)

कामन्दकी—(दयापूर्वक देख कर) बेटी मदयन्तिके!

मदयन्तिका—किमाज्ञापयथ अग्रेसरीभवेति। अवहितास्मि। (किं आणवेध। अग्गेसरीहोहि त्ति। अवहिदम्हि)

लवङ्गिका—सखि, प्रसीद। विरमैतस्मादात्मनो व्यापादनात्। मा चैनं जनं विस्मारयिष्यसि। (सहि, पसीद। विरम एत्तो अत्तणो वावादणादो। मा अ एणं जणं विसुमरेसि)

मदयन्तिका—(सकोपमिव) अपेहि। नास्मि ते वशंवदा। (अवेहि। णम्हि दे वसंवदा)

कामन्दकी—हन्त, निश्चितं वराकया।

मदयन्तिका—(स्वगतम्) नाथ मकरन्द, नमस्ते। (णाह मअरन्द, णमो दे)

लवङ्गिका—भगवति, अयमेव मधुमतीस्रोतःसंदानितपवित्रमेखलो महीधरविटङ्कः (भअवदि, अअं जेव्व माहुमदीसोत्तसंदाणिदपवित्तमेहलो महीहरविटङ्को)

कामन्दकी— कृतमिदानीं प्रस्तुतान्तरायेण।

(सर्वाः पतितुमिच्छन्ति)

(नेपथ्ये)

आश्चर्यम्!

मदयन्तिका—'आगे बढ़ो'—क्या आप ऐसी आज्ञा दे रही हैं? मैं सावधान हूँ।

लवंगिका—सखी! प्रसन्न हो। इस प्रकार आत्महत्या करने से तुम विरत हो जाओ। इस व्यक्ति को मत भुलाना।

मदयन्तिका—(कोप युक्त की भाँति) दूर हटो। मैं तुम्हारी आज्ञाकारिणी नहीं हूँ।

कामन्दकी—हाय! इस बेचारी ने भी (मरने का) निश्चय कर लिया है।

मदयन्तिका—(अपने आप) नाथ मकरन्द! नमस्ते।

लवंगिका—भगवती! मधुमती नदी के प्रवाह से युक्त पवित्र मध्यभागवाला पर्वत का ऊँचा टीला यहाँ है।

कामन्दकी—अब प्रस्तुत विषय में विघ्न डालने की आवश्यकता नहीं है।

(सब लोग (टीले से) नीचे गिरना चाहते हैं।)

(नेपथ्य में)

व्यतिकर इव भीमस्तामसो वैद्युतश्च
क्षणमुपहतचक्षुर्वृत्तिरुद्भूय शान्तः।

कामन्दकी—(विलोक्य सादभुतहर्षम्)
कथमिह मम वत्सस्तत्किमेतत्—
मकरन्दः—(प्रविश्य)

—किमन्य-
त्प्रभवति हि महिम्ना स्वेन योगीश्वरीयम् ॥८॥

(नेपथ्ये)

कथमतिदारुणो जनावमर्दः संप्रवर्तते।

मालत्यपायमधिगम्य विरक्तचेताः
सांसारिकेषु विषयेषु च जीविते च।
निश्चित्य वह्निपतनाय सुवर्णबिन्दु-
मभ्येति भूरिवसुरित्यधुना हताः स्मः ॥९॥

मदयन्तिकालवङ्गिके—झटिति मालतीमाधवयोर्दर्शनाभ्युदयो झटिय-त्याहितं च। (झत्ति मालदीमाहवाणं दंसणब्भुदओ झत्ति अच्चाहिदं अ)

आश्चर्य की बात है, अन्धकार और बिजली के सम्मिलन की भांति कोई यह विशेष तेज कुछ क्षणों तक नेत्रों को उनके दर्शनीय विषयों से दूर हटा कर चमक कर लुप्त हो गया है।

कामन्दकी—(देख कर हर्ष पूर्वक) अरे! यह क्या। यहाँ पर मेरा बेटा (मकरन्द) कैसे आ गया। और यह तेज क्या वस्तु है?

मकरन्द—(प्रवेश कर के) कोई दूसरी वस्तु नहीं है। यह योगेश्वरी जी अपनी महिमा और प्रभाव को प्रकट कर रही हैं।

(नेपथ्य में)

अरे! यह अतीव भयंकर लोगों की भीड़-भाड़ है।

यह भूरिवसु जी मालती के विनाश का वृत्तान्त जान कर सांसारिक विषयों और जीवन के प्रति विरक्त चित्त हो कर अग्नि में कूदने का निश्चय कर शिवालय के सम्मुख आ रहे हैं, इसी कारण हम लोग इस समय मरे जा रहे हैं ॥९॥

मदयन्तिका और लवंगिका—अकस्मात् झट से मालती और माधव के दर्शन का महोत्सव और झट से अकस्मात् यह महती आपत्ति।

कामन्दकीमकरन्दौ—दिष्ट्या । कष्टं भोः ! आश्चर्यम् ।

किमयमसिपत्रचन्दनरसाच्छटासारयुगपदवपातः ।
अनलस्फुलिङ्गकलितः किमयमनभ्रः सुधावर्षः ॥१०॥
संजीवनौषधिविषव्यतिकरमालोकतिमिरसंभेदम् ।
अद्य विधिरशनिशशधरमयूखसंवलनमनुकुरुते ॥११॥

(नेपथ्ये)

हा तात, विरम ! उत्सुकास्मि ते वदनकमलदर्शनस्य । प्रसीद । संभावय माम् । कथं मम कारणात्समस्तलोकालोकान्तरालविष्कम्भनिर्मलैकमङ्गलप्रदीपभूतमात्मानं परित्यजसि । मया पुनरलज्जया निरनुक्रोशया यूयं परित्यक्ताः । (हा ताद, विरम । ऊसुअम्हि दे वअणकमलदंसणस्स । पसीद । संभावेहि मं । कहं मम कारणादो समत्थलोआलोअन्तरालविक्खम्भणिम्मलेक्कमङ्गलप्पदीवभूदं अत्ताणं परिच्चअसि । मए उण अलज्जाए णिरणुक्कोसाए तुम्हे परिच्चत्ता)

कामन्दकी—हा वत्से मालति !

जन्मान्तरादिव पुनः कथमपि लब्धासि यावदयमपरः ।
उपराग इव शशिकलां कवलयितुमुपस्थितोऽनर्थः ॥१२॥

कामन्दकी और मकरन्द—यह भाग्य की बात है। कष्ट है। आश्चर्य है।

यह तलवार की धारा और चन्दन रस की धारावाही वृष्टि एक ही साथ क्यों हो रही है। यह अग्नि के स्फुलिंगों की और मेघ रहित अमृत की वृष्टि एक साथ कैसे हो रही है ? विधाता आज संजीवनी बूटी और हलाहल विष का सम्मिश्रण, प्रकाश और अन्धकार का समागम एवं चन्द्र किरणों के साथ वज्र का सम्मेलन—ऐसी परस्पर विरोधी वस्तुओं के सम्मिलन का जैसे अनुकरण कर रहे हैं ॥१०-११॥

(नेपथ्य मे) हाय पिता जी। ऐसा न करें। मैं आपके मुख-कमल का दर्शन करने के लिए उत्कण्ठित हूँ। प्रसन्न हो। मुझे सम्मानित करें। मेरे लिए क्यो आप इस सम्पूर्ण लोकालोक पर्वत के विस्तार मे निर्मल एव एकमात्र मगल प्रदीप के समान प्रकाशमान अपने शरीर को त्यागने जा रहे हैं। निर्दयी और निर्लज्ज मैंने आपको त्याग दिया।

कामन्दकी—हाय बेटी मालती !

जैसे दूसरे जन्म मे मैंने किसी प्रकार तुम्हे प्राप्त किया है, किन्तु इस समय तो यह दूसरा अनिष्टकारी प्रसग वैसे ही। तुम्हे ग्रास बनाने के लिए उपस्थित हो गया है जैसे राहु चन्द्रकला को ॥१२॥

इतरे—हा प्रियसखि! (हा पिअसहि!)

(ततः प्रविशति मुग्धा मालतीं धारयन्माधवः)

माधवः—कष्टं भोः।

एषा प्रवासं कथमप्यतीत्य
याता पुनः संशयमन्यथैव।
को नाम पाकाभिमुखस्य जन्तो-
र्द्वाराणि दैवस्य पिधातुमीष्टे॥१३॥

मकरन्दः—सखे, अथ क्व सा योगिनी।

माधवः—

श्रीपर्वतादिहाहं सत्वरमपतं तयैव सह सद्यः।
करुणवनेचरवचनादन्तरितां तां न पश्यामि॥१४॥

कामन्दकीमकरन्दौ—महाभागे, पुनः परित्रायस्व नः। किमर्थमन्तर्हितासि।

मदयन्तिकालवङ्गिके—सखि मालति, ननु भणामि सखि मालतीति। भगवति, परित्रायस्व। चिरनिरुद्धनिश्वासनिश्चलमस्या हृदयम्। हा अमात्य, हा प्रियसखि, युवां द्वावपि परस्परावसानस्य कारणं जातौ। (सहि मालदि! णं भणामि सहि

दोनों—(मदयन्तिका और लवंगिका) हाय प्रिय सखी!

(तदनन्तर मूर्च्छित माधवी को ले कर माधव प्रवेश करता है।)

माधव—अरे कष्ट है।

यह मालती किसी प्रकार इस परदेश-वास को बिता कर अब फिर दूसरी बार जीवन-संशय की स्थिति को प्राप्त हो गयी है। कौन व्यक्ति है जो प्राणियों को कर्म फल देने के लिए तैयार भाग्य के द्वारों को अवरुद्ध करने में समर्थ हो सकता है॥१३॥

मकरन्द—मित्र! वह योगिनी जी कहाँ हैं?

माधव—मैं तो उन्हीं योगिनी जी के साथ तुरन्त ही श्री पर्वत से उड़ कर झट से यहाँ उतरा हूँ, किन्तु उसी क्षण जंगली व्यक्ति की करुण आवाज पर अन्तर्धान होने वाली उनको नहीं देख रहा हूँ॥१४॥

कामन्दकी और मकरन्द—महाभागे! पुनः हम लोगों की रक्षा करें। आप क्यों अन्तर्धान हो गयी हैं?

मदयन्तिका और लवंगिका—सखी मालती! अरे मैं कह रही हूँ सखी मालती! (कांपती हुई) भगवती! रक्षा करें। बहुत समय से इनकी साँसें रुकी हुई हैं, हृदय

मालदि त्ति। (सोत्कम्पम्) भअवदि! परित्ताहि। चिरणिरुद्धणिस्सासणिच्चलं से हिअअं। हा अमच्च, हा पिअसहि, तुम्हे दुवे वि परप्परावसाणस्स कारणं जादा)

कामन्दकी—हा वत्से मालति!

माधवः—हा प्रिये मालति!

मकरन्दः—हा प्रियसखि!

(सर्वे मोहमुपगम्य पुनः संज्ञां लभन्ते)

कामन्दकी—तत्किमेष झटिति पाट्यमानादिवाम्बुदादम्बुनिवहः परिस्खलन्नस्मान्प्रीणयति।

माधवः—(सोच्छ्वासम्) अये, प्रत्यापन्नचेतनेव मालती। तथाह्यस्याः—

भवति विततश्वासोन्नाहप्रणुन्नपयोधरं
हृदयमपि च स्निग्धं चक्षुर्निजप्रकृतौ स्थितम्।
तदनु वदनं मूर्च्छाच्छेदात्प्रसादि विराजते
परिगतमिव प्रारम्भेऽह्नः श्रिया सरसीरुहम्॥१५॥

निश्चल है। हाय अमात्य! हाय प्रियसखी! तुम दोनों ही एक दूसरे की मृत्यु के कारण बन गये हो।

कामन्दकी—हाय बेटी मालती!

माधव—हाय प्रिया मालती!

मकरन्द—हाय प्रिय सखी!

(सब लोग मूर्च्छित होते हैं और पुनः होश में आते हैं।)

कामन्दकी—यह क्या है, जो आकाश मे विद्यमान बादलों को चीरते हुए नीचे गिरी जल धारा की भांति हम लोगों को जीवन दान कर रही है।

माधव—(गहरी सांस बाहर निकालते हुए) अरे मालती चैतन्य लाभ कर रही है—ऐसा लग रहा है। क्योंकि इसका—

हृदय बाहरी सांसें लेने के कारण कांपते हुए स्तनयुगलों से युक्त है, नेत्र स्निग्ध एवं प्रकृतिस्थ हैं, तदनन्तर प्रातःकाल मे शोभा व्याप्त कमल के समान, मूर्च्छा दूर हो जाने से सुप्रसन्न भावों से युक्त मुख सुशोभित हो रहा है॥१५॥

(नेपथ्ये)

अविगणय्य नृपं सहनन्दनं चरणयोर्नतमग्निचये पतन् ।
सपदि भूरिवसुर्विनिवर्तितो मम गिरा गुरुसंमदविस्मयः ॥१६॥

माधवमकरन्दौ—भगवति, दिष्ट्या वर्धसे।

सा योगिनीयमतिरयविघटितजलदाम्पुपैति नौ यस्याः ।
वागमृतजलासारो जलदजलासारमतिशेते ॥१७॥

कामन्दकी—प्रियं नः।

मालती—दिष्ट्या चिरस्य प्रत्युज्जीवितास्मि। (दिट्ठिआ चिरस्स पच्चुज्जीविदम्हि)

कामन्दकी—(सहर्षबाष्पम्) एह्येहि पुत्रि !

मालती—हा कथं भगवती। (हा कहं भअवदी) (इति पादयोर्निपतति)

कामन्दकी—(उत्थाप्यालिङ्ग्य मूर्ध्न्युपाघ्राय)

जीव, जीवितसमाय जीवितं
देहि, जीवतु सुहृज्जनश्च ते।

(नेपथ्य में) अपने चरणों में अवनत नन्दन के साथ राजा की कोई परवाह न कर के अमात्य भूरिवसु अग्नि ज्वाला में प्रवेश करने जा रहे थे कि उसी क्षण मेरी वाणी से महान् हर्ष और आश्चर्य से युक्त हो कर निवारित कर दिए गए हैं ॥१६॥

माधव और मकरन्द—भगवती सौभाग्य की बात है। बधाई है।

पहले देखी गयी वह योगिनी अतीव वेग से मेघों को विदीर्ण करती हुई हम दोनों के सामने ही आ रही हैं, उनके वचनामृत की धारा-वृष्टि मेघों की धारा-वृष्टि का अतिक्रमण कर रही है ॥१७॥

कामन्दकी—यह हमारा अभीष्ट सिद्ध हुआ।

मालती—सौभाग्य से चिरकाल के बाद मैं जीवित हुई हूँ।

कामन्दकी—(हर्ष के साथ आसू बहाते हुए) पुत्री ! आओ। आओ।

मालती—हाय ! किस प्रकार भगवती यहाँ उपस्थित हैं। (ऐसा कह कर पैरों पर गिरती है।)

कामन्दकी—(उठा कर आलिंगन कर और मस्तक सूँघ कर)

हे बेटी ! तुम जीवित हो। अपने जीवन के समान प्रिय माधव को जीवन दो,

अङ्गकैस्तुहिनसङ्गशीतलैः
पुत्रि ! मां प्रियसखीं च जीवय ॥१८॥

माधवः—वयस्य मकरन्द, संप्रत्युपादेयो माधवस्य जीवलोकः संवृत्तः।

मकरन्दः—(सहर्षम्) एवमेवैतत्।

इतरे—प्रियसखि, मनोरथातिक्रान्तदर्शने संभावयास्मान्परिष्वङ्गेण। (पिअसहि, मणोरहातिक्कान्तदंसणे, संभावेहि अम्हे परिस्सङ्गेण)

मालती—हा प्रियसख्यौ। (हा पिअसहिओ) (इत्युभे आलिङ्गतः)

कामन्दकी—वत्सौ, किमेतत्।

माधवमकरन्दौ—भगवति।

कपालकुण्डलाकोपदुर्जातजनितापदः।
वयमभ्युद्धृताः कृच्छ्रान्निर्बन्धादार्ययानया ॥१९॥

कामन्दकी—कथमघोरघण्टवधविजृम्भितमेतत्।

लवङ्गिकामदयन्तिके—अहो आश्चर्यम्। पुनरुक्तदारुणस्य परिणामरमणीयत्वं विधेः। (अहो अच्चरिअं। पुणरुत्तदारुणस्स परिणामरमणिज्जत्तणं विहिणो)

और तुम्हारी सखियाँ भी जीवित हों, हिम-सम्पर्क से शीतल के समान अपने अंगों से मुझे और अपनी प्रिय सखी (लवंगिका) को भी जीवित करो ॥१७॥

माधव—मित्र मकरन्द ! अब माधव के लिए यह मनुष्य लोक ग्राह्य बन गया है।

मकरन्द—(सहर्ष) यह ठीक ही बात है।

दोनों—(मदयन्तिका और लवंगिका) हे प्रियसखी ! तुम्हारे दर्शन की अभिलाषा भी इच्छा का अतिक्रमण कर चुकी थी। आओ आलिंगन दे कर हमें सम्मानित तो करो।

मालती—हाय प्यारी सखियाँ ! (ऐसा कह कर दोनों आलिंगन करती हैं।)

कामन्दकी—माधव एवं मकरन्द ! यह क्या है ?

माधव और मकरन्द—भगवती ! इन्हीं आर्या के द्वारा कपालकुण्डला के क्रोध से उत्पन्न विपत्ति से हम लोग अतीव कष्ट के बाद उबारे गये हैं ॥१९॥

कामंदकी—यह अघोरघण्ट के वध का परिणाम रहा है।

लवंगिका और मदयन्तिका—अहो आश्चर्य की बात है। द्विगुणित रूप से अत्यन्त भयकर दैव का यह व्यवहार परिणाम में इतना मनोहर हो गया।

सौदामिनी—(प्रविश्य) भगवति, स एव चिरतनोन्तेवासी जन प्रणमति।

कामन्दकी—अये, भद्रम्। सौदामिनी ?

माधवमकरन्दौ—कथमिय सा भगवत्या पक्षपातस्थानमाद्यशिष्या सौदामिनी। यत सर्वमधुना सगच्छते।

कामन्दकी—

एह्येहि भूरिवसुजीवितदानपुण्य-
संभारधारिणि! चिरादसि हन्त दृष्टा।
दत्तप्रमोदमभिनन्दय मे शरीर-
मालिङ्गय सौहृदनिधे! विरम प्रणामात् ॥२०॥

अपि च—

वन्द्या त्वमेव जगतः स्पृहणीयसिद्धि-
रेवंविधैर्विलसितैरतिबोधिसत्त्वैः।
यस्याः पुरा परिचयप्रतिबद्धबीज-
मुद्भूतभूरिफलशालि विजृम्भितेन ॥२१॥

मदयन्तिकालवङ्गिके—इय सार्या सौदामिनी। (इअं सा अज्जा सोदामिणी)

सौदामिनी—(प्रवेश कर के) भगवती! आपकी यह पुरानी शिष्या आपको प्रणाम कर रही है।

कामन्दकी—अरे! बहुत सुन्दर। सौदामिनी है क्या ?

माधव और मकरन्द—यह भगवती कामन्दकी की स्नेह पात्र सौदामिनी किस प्रकार पहले की शिष्या रही है। तभी तो अब सभी बाते अनुकूलतापूर्वक सपन्न हुई हैं।

कामन्दकी—हे भूरिवसु को जीवनदान कर के प्रचुर पुण्य सचय करने वाली सौदामिनी! आओ। बड़ी प्रसन्नता की बात है। तुम बहुत दिनो बाद देखी गयी हो। हर्ष से भरे हुए मेरे शरीर को आलिगन प्रदान कर आनन्दित करो। हे सौहार्द की आगार! प्रणाम से विरत हो ॥२०॥

और भी, तुम्हारे यह सब व्यवहार भगवान बोधिसत्व (बुद्धदेव) के व्यवहारों को भी अतिक्रमण करने वाले हैं, तुम्हारी यह सिद्धि सब के लिए स्पृहणीय है। तुम ही लोक द्वारा वन्दनीया हो। तुम्हारे ऐसे उपकारी व्यवहारो से पूर्व काल में परिचय-रूप जो बीज था, वह उत्पन्न हुए प्रचुर फलो से सुशोभित हो गया है ॥२१॥

मदयन्तिका और लवंगिका—यह वही आर्या सौदामिनी है।

मालती—बाढम्। अनया खलु भगवतीसंबन्धपक्षपातिन्या निर्भर्त्स्य कपाल-कुण्डलामस्मिन् आवसथमुपनीयाश्वासितास्मि। किं च केसरावलीसाभिज्ञानहस्त-येहागत्य सर्वे यूयं संधारिताः। (बाढम्। इमाए क्खु भअवदीसंबन्धपक्खवादिणीए णिब्भच्छिअ कवालकुण्डलं अत्तणो आवसहं उवणीअ आसासिदम्हि। किं अ केसरावलीसाभिण्णाणहत्थाए इह आअदुअ सव्वे तुम्हे संधारिदा)

इतराः—सुप्रसन्ना नः कनिष्ठा भगवती। (सुप्पसण्णा णो कणिट्ठा भअवदी)

मकरन्दमाधवौ—अहो नु खलु भोः!

अपि चिन्तामणिश्चिन्तापरिश्रममपेक्षते।
इदं त्वचिन्तितं मन्ये कृतमाश्चर्यमार्यया॥२२॥

मालती—बहुत अच्छा। भगवती कामन्दकी के सम्बन्ध के कारण हमारे ऊपर स्नेह भाव रख कर इन्होंने कपालकुण्डला की भर्त्सना कर मुझे अपने आश्रम में ला कर आश्वासन दिया। और भी, उस मौलसिरी की माला को मेरे चिह्न के रूप में अपने हाथ से यहाँ ला कर इन्होंने आप लोगों की रक्षा की है।

अन्य स्त्रियाँ—यह छोटी भगवती हम पर प्रसन्न है।

मकरन्द और माधव—अरे! यह आश्चर्य की बात है।

चिन्तामणि भी चिन्ता रूप परिश्रम की अपेक्षा करती है, किन्तु आर्या ने तो बिना सोच विचार के ही यह कार्य सफल किया है, मैं तो यही मानता हूँ कि यह आश्चर्य की बात है।

सौदामिनी—(अपने आप) अहा! इन सब लोगों की यह अतीव सज्जनता मुझे लज्जित कर रही है। (प्रकट रूप से) भगवती! सुप्रसन्न नन्दन से प्रशासित पद्मावती नरेश ने अमात्य भूरिवसु के समक्ष ही यह पत्र लिख कर आयुष्मान् माधव के पास भेजा है। (पत्र देती है।)

कामन्दकी—(पत्र ले कर पढ़ती है।) तुम लोगों का कल्याण हो। हमारे महाप्रभु आज्ञा करते हैं कि—

प्रशंसनीय गुणी जनों के अग्रभाग में विद्यमान, उत्तम कुलोत्पन्न, विपदा को दूर भगाने वाले एवं अतीव महिमा मण्डित जामाता के रूप में आप पर मैं परम प्रसन्न हूँ। इसी कारण से मैं भी आपकी प्रसन्नता के लिए तुम्हारे प्रिय सुहृद (मकरन्द) के लिए पूर्णानुराग से अनुरक्त इस मदयन्तिका को भी प्रदान कर रहा हूँ॥२२॥

सौदामिनी—(स्वगतम्) हन्त, लज्जयति मामत्यन्तसौजन्यमेतेषाम्। (प्रकाशम्) भगवति, एतत्प्रहृष्टनन्दनाभिनन्दितेन राज्ञा पद्मावतीश्वरेण भूरिवसोः प्रत्यक्षमभिलिख्य पत्रमायुष्मतो माधवस्य प्रेषितम्। (लेख्यमर्पयति)

कामन्दकी—(गृहीत्वा वाचयति) स्वस्त्यस्तु व.। परमेश्वरः समाज्ञापयति यथा—

श्लाघ्यानां गुणिनां धुरि स्थितवति श्रेष्ठान्ववाये त्वयि
प्रत्यस्तव्यसने महीयसि परं प्रीतोऽस्मि जामातरि।
तेनेयं मदयन्तिकापि भवतः प्रीत्यै तव प्रेयसे
मित्राय प्रथमानुरागघटिताप्यस्माभिरुत्सृज्यते॥२३॥

(माधवमुद्दिश्य सहर्षम्) वत्स, श्रूयताम्।

माधवः—श्रुतम्। इदानीं सर्वथा कृतार्थोऽस्मि।

मालती—दिष्ट्या एतदपि तावदपगतं हृदयस्य शङ्काशल्यम्। (दिट्ठिआ एदं वि दाव अवगदं हिअअस्स सङ्कासल्लं)

लवङ्गिका—साम्प्रतं निरवशेषं पूरिता श्रीमाधवस्य मनोरथाः। (संपदं णिरवसेसं पूरिआ माहवसिरिणो मणोरहा)

मकरन्दः—(पुरोऽवलोक्य) कथमवलोकिताबुद्धरक्षिते कलहंसश्च दूरतः समागतानस्मान्वीक्ष्य तत्रैव हर्षनिर्भरं नृत्यन्त इत एवागच्छन्ति।

(ततः प्रविशन्त्यवलोकिताबुद्धरक्षिते कलहंसश्च)

ते—(विविधं नृत्यं कृत्वा सर्वे उपसृत्य सप्रणामं कामन्दकीं प्रति) जय भगवति! कार्यनिधाने! (माधवं प्रति) जय मकरन्दनन्दन! माधव! पूर्णचन्द्र! दिष्ट्या

(माधव की ओर संकेत कर सहर्ष) बेटा! सुनो।

माधव—सुन लिया। अब तो मैं सब प्रकार से कृतार्थ हो गया हूँ।

मालती—सौभाग्य से यह भी हृदय में चुभने वाला शंका रूप शल्य दूर हो गया।

लवंगिका—अब तो श्रीमान् माधव की सभी अभिलाषाएँ पूरी हो गयीं।

मकरन्द—(सामने की ओर देख कर) अवलोकिता, बुद्धरक्षिता और कलहंस—ये सब दूर से आते हुए हम लोगों को देख कर वहीं से आनन्द-विभोर हो कर नाचते-कूदते इसी ओर चले आ रहे हैं।

(तदनन्तर अवलोकिता, बुद्धरक्षिता और कलहंस प्रवेश करते हैं।)

वे सब—(अनेक प्रकार का नृत्य कर के सभी लोग समीप आ कर प्रणामपूर्वक कामन्दकी से) हे भगवती! हे कार्य को सम्पन्न करने वाली! आपकी जय हो।

वर्धसे। (जअ भअवदि कज्जणिहाणे! जअ मअरन्दणन्दण माहव पुण्णचन्द, दिट्ठिआ वड्ढसि)

(सर्वे सस्मितं पश्यन्ति)

लवङ्गिका—त्वदीयकार्यमपि चैतस्मिन्संपूर्णम्। अतः सर्वप्रकारमहोत्सवे नृत्यति। (तदीअकज्जं वि अ एतस्सिं संपूरिदम्। अदो सव्वप्पआरमहूसवे णच्चइ)

कामन्दकी—एवमेतत्। अस्ति वा कुतश्चिदेवम्भूतं महाद्भुतं विचित्ररमणीयोज्ज्वलं प्रकरणम्?

सौदामिनी—इदमत्र रामणीयकं यदमात्यभूरिवसुदेवरातयोश्चिरात्संपूर्णोऽयमितरेतरापत्यसंबन्धरूपो मनोरथः।

मालती—(स्वगतम्) तत्कथमिव। (तं कहं विअ)

मकरन्दमाधवौ—(सकौतुकम्) भगवति, अन्यथा वस्तु प्रवृत्तम्, अन्यथा वचनपर्यायः।

लवङ्गिका—(जनान्तिकम्) भगवति, किं प्रतिपत्तव्यम्। (भअवदि, किं पडिवज्जिदव्वं)

(माधव से) हे मकरन्द को आनन्दित करने वाले! माधव! पूर्ण चन्द्रमा के समान आनन्ददायी! तुम्हें बधाई है।

(सभी लोग मुस्कराते हुए देखते हैं।)

लवंगिका—माधव के साथ मकरन्द का मनोरथ भी सफल हो गया। अतएव सब प्रकार से महोत्सव है और यह बन्धुवर्ग नाचता है।

कामन्दकी—ऐसा ही हो। कहीं पर इस प्रकार का महान विस्मयों से भरा हुआ विचित्र किन्तु मनोहर और परिणाम में उज्ज्वल प्रसंग है क्या?

सौदामिनी—इसमें यह सुन्दरता भी है कि अमात्य भूरिवसु और देवरात की सन्तानों का एक दूसरे से सम्बन्ध हो जो यह चिरकाल की अभिलाषा थी वह भी पूरी हो गयी।

मालती—(अपने आप) यह कैसी बात है?

मकरन्द और माधव—(कौतूहल के साथ) भगवती! घटना ही किसी अन्य प्रकार से घटित हुई और भगवती सौदामिनी की बात कुछ अन्य प्रकार की है।

लवंगिका—(केवल कामन्दकी को सुना कर) भगवती! अब क्या उत्तर देना चाहिए।

कामन्दकी—(स्वगतम्) सम्प्रति मदयन्तिकासंबन्धेन नन्दनावग्रहाप्रत्ययस्तः शङ्का. खलु वयम्। (प्रकाशम्) वत्सौ, न खल्वन्यथा वस्तु प्रवृत्तम्, अन्यथा वचनमस्या.। यत. श्रावकावस्थायामस्मत्सौदामिनीसमक्षं तयो. प्रवृत्तेय प्रतिज्ञावाम्यामपत्यसबन्ध. कर्तव्य इति। प्रधानप्रकृतिकोपस्त्वेव परिहृतः।

मालती—अहो सवरणम्। (अहो संवरणम्)

मकरन्दमाधवौ—(साश्चर्यम्) जयन्ति खलु महतां। विसवादिन्यः प्रत्यायिन्यः कल्याणा नीतय।

कामन्दकी—वत्स,

यत्प्रागेव मनोरथैर्वृतमभूत्कल्याणमायुष्मतो-
स्तत्पुण्यैर्मदुपक्रमैश्च फलितं क्लेशैश्च मच्छिष्ययोः।
निष्णातश्च समागमोऽपि विहितस्त्वत्प्रेयसः कान्तया
संप्रीतौ नृपनन्दनौ यदपरं प्रेयस्तदप्युच्यताम् ॥२४॥

कामन्दकी—(अपने आप) मदयन्तिका के साथ (मकरन्द के) विवाह-सबंध की बात हो जाने से इस समय हम लोग नन्दन की ओर से आने वाली आशका से निश्चिन्त है। (प्रकट रूप मे) वत्स माधव एव मकरन्द! इनकी बात कुछ दूसरे प्रकार की नही है और न घटना कुछ दूसरे प्रकार से घटित हुई है। छात्रावस्था में हमारे और सौदामिनी के सामने अमात्य भूरिवसु और देवरात ने यह प्रतिज्ञा की थी कि—हमारी सन्तानों का पारस्परिक सम्बन्ध होगा। इसलिए यह प्रकार (चोरी चोरी जो तुम लोगों का विवाह हुआ है वह) राजाके क्रोध को दूर करने के लिए था और वह दूर भी हो चुका।

मालती—कितनी आश्चर्यजनक गोपनीयता थी।

मकरन्द और माधव—(आश्चर्य के साथ) महान पुरुषो की वे नीतियाँ जयशील हो जो देखने में परस्पर विरोधी होते हुए भी विश्वासजनक तथा अन्त मे कल्याणकारिणी होती हैं।

कामन्दकी—वत्स! पहले की अभिलाषाओं से तुम दोनों चिरजीवियों (मालती और माधव) का जो विवाह-मगल आकाक्षित था वह तुम दोनों के पुण्यो से, मेरे प्रयत्नों से और मेरी शिष्याओं (सौदामिनी और अवलोकिता) के कष्ट-सहन से सम्पन्न हुआ। तुम्हारे सुहृद मकरन्द का भी उनकी प्रियतमा (मदयन्तिका) के साथ कौशलपूर्ण वैवाहिक सम्बन्ध भी सम्पन्न हो गया। राजा और नन्दन भी प्रसन्न हो गए हैं। अतः यदि कोई दूसरा प्रिय विषय हो तो उसे भी बताओ ॥२४॥

माधवः—(सहर्षम्) अतः परं मम प्रियमस्ति ? तथापीदमस्तु भरत-वाक्यम्—

शिवमस्तु सर्वजगतां परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः।
दोषाः प्रयान्तु शान्तिं, सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥२५॥

कामन्दकी—एवमस्तु।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

इति महाकविश्रीभवभूतिविरचिते मालतीमाधवे दशमोऽङ्कः।

माधव—(सहर्ष) इससे बढ़ कर भी क्या कोई मेरा प्रिय विषय है ? फिर भी यह भरत वाक्य पूरा हो—

सभी लोकों का कल्याण हो, जगत् के प्राणि-वृन्द एक दूसरे के कल्याण में प्रवृत्त हों। दोष शान्त हों और लोग सर्वत्र सुखी हों ॥२५॥

कामन्दकी—ऐसा ही हो।

(ऐसा कहने के बाद सभी लोग जाते हैं।)

महाकवि श्री भवभूतिरचित मालतीमाधव नाटक में सम्मेलन नामक दसवाँ अंक समाप्त।